भारतीय मज़दूर

लेखक

शंकरसहाय सक्सेना एम्. ए., एम. काम.,
अर्थशास्त्र प्रोफेसर बरेली कॉलेज, बरेली
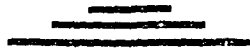
रचयिता
भारतीय सहकारिता आन्दोलन, गावों की समस्याएँ,
कार्ल मार्क्स के आर्थिक सिद्धान्त, पूर्व की राष्ट्रीय
जागृति, भारतीय ग्राम अर्थशास्त्र इत्यादि ।

प्रकाशक:-
नवयुग साहित्य-सदन

प्रकाशक
गोकुलदास धूत
नवयुग-साहित्य-सदन
इन्दौर

प्रथम संस्करण
१९४८

मुद्रक
सी० एम० शाह
मॉडन प्रिंटरी लिमिटेड,
इन्दौर

आचार्य श्री नरेन्द्र देव

को

" जिनकी

वाणी मे समाज के

शोषित अंग की आशा निहित है,

प्रति क्षण देश के लिए ही जीवित रहते है,

और जिनके महान व्यक्तित्व ने

लेखक को प्रभावित

किया है।"

सादर समर्पित

निवेदन.

१५ अगस्त १९४७ को भारतवर्ष ने शताब्दियो के उपरान्त अपनी चिरपोषित अभिलाषा स्वतन्त्रता को प्राप्त किया है। ऐसी दशा में देश की आर्थिक उन्नति के सम्बन्ध मे देशवासी गम्भीरतापूर्वक सोचने लगे यह स्वाभाविक ही है। गत युद्ध की विभीषिका ने औद्योगिक उन्नति की आवश्यकता को और भी नग्नरूप मे हमारे देश के सामने उपस्थित कर दिया है। यही कारण है कि भिन्न-भिन्न विचार के लोग अपनी आर्थिक योजनाओं को लेकर देश के सामने उपस्थित हुए है। परन्तु औद्योगिक उन्नति और धन्धों में काम करने वाले मज़दूरों की समस्या का घनिष्ट सम्बन्ध है, अतएव हम मजदूरों के प्रश्न की अवहेलना नहीं कर सकते।

हिन्दी में अर्थशास्त्र संबंधी साहित्य इतना कम है कि उसके लिए हम हिंदी प्रेमियों को लज्जित होना चाहिए। परन्तु जहां अन्य आर्थिक समस्याओं पर हिन्दी मे एक दो ग्रन्थ है, वहां मजदूरों के सम्बन्ध में एक पुस्तक का भी न होना लेखक को बहुत खटकता था। कई बार मज़दूरों की समस्याओं को लेकर एक पुस्तक लिखने की बात मन में उठी और विलीन हो गई। और पुस्तको के लिखने में फंसे रहने के कारण तथा पिछले वर्षों से कॉलेज का कार्य-भार बढ जाने के कारण मैं इस पुस्तक को न लिख सका। १९४५ के जून मास मे जब मैं अपने आदरणीय मित्र प्रो. दयाशंकर दुबे और श्री. भगवानदास केला से मिलने प्रयाग गया तो वहां इस सम्बन्ध में फिर चर्चा चली और मैंने पुस्तक लिखने का दृढ निश्चय कर लिया।

यद्यपि मैंने "भारतीय मजदूरों" पर ही पुस्तक लिखी है, किन्तु जहां-जहां मजदूरों के प्रश्नों का सैद्धांतिक विवेचन किया गया है, वहां मैंने अन्य देशों के बारे मे भी सकेत किया है। कुछ समस्याओं के हल करने में हमें विदेशों के उदाहरणों से सहायता मिल सकती है।

अस्तु, मैंने उन समस्याओं पर लिखते समय विदेशो मे होने वाली हलचलों की भी चर्चा की है।

आज हमारे बहुत से राष्ट्रीय कार्यकर्त्ता मजदूरो में भी काम करते है और उन्हे मजदूरों की समस्याओ पर साहित्य पढने की आवश्यकता होती है। अंग्रेजी मे तो इस विषय पर ढेरों साहित्य है परन्तु जो कार्यकर्त्ता अंग्रेजी नही जानते या कम जानते है, वे हिन्दी में इस विषय पर कोई पुस्तक न होने के कारण बहुत-सी आवश्यक बातों से अनभिज्ञ रहते है। यहां तक कि मजदूरों सम्बन्धी कानून भी अग्रेजी में प्रकाशित होने के कारण साधारण कार्यकर्त्ता तथा स्वय मजदूरों के लिये व्यर्थ रहते है। उन्हे इन कानूनो की जानकारी नही होती, इस कारण वे उनसे पूरा लाभ भी नहीं उठा पाते। इसी कारण पुस्तक मे सारे मजदूरो से सम्बन्धित कानूनों की मुख्य बातों को लिख दिया गया है।

संक्षेप मे मैंने पुस्तक लिखते समय इस बात का ध्यान रक्खा है कि पुस्तक में सभी आवश्यक बातो का समावेश कर दिया जावे जिससे वह भारत की आर्थिक समस्याओ के अनुशीलन करने वालो, राजनैतिक कार्यकर्त्ता, मजदूरों के शुभचिन्तको और स्वय मजदूरो के लिये उपयोगी हो। पुस्तक कैसी है इसका निर्णय तो विज्ञ पाठक ही कर सकते है। मैंने तो पुस्तक लिख कर अपना कर्तव्य-पालन कर दिया।

अन्त मे मैं आचार्य नरेन्द्र देव के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रगट किये बिना नहीं रह सकता। उन्होने मुझे इस पुस्तक के लिखने के लिये बहुत प्रोत्साहित किया और बराबर वे मुझे पुस्तक को शीघ्र लिख देने का आग्रह करते रहे। उनके इस गम्भीर आग्रह ने ही मुझे इस पुस्तक को शीघ्र समाप्त करने के लिए प्रेरित किया है।

बरेली
४ मई ४८

शंकरसहाय सक्सेना

विषय सूची

भारतीय मजदूर

प्रथम परिच्छेद

पूर्व कथन

अठारहवी शताब्दी के अन्त तक भारतवर्ष केवल अपनी जनसख्या के लिए ही तैयार माल उत्पन्न नही करता था, वरन् विदेशों को भी अपना तैयार माल भेजता था। उन्नीसवी शताब्दी के आरम्भ होते ही भारतीय उद्योग-धन्धो का पतन आरम्भ हो गया। क्रमश: भारतवर्ष विदेशों विशेष कर ब्रिटेन से तैयार माल मॅगाने लगा और कच्चा माल तथा अनाज विदेशों को भेजने लगा। यह सब इस कारण हुआ कि भारत परतंत्र होगया। ईस्ट इण्डिया कंपनी की घातक नीति ने भारतीय धन्धो को नष्ट करने मे सहायता पहुँचाई। इधर ब्रिटेन मे भाप तथा यंत्रो के आविष्कार से औद्योगिक क्रान्ति हुई और वहा बडे-बडे कारखाने स्थापित हुए। अपने कारखानों के माल को भारत मे खपाने के लिये यह आवश्यक था कि भारत के धन्धो को नष्ट कर के भारत को केवल कच्चा माल उत्पन्न करने वाला देश बना दिया जावे। इस नीति का फल यह हुआ कि भारत क्रमश विदेशों को खाद्य पदार्थ तथा कच्चा माल भेजने लगा और उसके बदले तैयार माल मगाने लगा।

इसका परिणाम यह हुआ कि उद्योग धन्धों मे काम करने वाले भी खेती करने पर विवश हो गये और भारत की कला, कारीगरी, उद्योग-धन्धे नष्ट हो गये। आर्थिक पतन के साथ ही हमारा बौद्धिक विकास रुक गया और हमारा नैतिक पतन भी आरम्भ हो गया।

१८५० ईसवी के उपरान्त गमनागमन के साधनो की उन्नति के फल स्वरूप नये उद्योग-धन्धों का भारत मे प्रादुर्भाव हुआ। सब से पहले खेती से सम्बन्धित धंधो का यहाँ श्री गणेश हुआ। अंग्रेज व्यवसायियो ने

सस्ती मजदूरी और अनुकूल जलवायु तथा भूमि का लाभ उठाने के लिये यहाँ नील, चाय, कहवा, जूट की खेती करना आरम्भ की।

इसके उपरान्त कोयले तथा अन्य खनिज पदार्थों को खानों से निकालने का धधा आरम्भ किया गया। खनिज पदार्थों को निकालने में भी मुख्यत अंग्रेजी पूंजी ही लगाई गई। ध्यान रखने की बात यह है कि खानों का धन्धा भी ब्रिटेन को कच्चा माल ही देता था।

१८५० के उपरान्त ही भारत मे सडकों और रेलो का विस्तार आरम्भ हुआ। रेलवे स्वयं एक वहुत बडा धधा है। सच तो यह है कि रेलवे ने देश में बहुत से धंधो को जन्म दिया है। इसके उपरान्त बीसवीं शताब्दी के आरम्भ में नहरों का विस्तार किया गया।

किन्तु इन सब धधो से अधिक महत्वपूर्ण धंधे सूती कपडे के कारखाने थे, जो कि १८६० के उपरान्त तेजी से स्थापित होने लगे। सूती कपडो के अतिरिक्त जूट के कारखाने, लोहे के कारखाने और ऊन के कारखाने भी स्थापित हुए।

प्रथम महायुद्ध के उपरान्त सूती कपडे के कारखानो, लोहे, दियासलाई, शीशे, शक्कर, चमडे, कागज, सीमेंट के कारखानो की भी स्थापना हुई।

द्वितीय महायुद्ध के समय भारतीय-धंधो की और भी वृद्धि हुई; और अब देश मे राष्ट्रीय सरकार स्थापित हो जाने के फल स्वरूप वे आर्थिक योजनायें, जो कि देश के सामने उपस्थित की जा रही है, यदि कार्य रूप में परिणत की गई तो निकट भविष्य में भारतवर्ष में आशातीत औद्योगिक उन्नति हो सकती है, इसमे कोई संदेह नहीं।

किन्तु इससे हमे यह न मान लेना चाहिए कि भारत मं आधुनिक ढग के उद्योग-धन्धो का प्राधान्य है। बात ठीक इसके विपरीत है। आज भी देश की अधिकांश जन-संख्या (७५ प्रतिशत) खेती पर निर्भर है। और शेष ग्रामीण जन-संख्या, जो गाँवों में निवास करती है, वह भी परोक्ष रूप से खेती पर निर्भर है। इस संबन्ध मे नीचे लिखे आँकडे

महत्वपूर्ण है ।

पिछले पचास वर्षों में खेती पर अवलम्बित जन-संख्या का अनुपात भारत की कुल जन-संख्या की तुलना में इस प्रकार था—

१८९१ में ६१.१ प्रतिशत, १९०१ में ६५.५ प्रतिशत, १९११ में ७२.२ प्रतिशत, १९३१ में ७३ प्रतिशत, १९४१ में ७५ प्रतिशत ।

इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि खेती पर अधिकाधिक जन संख्या निर्भर होती गई; और यही कारण है कि भारत में प्रति किसान जोती जाने वाली भूमि का औसत केवल ढाई एकड़ रह गया । भूमि पर जन-संख्या के अत्यधिक भार का मुख्य कारण यह है कि जहाँ एक ओर देश की जन संख्या बढ़ती गई, दूसरी ओर गृह उद्योग धन्धे नष्ट होते गए और आधुनिक ढंग के कारखाने और धन्धे, गृह उद्योग धन्धों से हटाई हुई जनसंख्या को तथा स्वाभाविक रूप से बढ़ी हुई जनसंख्या को न खपा सके । इसका परिणाम यह हुआ कि उद्योग-धन्धों में लगी हुई जन-संख्या का अनुपात कम होता गया । जहाँ १९११ में उद्योग-धन्धों (जिसमें गृह-उद्योग धन्धे भी सम्मिलित हैं) में लगी हुई जनसंख्या देश की कुल जनसंख्या की ५.५ प्रतिशत थी, वहाँ १९४१ में ४.२ प्रतिशत रह गई ।

यदि हम केवल आधुनिक ढंग के यंत्रों से चलने वाली फैक्टरियों, खानों, चाय, कहवा, रबर इत्यादि के बागों, रेलवे वर्कशॉपों तथा बन्दरगाहों में लगे हुए मजदूरों को ही लें तो उनकी संख्या भारत की कुल जनसंख्या का केवल एक प्रतिशत ही है । यदि हम उन लोगों को भी इस संख्या में सम्मिलित कर लें जो कि कारखानों में काम करने वाले मजदूरों पर अवलम्बित हैं—जैसे उनकी पत्नी और बच्चे इत्यादि, तो भी आधुनिक धन्धों में लगे हुए मजदूरों और उनके आश्रितों की संख्या देश की कुल जनसंख्या के २ प्रतिशत से अधिक नहीं होगी ।

भारतवर्ष में जनसंख्या का भूमि पर इतना अधिक भार है कि अन्य किसी देश में जनसंख्या इस सीमा तक खेती पर निर्भर नहीं है । अन-

एव भारत की निर्धनता का एक मुख्य कारण यह भी है कि प्रति मनुष्य इतनी कम भूमि (एक एकड़ से भी कम) का औसद है कि उस पर एक व्यक्ति के लिए यथेष्ट सम्पत्ति उत्पन्न करना सम्भव नही है। भूमि के अत्यधिक भार को कम करने का एक मात्र उपाय उद्योग-धन्धो की उन्नति है। यही कारण है कि देश का प्रत्येक विचारवान् व्यक्ति भारत के औद्योगीकरण का पक्षपाती है।

आज देश के सामने बहुत-सी आर्थिक योजनाये उपस्थित है। टाटा-बिरला योजना, गाधी योजना, जनता की योजना, काग्रेस द्वारा स्थापित राष्ट्रीय योजना समिति, सभी ने इस बात को स्वीकार किया है कि बिना औद्योगिक उन्नति के देश का निस्तार नहीं है। केवल मत-भेद इस बात पर है कि औद्योगिक संगठन किस प्रकार का हो। अस्तु। अब देश के स्वतन्त्र हो जाने के उपरान्त देश की औद्योगिक उन्नति तेजी से होगी, इसमे तनिक भी सन्देह नहीं है। और उद्योग धन्धों के साथ मजदूरो का प्रश्न जुडा हुआ है। उद्योग-धन्धो की उन्नति तभी हो सकती है कि जब उनमे लगे मजदूरो की स्थिति मे सुधार हो, उनकी कार्य-क्षमता बढे, मिल मालिको और मजदूरो के सम्बन्ध अच्छे रहे, मजदूरो की आर्थिक, सामाजिक तथा नैतिक उन्नति हो और उनकी सुविधा तथा उनके सुख का ध्यान रक्खा जावे। इस दृष्टि से मजदूरो की समस्या राष्ट्रीय महत्व की समस्या है।

आज हमारे कारखानो में काम करने वालो की जो दयनीय दशा है, उससे प्रत्येक व्यक्ति परिचित है। जब देश में औद्यौगिक उन्नति की चर्चा बहुत तेजी से हो रही है, तब हमे धन्धो मे काम करने वालो की समस्याओ को भूल नही जाना चाहिये। उद्योग-धन्धो की उन्नति का एक मात्र उद्देश्य देश की निर्धनता को मिटाना है, न कि कतिपय पूँजीपतियो और मिलमालिकों की तिजोरियो को भरना। यदि भारत की औद्योगिक उन्नति का अर्थ यह हो कि कतिपय पूंजीपति करोड़पति से अरब और खरबपति बन जावे और उन धधो में लगे हुए मजदूर

कारखानों मे काम करने वाले मज़दूरों का बहुत बडा भाग काम करता है। इन दो केन्द्रों के अतिरिक्त अहमदाबाद, कानपुर, मद्रास, नागपुर, जमशेदपुर, प्रमुख औद्योगिक केन्द्र है। अहमदाबाद मे सूती कपड़े की मिलें है, मद्रास मे कपडा, चमडा तथा अन्य कारखाने है, कानपुर मे कपडे और चमडे के कारखाने है और नागपुर मे मुख्यतः कपड़े के कारखाने है। जमशेदपुर मे प्रसिद्ध टाटा कंपनी का लोहे का कारखाना है। इन प्रमुख केन्द्रों के अतिरिक्त फुटकर औद्योगिक केन्द्र है, जहा कतिपय मिलें और कारखाने है, जैसे शोलापुर, इंदौर, देहली, लखनऊ, लाहौर इत्यादि।

इनके अतिरिक्त रानीगंज झरिया की कोयले की खानें, आसाम, बंगाल तथा दक्षिण के चाय और कहवा के बाग तथा रेलवे वर्कशापों मे भी मजदूरो की आवश्यकता होती है।

इनमे कलकत्ता, बम्बई, जमशेदपुर कोयले की खानों और चाय के बागों को छोड और सभी केन्द्रो मे मजदूर समीपवर्ती जिलो से ही आते है।

भारतीय धधो मे स्थायी मजदूरो का अभाव

भारतीय धंधो की एक विशेषता है। धंधों मे काम करने वाले मजदूर औद्योगिक केन्द्रों मे उत्पन्न नही होते, वरन् वे गांवो से आते हैं और कुछ समय कारखानो में काम करने के उपरान्त अपने गांवों को वापस लौट जाते है। दूसरे शब्दो मे हम कह सकते है कि भारतीय धंधों में काम करने वाले मजदूर उन औद्योगिक केन्द्रों के स्थायी रहने वाले नही होते, वरन् वे कुछ समय के लिए गांवों से प्रवास करके केन्द्रो मे आते है और अन्त मे फिर गांवो मे वापस लौट जाते है। जो भी ग्रामीण से औद्योगिक केन्द्र की ओर आता है, वह इस बात की कल्पना भी नहीं करता कि वह स्थायी रूप से गांव को छोड कर औद्योगिक केन्द्र मे रहेगा। वह तो अपने गांव को ही अपना देश मानता है और जहां काम

करता है, उसे परदेश मानता है।

भारतीय मज़दूर की इस मनोवृत्ति के आधार पर कुछ मिल मालिक और विद्वान् यह कहते है कि भारतीय कारखानों में मुख्यतः किसान काम करते है। जब वे खेती से अवकाश पाते है तो कारखानों में काम करने चले आते हैं; और जब खेती के लिए उनकी जरूरत होती है तो वे गांवों को लौट जाते हैं। जहां तक मौसमी कारखानों, जैसे शक्कर, चावल, कपास के पेच का प्रश्न है; यह बात ठीक है; किन्तु स्थायी कारखानों मे काम करने वाले मजदूर किसान नही होते। उन मज़दूरों का, जो सूती कपडे, चमडे, लोहे तथा अन्य कारखानों मे काम करते हैं, खेती से कोई सीधा संबंध नहीं होता; परन्तु प्रति वर्ष वे कुछ समय के लिए नियमित रूप से गांवों को जाते है, जिससे कुछ मिल मालिक यह अनुमान लगाते हैं कि वे मुख्यतः खेती करने वाले किसान हैं, जो अवकाश के समय कारखानों में काम कर लेते हैं। वास्तव मे यह धारणा गलत है; सच तो यह है कि जो मज़दूर कारखानों मे काम करते हैं, वे गांवों में उत्पन्न, गांव में पले और अपने जीवन के संध्या काल मे फिर अपने गांव को लौट जाने के स्वप्न देखते है। इस कारण वे अपने गांव को छोडते नहीं, वरन् उससे सम्बन्ध बनाये रखते है। किन्तु उनका खेती से सीधा कोई सम्बन्ध नहीं होता। हां, यह अवश्य है कि किसी की दो-चार बीघा मौरूसी भूमि होती है तो किसी के भाई, बाप, चाचा, गांव मे रहते हैं और उसका भी अपने कुटुम्ब की पैतृक जायदाद मे थोड़ा हिस्सा है। किसी-किसी कुटुम्ब मे ऐसा होता है कि यदि घर मे चार भाई है तो दो बम्बई चले जाते हैं, और दो गांव मे खेती करते हैं।

यद्यपि मज़दूरों का खेती से सीधा सम्बन्ध नही रहता, परन्तु यह सत्य है कि प्रत्येक मज़दूर अपने पैतृक गांव से सम्बन्ध बनाये रखता है और अन्त में गांव को ही लौट जाता है। मजदूर अपने गांव से सम्बंध क्यों बनाये रखता है, इसके कुछ कारण है। वह हृदय से ग्रामीण है, गांवों मे ही उत्पन्न हुआ, गांवों मे ही वह पला और अधिकांश मजदूर अपनी

पत्नियो को गांव मे ही छोड देते हैं। यदि औद्योगिक केन्द्र मे वे अपनी पत्नियों को लाते भी हैं तो बच्चा उत्पन्न होने के समय वे गांवों को चली जाती है। यही नही, अधिकतर बच्चों का बचपन भी गांवो मे ही व्यतीत होता हे। इसी प्रकार से जब कोई बीमार होता है या वृद्ध हो जाने के कारण कार्य नहीं कर सकता तो वह अपने पैतृक गांव को चला जाता है। इन्हीं कारणो से वह अपने गॉव को छोडना नहीं चाहता और विवाह के मौसम मे, कुटुम्ब के किसी महत्वपूर्ण कार्य मे बराबर सम्मिलित होता रहता हे। यही नहीं, यदि उसकी आर्थिक स्थिति अच्छी होती है तो वह प्रतिवर्ष एक या दो महीने के लिए गॉव आता है, नहीं तो दूसरे या तीसरे वर्ष तो अवश्य ही आता है।

गावो से औद्योगिक केन्द्रो की ओर प्रवास के कारण

गॉवो से मजदूर क्यो कारखानो मे काम करने जाता हे, इसका मुख्य कारण उसकी निर्धनता और गॉव मे आय के साधनो का न होना हे। यह तो पहले ही कहा जा चुका है कि भारत मे भूमि पर जनसख्या का अत्यधिक भार है। खेती को छोड कर गॉव मे और धधे नहीं है, साथ ही क्रमश. घरेलू धधे नष्ट हो रहे है और जनसंख्या तेजी से बढ रही है। इसका परिणाम यह हो रहा है कि गॉव मे बहुत बडी संख्या मे भूमि रहित मजदूर वर्ग उत्पन्न हो गया है। साथ ही, अधिकांश किसानों के पास इतनी कम भूमि है कि उसका भूमि से गुजारा नहीं होता। अतएव अपनी रोजी कमाने के लिए उसे अपना गॉव छोड कर औद्योगिक केन्द्रो की ओर जाना पडता हे। कर्ज का भयंकर बोझ भी किसान को औद्योगिक केन्द्रो मे जा कर धन कमाने के लिए विवश करता है। गॉवो मे चलने वाले घरेलू उद्योग धन्धो के मिलो तथा विदेशी माल के मुकाबिले मे नष्ट हो जाने के कारण और भूमि की कमी के कारण उन धन्धो से हटने वाले कारीगर मिलो मे जाकर काम करते है। अहमदाबाद तथा बम्बई मे अधिकांश बुनने वाले जुलाहे या कोरी है, जिनका घरेलू धंधा

नष्ट हो गया तो उनके पास जीविका का कोई साधन न रहने के कारण उन्हें केन्द्रों में जाने के सिवाय और कोई चारा नही रहा।

अतएव यह साफ है कि किसान अपनी निर्धनता के कारण शहरों की ओर जाता है। हां, पिछले दिनों मे जो नीची जाति के लोगों मे चैतन्य उदय हुआ है, वह भी इस प्रवास का एक कारण है। क्योंकि गाँवों मे छुआछूत, जातपांत के बन्धन इतने कड़े है कि अछूत कहे जाने वाले लोगों को वह असह्य होते हैं। इसके विपरीत शहरों मे स्थिति इतनी कठोर नहीं है। हरिजनों के अतिरिक्त और भी जो लोग गाँवों मे जातिच्युत हो जाते हैं, उनका जीवन भी वहाँ दूभर हो जाता है, क्योंकि वहाँ उनका सामाजिक वहिष्कार होता है। इस कारण ऐसे लोग गाँव से भाग कर नगरों मे चले आते है। यद्यपि ग्रामीणों के शहर की ओर जाने के यह सामाजिक कारण भी है; किन्तु मुख्य कारण तो उनकी निर्धनता ही है।

मजदूरों का अपने गांव से संबध बनाये रखना

ऊपर के विवरण से यह तो स्पष्ट हो गया कि आर्थिक तथा सामाजिक कारणों से ग्रामीण, केन्द्र को प्रवास करता है; किन्तु गाँव से वह सम्बन्ध क्यों बनाये रखता है, यह स्पष्ट नही होता। गांव से सम्बन्ध बनाये रखने का एक मात्र कारण यह हे कि ग्रामीण के लिये शहरों में कोई भी आकर्षण नहीं हे; वह तो अपनी निर्धनता के कारण वहां पैसा कमाने के लिये जाता हे। किन्तु वहाँ उसका मन नहीं लगता, वह अपने गॉव के खेत वाग और झोपडी की याद करता हे और उस दिन की वाट जोहता है, जब वह सर्वदा के लिये शहर को छोड कर अपने गांव में जाकर शान्ति पूर्वक जीवन व्यतीत करेगा। दूसरे शब्दों मे हम कह सकते है कि ग्रामीण को नगर अपनी ओर आकर्षित नहीं करते, वरन् परिस्थितियां उसे शहरों की ओर ढकेल देती हैं। यही कारण है कि जब परिस्थिति अनुकूल होती है तभी वह गाँव को लौट आता हे। और जिन दिनों वह शहरों मे रहता है उन दिनो भी वह अपने गॉव से सम्बन्ध बनाये रखता

है और समय और सुविधा होने पर गांव आता है।

हिन्दुओं मे प्रचलित संयुक्त कुटुम्ब-प्रणाली भी इसका एक मुख्य कारण है। मजदूर के अधिकाँश परिवार के लोग गाँव मे रहते है और उसके हिस्से की थोड़ी भूमि भी होती है। वह इस बंधन से बंधा रहता है। फिर शहरों मे बच्चों और औरतों के लिए काम की कमी रहती है। इस कारण मजदूर अपने स्त्री और बच्चों को गॉव में ही छोड देता है, क्योंकि गाँव मे रहने का खर्च बहुत कम है और वहॉ मकान इत्यादि की असुविधायें नही है। गाँव में थोडाबहुत काम स्त्रीबच्चे सभी कर लेते हैं; इस कारण गॉव मे परिवार का पालन पोषण सरलता से हो सकता है। फिर ग्रामीण का पीढी दर पीढी का गाँव से सम्बन्ध होता है। उसे शहरी जीवन, जो व्यक्तिवाद के आधार पर निर्भर है, नही भाता। उसे तो गाँव का सामूहिक जीवन ही अच्छा लगता है।

फिर शहरो और औद्योगिक केन्द्रों के जीवन में आकाश पाताल का अन्तर होता है। जब ग्रामीण बम्बई या कलकत्ता जैसे विशाल केन्द्र में पहुँचता है तो वह भौचक्का-सा रह जाता है। कहां गांव का शान्त वातावरण और कहां इन केन्द्रों का मनुष्य को थका देने वाला निरन्तर शोर! कही वृक्षों का नाम नही। रहने का स्थान गंदा और पशुओं के निवास स्थान से भी निकृष्ट। थका हुआ मजदूर जब अपनी चाल मे आता है तो मानो जेल की एकांत कोठरी मे आ गया हो।

केवल यही अंतर नही होता, बहुत से औद्योगिक केन्द्र दूसरे प्रान्तों के मजदूरों को आकर्षित करते है। वहा की भाषा, वेश, भोजन, रहन-सहन, और जलवायु, सभी ग्रामीण के लिए अपरिचित होते है और वह वहां खोया-खोया-सा रहता है। शहरो की सभ्यता, वहां का जीवन और वहां के आदर्श, गावों से इतने भिन्न है कि ग्रामीण उन्हे कभी भी नहीं अपना पाता।

जब ग्रामीण पहली बार अपने गांव को छोड कर औद्योगिक केन्द्र में आता है तो वहां की जलवायु की भिन्नता और रहन-सहन की भिन्नता

के कारण वह बीमार पड जाता है। उस समय वह गांव और औद्योगिक केन्द्र के अन्तर को समझता है। जहां गांव मे बीमार पडने पर उसकी चारपाई के पास चार गांव के लोग बैठे रहते थे, वहां वह शहर में अपनी गंदी कोठरी मे अकेला पडा रहता है। उस समय उसे अपनी गांव की चौपाल, खेत, भाई-बिरादरी की याद आती है और वह भाग खडा होता है। यदि ग्रामीण पहली बार की बीमारी झेल गया तो फिर वह वहां रह कर काम करता है। फिर भी जब कभी ग्रामीण लम्बा बीमार हो जाता है अथवा वृद्ध हो जाता है, या बेकार हो जाता है तो वह अपने गांव को याद करता है। बीमारी, बेकारी, और बुढापे को काटने के लिए गांव औद्योगिक केन्द्रों की अपेक्षा बहुत ही सुविधा जनक स्थान हैं।

यही नहीं, कारखानों का काम भी ग्रामीण के अनुकूल नहीं पडता। ग्रामीण बहुत मेहनती होता है, किन्तु खेती का काम ऐसा नहीं होता कि जिसमें किसान को मशीन बन जाना पडे। फैक्टरियो का काम मनुष्य को यंत्रवत बना देता है, वहाँ का अनुशासन भी ग्रामीण मजदूर को बहुत खलता है। इसका मुख्य कारण यह है कि भारतीय मजदूर अपने युवाकाल मे औद्योगिक केन्द्र मे आता है, तब तक वह खेती करता है। खेती और कारखानों के काम मे बहुत बडा अन्तर है।

यही कारण है कि ग्रामीण सर्वदा के लिये गांव को नही छोडता, वह अस्थायी रूप से ही केन्द्रो मे रहता है।

अब प्रश्न यह है कि हिन्दुस्तानी मजदूर की इस विशेपता से धंधों को लाभ हे या हानि? सच तो यह हैं कि इससे लाभ और हानि दोनो ही है। जहाँ सयुक्त राज्य अमेरिका या ब्रिटेन का मजदूर जो औद्योगिक केन्द्रों मे ही जन्म लेता है और अपने पिता को कारखानो में जाते देखता है, उन्ही कारखानो में स्वयं भी बडा होने पर काम करने की बात सोचता है तो वह यह मानने पर विवश होता है कि कारखानो और उसका चिर-सम्बन्ध है। वह जानता है कि उसको सदैव इन्हीं कारखानों मे काम करना है और सदा औद्योगिक केन्द्रों मे ही रहना है। ऐसी दशा में ब्रिटेन

का मजदूर अपने अधिकारों, वेतन, काम के घंटों के प्रश्नों मे तथा मजदूर सभाओं में अधिक दिलचस्पी लेता है। वह यंत्रो से काम करने मे अधिक कुशल होता है, क्योंकि, वह बचपन से ही यंत्रो से परिचित होता है। किन्तु भारतीय मजदूर जब तक कि वह औद्योगिक केन्द्रों में नही पहुँचता, यंत्र के सम्बन्ध मे कुछ नहीं जानता। बहुत दिनो में यन्त्रों पर काम करने की कुशलता वह प्राप्त कर पाता हे, फिर भारतीय मजदूर जानता है कि उसे सदैव तो औद्योगिक केन्द्रो मे रहना नहीं है, इसलिए वह धन्धे से सम्बन्ध रखने वाली बातो मे उतनी दिलचस्पी नही लेता। स्थायी रूप से औद्योगिक केन्द्रों मे ही बसने वाले मजदूर कारखाने के अनुशासन के अभ्यस्त हो जाते है और उनकी मनोवृत्ति यांत्रिक हो जाती है। किन्तु भारतीय मजदूर मे वह उत्पन्न नही होती।

इसका एक परिणाम यह होता है कि फैक्टरी मे मजदूर जल्दी-जल्दी बदलते रहते है। कही-कही तो यह देखने मे आता है कि चार-पाच वर्षो मे सब नये मजदूर हो जाते है। पुराना एक नही रहता। क्योकि जब मजदूर गाव जाता है, तब उसे छुट्टी तो मिलती नहीं, वह नौकरी छोड कर जाता है। जब वह महीने दो महीने के बाद लौट कर आता है तो उसे पुराना मजदूर होने के कारण भर्ती होने मे कोई सुविधा नही दी जाती, इस लिए अगर उसी कारखाने मे जगह मिल गई तो वह उस कारखाने मे नहीं तो और किसी कारखाने मे जगह ढूंढता है। हर एक कारखाने के यन्त्र, काम करने का ढग और संगठन भिन्न होता है। इसलिए मजदूर जब दूसरे कारखाने मे जाता है तो वह नौसिखिया होता है और उसकी कार्यक्षमता कम होती है। यही नही, इस अदल-बदल का फल यह होता है कि मिल मालिक और मजदूरो मे घनिष्ट और स्नेहपूर्ण सम्बन्ध ही स्थापित नही हो सकता। यही नही, जैसा कि हम आगे चल कर बतलावेगे, मजदूर जब गाँव से वापस लौटता है तो उसे कुछ दिनों भटकना पडता है, तब कही जाकर उसे घूस देने पर जगह मिलती है। इससे मजदूरो की आर्थिक हानि भी बहुत होती है।

जहां गांव से सम्बन्ध रहने से यह हानियां हैं, वहां लाभ भी हैं। हानि की अपेक्षा लाभ अधिक महत्वपूर्ण है। पहला लाभ तो यह है कि कारखानों से काम करने वाला मजदूर गांव मे पलता और बडा होता है। इस कारण उसका स्वास्थ्य और शरीर अच्छा होता है। एक गांव के लडके को देखिये, जो किसान का लडका है; और एक कानपुर के मिल मजदूर के बच्चे को देखिये, जो कानपुर में ही उत्पन्न हुआ हो और पला हो तो अन्तर स्पष्ट हो जावेगा। यदि यह मजदूर गांवो से न आ कर शहरो मे ही उत्पन्न होते और बडे होते तो उनका स्वास्थ्य और भी खराब होता और शरीर निर्बल होता।

जो मजदूर प्रति वर्ष एक-दो महीने के लिए औद्योगिक केन्द्र से छुट्टी लेकर गांव चला जाता है, वह भी उसके मस्तिष्क और शरीर को सबल बनाता है। यही नहीं, ग्रामीण और शहरी जीवन के सम्मिलन से जो दृष्टिकोण विस्तृत होता है, वह केवल शहरी जीवन से नहीं हो सकता। इसके सिवाय जहां गांव से सम्बन्ध रहता है, वहां मजदूर को विपत्ति और आवश्यकता के समय एक अवलम्बन रहता है, जहां कि वह जा सकता है। एक प्रकार से गांव मजदूरों की बीमारी, बुढापे और बेकारी का बीमा है। अन्य औद्योगिक देशों में इन समस्याओं को हल करने के लिए सामाजिक बीमे का प्रबन्ध किया गया है। जब तक केन्द्रों में इनका उचित प्रबन्ध नहीं होता, तब तक तो गांवों से सम्बन्ध रखना एक अनिवार्य आवश्यकता है। गांव वृद्ध, गर्भवती स्त्री, छोटे बच्चों, बेकारो, अपाहिजों और शक्तिहीनो के लिए शहरों की अपेक्षा अच्छा निवासस्थान है।

गांव और औद्योगिक केन्द्रों के केवल यही लाभ नहीं है। शहरों में जाकर ग्रामीण नई बातों को सीखता है, नये विचारो को ग्रहण करता है और जब गांवों मे समय-समय पर आता है तथा अन्त में गांवों में बसता है, तब वह उन नवीन विचारों का गाँवो में भी समावेश करता है। जो व्यक्तिगत स्वतन्त्रता की भावना मजदूर में जागृत होती है, वह उसका प्रचार गांव में भी करता है। अन्तु, औद्योगिक केन्द्रों में

जाने से उसे आर्थिक लाभ ही नहीं होता, वरन् उसे नवीन विचार, विस्तृत संसार का ज्ञान होता है और वह उन विचारों को गांवों में लाता है। यदि गांव और शहरों का यह सम्बन्ध समाप्त हो जावेगा तो गांव इस लाभ से वंचित हो जावेंगे।

अब प्रश्न यह उठता है कि भविष्य में हमें अपने औद्योगिक केन्द्रों में ऐसा मजदूर वर्ग उत्पन्न करना चाहिये कि जो गांवों को सदा के लिए छोड़ चुका हो और जो स्थायी रूप से औद्योगिक केन्द्र में बस गया हो, या वर्तमान संबंध सुरक्षित रखना चाहिए और उसे प्रोत्साहन देना चाहिए।

यह एक ऐसा प्रश्न है कि जिस पर ध्यान देना नितान्त आवश्यक है, क्योंकि मजदूरों की बहुत-सी समस्याओं का इससे गहरा सम्बन्ध है। अतएव हमें इस प्रश्न पर एक निर्णय कर लेना चाहिए।

शाही मजदूर कमीशन ने इस सम्बन्ध में अपना मत देते हुए कहा था कि यह सम्बन्ध बहुत गहरा है, अतएव यदि हम इसको नष्ट करना भी चाहे तो वह बहुत समय लेगा। साथ ही, कमीशन का यह स्पष्ट मत था कि यह सम्बन्ध अत्यन्त लाभदायक है, इस कारण नष्ट करने के स्थान पर उसे सुरक्षित रखना चाहिए और प्रोत्साहन देना चाहिए। लेखक का भी यही मत है। आवश्यकता इस बात की है कि इस संबंध को नियमित और स्थायी कर दिया जावे, जिससे कि इसके कारण होने वाली हानियां न रहें और उससे होने वाले लाभ को बढ़ाया जा सके।

तृतीय परिच्छेद

मजदूरों की भर्ती

जब भारतवर्ष में आधुनिक ढंग के कारखानों की
तब से मालिकों को मजदूरों की कमी की बराबर शि
१९२० के उपरान्त क्रमशः इस स्थिति में सुधार ह
कोयले की खानों और चाय के बागों को छोड़

मजदूरों की कमी का अनुभव नहीं होता है। इस परिवर्तन का परिणाम यह हुआ है कि जहां पहले मिल मालिक मजदूरों को सुख-सुविधा पहुंचाने का प्रयत्न करते थे; उनके लिए मकान, औषधालय तथा अन्य सुविधायें दी जाती थी और मजदूरों के साथ उनका अच्छा व्यवहार रहता था, वहां आज मिल मालिकों की शोषण करने की शक्ति अधिक बढ गई है; क्योंकि उसे मजदूरों की कमी नहीं है। मजदूरों की कमी ही मजदूरों की पहले सब से बडी शक्ति थी। किन्तु क्रमशः मजदूरों की वह शक्ति नष्ट होती जा रही है, और उनकी तुलना मे मिल मालिक अधिक बलशाली होते जा रहे हैं। आज तो स्थिति यह है कि जब तक मजदूर अपना सबल संगठन नहीं करते, तब तक उनका निस्तार नही हो सकता।

आरम्भ मे जब मजदूरों को बहुत कमी थी तो हर एक मिल मालिक को मजदूरों की भर्ती के लिए अपने आदमियों को दूर-दूर भेजना पडता था। मजदूरों के ठेकेदार तथा अन्य कर्मचारी गांवों में जा कर मजदूरों को भर्ती करते थे और उन्हे मिलों मे काम करने के लिये राजी करते थे। इस कार्य के लिए उन्हे कमीशन या वेतन दिया जाता था। आज भी यह तरीका चाय के बागों, कोयले की खानों इत्यादि मे प्रचलित है। किन्तु अधिकांश धन्धों मे स्थिति यह हो गई है कि भर्ती के दिन मिल के फाटक पर ही आवश्यकता से अधिक मजदूर मिल जाते है और मालिक उनमें से छांट कर भर्ती कर सकते है। यद्यपि आज मजदूरों को भर्ती करने के लिए मालिकों को गांवों में आदमी भेजने की जरूरत नहीं है; किन्तु फिर भी मिल मालिकों ने सीधे मजदूरों की भर्ती स्वयं करने के बजाय, यह काम पहले की तरह दलालों के हाथ छोड रक्खा है। यह जो मजदूरों और मालिकों के बीच मे एक मजदूरों का दलाल-वर्ग भारतवर्ष मे पैदा हो गया है, यह भारत की एक विशेषता है। इसको भिन्न-भिन्न औद्योगिक केन्द्रों में भिन्न-भिन्न नामों से पुकारा जाता है। जाबर, मुकद्दम, सरदार, मिस्त्री, नायक नामों से इनका सम्बोधन होता है, लेकिन वह सब है एक ही पद के नाम। हां, तो मजदूरों और मालिकों के बीच में जो यह

'जाबर' जमा हुआ है, यह हमारे औद्योगिक केन्द्रो का एक भयकर रोग है।

जाबर

'जाबर' हर एक फैक्टरी में होता है और उसकी शक्ति असीम होती है। वह एक प्रकार से मजदूर के लिए सर्वेसर्वा होता है। वह वस्तुत चार्जमैन होता है, जिसे मजदूरो की श्रेणी से पुराना और चतुर होने के कारण 'जाबर' बना दिया जाता है। मजदूरो को अपने विभाग मे भर्ती करना, उन्हे आवश्यक शिक्षा देना, उनके काम की देखभाल करना तथा मशीनो को ठीक रखना, उसके मुख्य काम होते है। मजदूर केवल फैक्टरी मे जगह पाने के लिए उस पर निर्भर नही रहता, वरन् अपनी जगह को सुरक्षित रखने और आगे उन्नति के लिए भी उस पर ही अवलम्बित रहता है। किसी-किसी स्थान पर तो जाबर मजदूर का महाजन भी होता है। मजदूर उसके ऋण से दबा रहता है। यही नहीं, कहीं-कहीं जाबर के ही मकानो मे मजदूर रहते है। बम्बई, कलकत्ता में इन लोगो ने बहुत से रहने के स्थान पट्टों पर ले लिए है और इनमे उनके आधीन मजदूर किराये पर रहते है।

इससे भी अधिक महत्वपूर्ण कार्य, जो जाबर करता है, वह है, उसका मालिक और मजदूरों के बीच मे दुभाषिये का काम। जब मालिक कोई सूचना मजदूरो को देना चाहते है तो वह जाबर को दी जाती है और वह मजदूरो को समझा देता है। यही नही, यदि मजदूरो की कोई माँग होती है, उन्हे कोई कष्ट होता है या वे कोई सुविधा प्राप्त करना चाहते है तो वे जाबर के द्वारा ही अपनी बात मालिकों तक पहुँचाते है। दूसरे शब्दों मे जाबर कुछ कार्य मजदूर सभाओ के भी करता है। इसका स्वाभाविक परिणाम यह होता है कि जाबर ऐसा महत्वपूर्ण व्यक्ति बन गया है कि मैनेजर इत्यादि भी उसको जल्दी हटाने का साहस नही करते, इसका कारण यह है कि अधिकांश मिल-मैनेजर मजदूरो से सीधा संबध स्थापित करने में असमर्थ है।

अब सुनिये 'जाबर' कैसा व्यक्ति होता है। अधिकतर उसे कोई

शिक्षा नहीं होती। थोडी बहुत शिक्षा इस कार्य के लिए यथेष्ट होती है। वह उसी मिल का कोई पुराना मजदूर होता है, जो अपने अफसरों को खुश रखने के कारण 'जाबर' बना दिया जाता है। ऐसी दशा में उससे यह आशा करना कि वह अपनी स्थिति से लाभ नही उठावेगा, भूल होगी। जाबर मजदूरों से खूब घूस लेता है। जब वह किसी मजदूर को नौकर रखता है तो एक या दो मास का वेतन घूस के रूप में लेता है। कहीं-कहीं मजदूर प्रति मास एक रुपया या कुछ कम घूस उसे देते हैं। जब किसी की तरक्की का प्रश्न आता है तो फिर मजदूर को भेंट चढानी होती है। जाबर को शराब पिलाना, उसकी दावत करना भी आवश्यक होता है। इसके अतिरिक्त जाबर के घर पर बारी-बारी से काम करना तो अनिवार्य है। जावर अपने दो चार सम्बन्धियों को भर्ती कर लेता है, वे अधिकांश मे काम नहीं करते। वह कार्य अन्य मजदूरों से लिया जाता है और तनख्वाह के दिन वह लोग तनख्वाह ले लेते है। यह रुपया भी जाबर की जेब मे जाता है। सच तो यह है कि जाबर मजदूरों को खूब ही लूटता है। साथ ही मजदूरों पर उसका प्रभाव भी इतना अधिक होता है कि मिल मालिक भी उसको निकालने से हिचकते हैं।

कई ऐसे उदाहरण दिये जा सकते हैं कि जावर को निकालने पर उसने हडताल करवा दी। यही सब कारण हैं, जिनसे मिल मालिक यह जानते हुए भी कि वह घूस लेता है और मजदूरों का शोषण करता है, जाबर को हटाना नहीं चाहते।

जाबर ही केवल घूस लेता हो, ऐसी बात नहीं है। जाबर को हेड जाबर को घूस देनी पडती है और कहीं-कहो तो ऊंचे अधिकारी भी घूस मे हिस्सा पाते हैं। शाही मजदूर कमीशन ने इस सम्बंध में यह राय दी थी कि जाबर की शक्ति को कम करना और रिश्वतखोरी को समाप्त करना अत्यन्त आवश्यक है, नहीं तो मजदूरों का शोषण नहीं रुक सकता।

कमीशन की सम्मति मे रिश्वतखोरी तभी रोकी जा सकती है, यदि

मजदूरो को भर्ती करने और उन्हें निकालने का काम जाबर के हाथ में से ले लिया जावे । प्रत्येक कारखाने मे 'लेबर आफिसर' नियुक्त किया जाना चाहिए। वह सीधा जनरल मैनेजर के अधीन हो और उसके हाथ में यह कार्य दिया जावे । लेबर आफिसर को ऊंचा वेतन दिया जाना चाहिए। वह ऊंची शिक्षा प्राप्त, ईमानदार, मजदूरों से सहानुभूति रखने वाला और ऊंचे चरित्र का व्यक्ति हो। मिल के जितने भी विभाग हों, उनके अध्यक्षो की सलाह ली जावे किन्तु मजदूरो को नौकर रखने तथा निकालने का काम लेबर आफिसर के हाथ मे ही होना चाहिये । यदि योग्य व्यक्ति इस पद पर रक्खे गये तो शीघ्र ही वे मजदूरो का विश्वास प्राप्त कर लेगे और यदि मजदूरों की सुख सुविधा का कार्य भी उनके हाथों में सौंप दिया जाय तो वह मजदूरो के विशेष रूप से विश्वास-भाजन बन सकते है ।

जिन कारखानो मे अधिक स्त्रियां काम करती है, वहाँ वे एक स्त्री जाबर के आधीन रहती हैं, जहाँ कम होती हैं, वे पुरुष जाबर के ही आधीन रहती है । कही-कहीं तो यह पुरुष और स्त्री जाबर, जिसे नायकिन, सरदारिन, तथा मुकादमिन भी कहते है, स्त्री-मजदूरनियो को अत्यन्त घृणित जीवन व्यतीत करने पर विवश करती है और उनका खूब ही शोषण करती हैं ।

यह सब बुराइयाँ तभी दूर हो सकती है कि जब सुशिक्षित, चरित्रवान तथा योग्य लेबर आफिसर प्रत्येक कारखाने में नियुक्त किये जावें और यदि कारखाने मे यथेष्ट सख्या में मजदूर स्त्रिया काम करती हों तो एक चरित्रवान और शिक्षित महिला उनकी सुख-सुविधा और आवश्यकताओं की देख-भाल करने के लिये रक्खी जावे, जो लेबर आफिसर की सहकारी हो ।

खेद की बात है कि भारत की अधिकाश मिलों ने इस ओर तनिक भी ध्यान नहीं दिया और आज भी स्थिति जैसी की तैसी है । हां, बम्बई तथा अन्य कुछ केन्द्रो मे "बदली प्रथा" में कुछ सुधार करने का प्रयत्न अवश्य किया गया है, जिससे कि जाबर बिलकुल मनमानी न कर सके;

परन्तु फिर भी "वदलियों" में से मजदूर भर्ती करने या काम देने का अधिकार तो जावर को ही होता है, इस कारण उनकी शक्ति बहुत कम नहीं हुई है।

वदली कंट्रोल पद्धति

यह पद्धति १९३५ मे सर्व प्रथम बम्बई मे अपनाई गई और फिर शोलापुर में भी मिलों ने इसे अपनाया। मिल मालिक संघ ने इस पद्धति को इस लिये अपनाया था कि "वदली" वाले मजदूरों की स्थिति मे सुधार हो और जावर की शक्ति घटे। हर एक मिल में जो स्थायी मजदूर गैरहाजिर होते हैं, उनके स्थान पर 'वदलियों' की जरूरत होती है। इस पद्धति के पहले "वदली" वाले मजदूर किसी एक मिल से बंधे नही थे, प्रति दिन वे मजदूरी की तलाश में मिलों में चक्कर लगाते रहते और जावर को घूस देकर नौकरी पाने की कोशिश करते थे। इससे जावर को रिश्वत लेने का खूब अवसर मिलता था। जावर किसी भी वदली वाले को बहुत दिनो काम नही करने देता था। इसका फल यह होता था कि हर एक वदली वाले को कुछ ही दिनो एक मिल में काम मिलता था। इससे जहां जावर की जेब गरम होती थी, वहां मिल और मजदूर दोनो को ही नुकसान पहुंचता था।

इस पद्धति के अनुसार प्रत्येक मिल अपने भिन्न-भिन्न विभागों की गैरहाजिरी का अनुमान लगा, एक संख्या निश्चित करती है और उतने ही वदली कार्ड बना कर प्रति मास उतने ही वदली वाले मजदूरों को दे दिये जाते हैं। प्रत्येक विभाग के लिये वदली वालों की संख्या निश्चित रहती है। प्रत्येक 'वदलीवाले' को प्रातः काल मिल में जाना पड़ता है, और उनमें से ही वे एवजी रक्खे जाते हैं। जब तक कार्ड वाले वदली होते हैं, तब तक नये वदली भर्ती नहीं किये जाते। जब कोई स्थायी जगह खाली होती है तो पुराने वदली को वह दी जाती है, और हर एक 'वदली' का नम्बर ऊंचा होता जाता है। इसी तरह स्थायी जगहें

पर 'बदलियो' मे से नम्बर वार नियुक्ति होती जाती है। जब प्रत्येक दिन 'बदली' काम की खोज में प्रातः काल आता है और काम नहीं होता तो उस विभाग का अध्यक्ष उसके कार्ड पर हस्ताक्षर कर देता है। यदि कोई 'बदली' हाजरी में अनियमित होता है या उसका काम ठीक नही होता तो उसका नाम काट दिया जाता है। इस प्रकार 'बदली' प्रथा से मजदूर को कुछ लाभ तो अवश्य हुआ है। जाबर की शक्ति कुछ कम हुई है। परन्तु बदलियो मे से नौकरी देना, पुराने बदलियो को स्थायी करना आदि काम जाबर ही करता है। और वह अब भी रिश्वत लेता है। आवश्यकता इस बात की है कि यह कार्य उसके हाथ से निकाल लिया जावे।

जाबर की शक्ति और प्रभाव तभी घट सकता है कि जब उसे मजदूरों को रखने और निकालने का अधिकार न रहे और यह अधिकार लेबर आफिसर को दे दिया जावे। बम्बई मे सूती कपडे का काम करने वाले मजदूरों की जाच के लिये जो लेबर कमेटी बिठाई गई थी, उसकी यह राय थी कि बम्बई, अहमदाबाद, तथा शोलापुर मे "लेबर ऐक्सचेंज" स्थापित की जावे, जो सब धंधो के लिये मजदूरो की भर्ती का काम करे।

अधिकांश साल भर चलने वाले कारखानो मे जाबर ही मजदूरो को भर्ती करता है और उसके साथ रिश्वत और शोषण अनिवार्य है। अब हम कुछ विशेष धधो के विषय मे लिखेगे, जिनकी अपनी विशेष समस्याये है।

आसाम के चाय के बाग

यह तो पहले ही कहा जा चुका है कि चाय के बागो मे मजदूरों की बहुत कमी रहती है। कारण यह है कि आसाम मे जनसंख्या कम है और वहाँ का जलवायु नम होने के कारण अन्य प्रान्त वालो के अनुकूल नही पडता। यही कारण था कि आसाम के बागो के मालिको ने एक कानून बनवा कर शर्तबद मजदूरों की प्रथा को जारी किया था। चाय के बग

अपने सरदारों को रुपया देकर बिहार, सयुक्तप्रान्त, उडीसा, उत्तरी सरकार तथा अन्य घने आबाद प्रान्तों में उन्हें भेजते थे और यह भोले-भाले ग्रामीणों को धोखा दे कर उन्हे तरह-तरह के प्रलोभन देकर भर्ती कर लेते थे और जब वह मजदूर जिला अधिकारी के सामने अगूठा लगा देता था तो फिर मानो उसने जीवन भर की दासता का पट्टा लिख दिया। सरदार उसे आसाम ले जाता था। मजदूर न तो कानूनन नौकरी छोड सकता था और जहाँ वह चाय के बागों मे रहता था, उसकी रात्रि को रखवाली की जाती थी कि जिससे कोई मजदूर भाग न जावे। यदि कोई मजदूर भाग जावे तो उसको पकडने और उस को सजा देने का अधिकार बाग के मैनेजर को दे दिया गया था। सच तो यह है कि मजदूर एक बार भर्ती होने पर क्रीतदास बन जाता था। और बहुत से तो वही मर जाते थे। गाँव के लोग इन भर्ती करने वालो को आरकाटी कहते थे और उनसे अत्यन्त घृणा करते थे। १९२६ में सरकार ने इस घृणित कानून को घोर आन्दोलन के उपरान्त रद्द कर दिया और एक नया कानून बनाया गया, जो उतना बुरा नही है।

आसाम और बंगाल दोआर के चाय के बागों की समस्या वास्तव मे है भी कठिन, क्योंकि मजदूरो को बिहार, संथाल परगना छोटा नाग-पुर, मध्यप्रान्त और उत्तरी सरकार के जिलों से भर्ती करना पडता है। इस कारण मजदूरों को लाने मे व्यय अधिक होता है और चाय के बागों मे स्त्री मजदूरों की बहुत जरूरत रहती है। इसी कारण सरदार लोग लड़कियों और विवाहित स्त्रियो को धोखा दे कर उनके नाम बदल कर उनको भगा लाते थे। यही कारण था कि चाय के बाग के मालिकों को कानून (workman s breach of Contract Act.) बनवाने की आवश्यकता हुई। यह कानून १८५९ मे बना और १९२६ मे घोर आन्दोलन के उपरान्त रद्द किया गया। १९२१ मे आसाम के चाय के बागों के मजदूरों मे घोर अशान्ति फैल गई। हजारो की संख्या में मजदूर चाय के बागो से भाग खड़े हुए। रेलों ने उन्हे टिकिट नही

दिया । पुलिस ने भागते हुए मजदूरो पर गोली चलाई, सैकडों मारे गये, हजारो को जेलों में ठूंस दिया गया । इसके उपरान्त एक कमेटी बिठाई गई, जिसकी सिफारिश के अनुसार वह घृणित कानून रद्द कर दिया गया ।

१६३३ में एक नया कानून बनाया गया, जिसके आधीन आसाम के चाय के बागों के लिए मजदूरो की भर्ती होती है। इस कानून के अन्तर्गत एक उच्च अधिकारी जिसे प्रवासी मजदूरो का कन्ट्रोलर कहते है, नियुक्त किया जाता है, उसे मजदूरो के हितो की रक्षा के पूर्ण अधिकार प्राप्त है । इस कानून के अनुसार प्रत्येक मजदूर और उसके परिवार को बाग के खर्च पर तीन वर्ष के उपरान्त अपने गांव लौटने का अधिकार मिल जाता है । यदि मजदूर का स्वास्थ्य अच्छा न रहे या अन्य कोई विशेष कारण हो तो तीन साल का समय कम भी किया जा सकता है ।

बगाल, बिहार, उडीसा, मध्यप्रान्त, मद्रास तथा संयुक्तप्रान्त के उन जिलो को, जिनसे मजदूरो की भर्ती होती हैं, "नियंत्रित प्रवास क्षेत्र" घोषित कर दिये गये है । जब किसी चाय के बाग का सरदार आसाम या बगाल से इन क्षेत्रों में मजदूरों की भर्ती के लिए चलता है तो उसे प्रवासी मजदूरो के कंट्रोलर से लाइसैंस लेना पडता है । उस लाइसैंस के बिना वह उन जिलो मे भर्ती का काम नहीं कर सकता । जब सरदार उन जिलो मे पहुँचता है तो वह वहां के जिला अधिकारियो को अपना लाइसैंस दिखलाता है । तब कहीं वह क्षेत्र में मजदूरो की भर्ती कर सकता है । जो मजदूर आसाम या बंगाल के बागो मे जाना चाहता है, वह अधिकारियों के सामने उपस्थित किया जाता है और इस बात की जांच की जाती है कि मजदूर पर अनुचित दबाव तो नही डाला गया है, और उसको सारी परिस्थिति समझा दी गई है । यहां से वह जब आसाम जाता है तो उसका नाम इत्यादि प्रवासी मजदूरों के कंट्रोलर के दफ्तर मे दर्ज कर लिया जाता

है। यदि उसके साथ कोई धोखा किया गया हो तो वह कंट्रोलर से शिकायत कर सकता है। यदि भर्ती करने में कानूनों के विरुद्ध कोई कार्य किया गया हो तो उन सरदारों का लाइसेंस जब्त किया जा सकता है।

दक्षिण के काफी, रबर तथा कुनैन के बागों में, जो मजदूरों की भर्ती होती है, वह समीपवर्ती प्रदेशों से ही आते हैं। बाग के मालिकों का एक संगठन है, जो इन बागों के लिए मजदूरों की भर्ती करता है। इसकी शाखे भिन्न-भिन्न जिलों में होती है और यह भर्ती करने के लिए एजेन्ट रखते है, जिन्हें 'कनगनी' कहते है। मजदूरों को बागों में काम करने के लिए उत्साहित करने के उद्देश्य से उन्हे पेशगी रुपया दिया जाता है, जिसमे से अधिकांश 'कनगनी' की जेब मे ही चला जाता है। १९२९ तक दक्षिण मे भी एक कानून लागू था, जिसके आधीन मजदूर नौकरी छोड़ कर जा नही सकता था और भागने पर उसे कठोर दण्ड दिया जाता था।

एक प्रकार से वह दासवत् जीवन व्यतीत करता था। १९२९ मे यह कानून भी रद्द कर दिया गया। अब मजदूर इच्छा न रहने पर नौकरी छोड़ सकता है। दक्षिण के बागों मे काम करने वाला मजदूर प्रत्येक वर्ष कुछ समय के लिए अपने गांवों को लौटता है। यद्यपि १९२९ में वह घृणित कानून रद्द कर दिया गया, किन्तु फिर भी अभी पूर्ण रूप से भर्ती करने के दोष समाप्त नहीं हुए है।

खानो मे मजदूरो की भर्ती

भारतीय कोयले की खानों मे अधिकतर मजदूर ठेकेदारो द्वारा भर्ती किये जाते है। ठेकेदार को एक निश्चित संख्या में मजदूर लाने को कहा जाता है और खान फिर उन मजदूरों को नौकर रख लेती है। लेकिन एक दूसरी भी प्रथा है जो कि कोयले की खानों मे बहुत अधिक प्रचलित है। ठेकेदार केवल मजदूरों को भर्ती करने का ही जिम्मेदार नहीं

होता, वह कोयले की खुदाई का ठेका लेता है और जितना कोयला खुदवाता है, उसी के हिसाब से उसे मजदूरी दे दी जाती है। लगभग ४० से ७० प्रतिशत मजदूर इस प्रकार के ठेकेदारों के आधीन कार्य करते है। खान का मैनेजर प्रति टन खुदाई और डिब्बों मे कोयले की लदाई का एक रेट निश्चित करता है। ठेकेदार जितना कोयला खुदवा कर भरवा देगा उसी हिसाब से उसे खुदाई दे दी जावेगी। इस प्रकार मजदूरों को ठेकेदार क्या मजदूरी देता है, इससे खान को कोई मतलब नहीं। फल यह होता है कि मजदूर का खूब ही शोषण होता है। शाही मजदूर कमीशन ने इस प्रथा का घोर विरोध किया था। कमीशन की राय थी कि खानो मे मजदूरों की सीधी भर्ती होनी चाहिए, इस प्रथा का अन्त कर देना चाहिए किन्तु अभी तक कतिपय खानों को छोड और सब खानों में कोयले की खुदाई का ठेकेदार पहले की तरह ही जमा हुआ है।

ठेकेदारो के अतिरिक्त मजदूरो की भर्ती की कुछ और भी प्रथायें है। खान का सरदार मजदूरों की एक टोली भरती करता है और वह उसकी देख रेख मे ही काम करते है। यह सरदार ही मैनेजर के प्रति उनके काम का जिम्मेदार होता है। एक तीसरी प्रथा है, जिसे "सरकारी" कहते है। मैनेजर अपने आदमियों को मजदूरो की भरती के लिए भेजता है और मजदूरों की सीधी भरती करता है। शाही मजदूर कमीशन की यह राय थी कि खान मजदूरों की भरती ठेकेदारों के द्वारा न कर के सीधी की जावे, किन्तु अभी तक इस दिशा मे अधिक सुधार नही हुआ है। और अधिकतर मजदूर सीधे खान के अधिकारियों द्वारा भरती न किये जा कर ठेकेदारो द्वारा भरती किये जाते है। यह किसी भी प्रकार वांछनीय नही है। इसमे जितनी जल्दी सुधार हो उतना ही उत्तम है।

समुद्री मजदूर

जहाजो पर काम करने तथा माल ढोने के लिए बंदरगाहो पर

मजदूरों की जरूरत होती है। दुर्भाग्यवश भारत का समुद्री यातायात सब विदेशी जहाजी कंपनियों और विशेष कर ब्रिटिश-कम्पनियों के हाथ मे है; वे अपने लिए मजदूर भरती करने का काम सरकारी लायसैंस प्राप्त किये हुए दलालों को सुपुर्द कर देते थे। यह दलाल ही जहाजी कंपनियों के लिए मजदूरों की भरती करते थे। समुद्री मजदूरों की संख्या इतनी अधिक होती है कि कभी भी साधारणतया एक तिहाई से अधिक मजदूर काम नही पाते। इस कारण मजदूरों को नौकरी पाने के लिए खूब रिश्वत देनी पडती थी। १९२२ में भारत सरकार ने इस समस्या की जाँच के लिए "समुद्री मजदूर भरती कमेटी" बैठाई। पूरी जांच करने के उपरान्त कमेटी ने अपना मत प्रगट किया कि मजदूरों की भरती करने का यह ढंग बहुत ही दोषपूर्ण है, और इससे रिश्वत वेहद बढती है। कमेटी ने यह सिफारिश की कि समुद्री मजदूरों को भरती करने का एक दफ्तर स्थापित किया जावे और उसका अधिकारी नियुक्त किया जावे, जो मजदूरों के लिए स्थायी नौकरी दिलाने और रिश्वत से बचाने का प्रयत्न करे।

भारत सरकार ने १९२९ मे आज्ञा निकाल कर लाइसैंस प्राप्त दलालों के द्वारा ऊंचे दर्जे के मजदूरों का भरती करना बिलकुल रोक दिया। अब वे या तो सीधे जहाजी कम्पनियों द्वारा भरती किये जाते है या सरकारी अधिकारी द्वारा, जहाजी दफ्तर से। यह प्रयत्न किया जाता है कि जो मजदूर सब से अधिक समय से वेकार रहा हो, उसको पहले स्थान दिया जावे। जहां जहाजी कम्पनियां अपने मज़दूरों की रजिस्ट्री का प्रबन्ध नही कर पाती है, वहां जहाजी दफ्तर मजदूरों की भरती करता है। दफ्तर मे ऊँचे दर्जे के मजदूरों के नाम रजिस्टर मे लिख लिए जाते है और जहाजो के मालिक या उनके एजेन्ट उन लोगों में से मजदूर छांट लेते है। यद्यपि कोई नियम और प्रतिबन्ध तो नही हे, परन्तु प्रयत्न यह किया जाता हे कि जो अधिक लम्बे समय से वेकार हो, उसे पहले जगह दी जावे।

यद्यपि स्थिति मे कुछ सुधार अवश्य हुआ है, किन्तु फिर भी रिश्वत का बाजार जैसा का तैसा है। कोई मजदूर बिना रिश्वत दिये काम नहीं

पा सकता। इसका मुख्य कारण यह है कि समुद्री मजदूरों में वेकारी बेहद रहती है। आवश्यकता इस बात की है कि लाइसैंस प्राप्त दलालों के द्वारा भर्ती बिलकुल बंद कर दी जावे। जहाजी दफ्तर में सब मजदूरो की भर्ती हो और जहाजी कंपनियों को नियमानुसार उन्ही मजदूरो में से मजदूर लेने पर विवश किया जावे। आवश्यकता से जो अधिक मजदूर समुद्री काम में लगे है, उन्हे दूसरे धन्धो में लगाने का प्रयत्न किया जाय।

रेलवे

रेलें भी बहुत बडी संख्या में मजदूरो को भर्ती करती है। रेलें तीन विभागो मे मजदूरो की भर्ती करती है (१) इंजिनियरिंग (२) यातायात तथा व्यापार (३) वर्कशाप। यहां भी रिश्वत देकर ही किसी को जगह मिलती है। साथ ही रेलों मे जाति तथा रंग भेद भी बहुत अधिक है। एक ही काम के लिये भारतीय को कम वेतन दिया जाता है और ऐंग्लों इंडियन को अधिक। आज जबकि सभी रेल्वे लाइनें सरकार की है, तब यह एकक्षण के लिये भी सहन नही किया जाना चाहिए। साथ ही भर्ती करने का काम, इन्स्पेक्टरो, स्टेशन मास्टरों, चार्जमैनो तथा अन्य नीचे कर्मचारियों के अधिकार में न दे कर उसके लिए एक पृथक विभाग स्थापित किया जाना चाहिए जो ऐसे व्यक्तियों का एक रजिस्टर रक्खे कि जो रेलवे के भिन्न-भिन्न विभागो के लिए प्रार्थी हों और उनमे से जो भी अधिक पुराना हो उसको पहले स्थान दिया जावे। जब भर्ती करने का अधिकार स्थानीय कर्मचारियो को होगा, तब तक रिश्वत को समाप्त नही किया जा सकता।

सरकार, डिस्ट्रिक्ट बोर्ड, तथा म्युनिस्पैलटी इमारते, सडकें, पुल तथा कार्यों के लिए बहुत बडी सख्या मे मजदूर रखते है किन्तु इन कार्यों के लिये ठेका दिया जाता है। ठेकेदार मजदूरों को नौकरी देता है। इन मजदूरो की दशा अत्यन्त दयनीय होती है। उन्हे बहुत अधिक कार्य करना

पड़ता है। उनसे १२ घण्टे काम लिया जाता है और मजदूरी बहुत कम दी जाती है। यह तो असम्भव है कि सरकार या डिस्ट्रिक्टबोर्ड इन मजदूरों को भर्ती करें परन्तु ठेका देते समय यह शर्त रक्खी जानी चाहिए कि ठेकेदार को अपने मजदूरों को सरकार द्वारा निर्धारित मजदूरी देनी होगी। साथ ही १२ वर्ष से कम आयु के बालकों को मजदूर नही रक्खा जावेगा। शाही मजदूर कमीशन ने इस आशय की सिफारिश की थी किन्तु सरकार ने इस ओर ध्यान नही दिया। जब तक नियम बना कर ठेकेदारों को एक न्यूनतम मजदूरी देने पर विवश नहीं किया जावेगा, तब तक इन मजदूरों की दशा नही सुधर सकती।

जो मौसमी कारखाने है, जैसे शक्कर, कपास, चावल, तथा तेल इत्यादि, उनमे अधिकतर निकटवर्ती गांवों के खेत मजदूर और किसान काम करते हैं। यद्यपि इन कारखानों में भरती होते समय रिश्वत नहीं देनी पडती किन्तु इनकी मजदूरी बहुत कम होती है।

इन कारखानों के अतिरिक्त कुछ ऐसे भी धन्धे है, जिनमें फेक्टरी कानून लागू नहीं होता; जैसे बीडी, दरी, गलीचे के कारखाने। इनमें छोटे-छोटे बच्चों, स्त्रियों और पुरुषों को बहुत लम्बे समय तक काम करना पडता है और उनको बहुत थोडा वेतन मिलता है। इन कारखानों मे कहीं-कही छोटे लडकों को मां-बाप कुछ रुपया पेशगी लेकर गिरवी रख देते है। इसका अर्थ यह है कि वह लडका अपने मालिक का काम नही छोड सकता। यद्यपि अब कानून इसके विरुद्ध है, किन्तु फिर भी यह प्रथा कहीं-कही ज्यों की त्यों बनी है।

सच तो यह है कि मजदूरो की भरती से सम्बन्धित जो बुराइयां हम देखते है, उनका मूल कारण तो यह है कि गांवो में काम की कमी है, धन्धे वहां नही है और खेती पर आवश्यकता से अधिक लोग अवलम्बित है। साथ ही देश की सामाजिक स्थिति और मजदूरो की अशिक्षा भी इसके मुख्य कारण हैं।

मजदूरों की भरती के सम्बन्ध मे दो और भी महत्वपूर्ण बातें हैं

जिनकी ओर हमे ध्यान देना आवश्यक है। पहली बात तो यह है कि कारखानों मे बराबर स्थान खाली होते रहते है, इस कारण आवश्यकता से अधिक मजदूर औद्योगिक केन्द्रों मे इस लालच से पहुँचते हैं कि कुछ ले-दे कर काम तो मिल ही जावेगा। अतएव आवश्यकता इस बात की है कि मजदूरो की भरती का इस प्रकार नियंत्रण किया जावे कि आवश्यकता से अधिक मजदूर औद्योगिक केन्द्रो मे न पहुँच सके। दूसरी बात यह है कि अधिकतर पुरुष ही औद्योगिक केन्द्रो में जाते हैं, स्त्रिया गावो में ही रह जाती है। इसका फल यह होता है कि औद्योगिक केन्द्रो मे पुरुषो का अनुपात स्त्रियों की तुलना मे अधिक होता है और इससे व्यभिचार तथा नैतिक पतन का रास्ता खुलता है। अतएव इस बात की आवश्यकता भी है कि औद्योगिक केन्द्रों में दम्पत्तियों को प्रवास करने के लिए उत्साहित किया जावे। यह तभी हो सकता है, जब केन्द्रो मे स्त्रियो के योग्य कार्य वहा मिल सके और मजदूरो की भरती का नियंत्रण किया जावे। यही नहीं भविष्य मे उद्योग धन्धो की उन्नति के लिए यह भी आवश्यक है कि जो मजदूर केन्द्रो मे आवे, उनको भरती करते समय, उनकी कुशलता और कार्य-शक्ति का ध्यान रक्खा जावे। यह तभी हो सकता है कि जब मजदूरों की भरती पर सार्वजनिक नियन्त्रण हो। इस सम्बन्ध मे हम बेकारी के परिच्छेद मे लिखेंगे।

चतुर्थ परिच्छेद

कारखानों में मनुष्यों का जीवन और स्वास्थ्य

कारखानो मे मजदूर यथेष्ट समय व्यतीत करता है, इसलिए कारखानों के जीवन का उसके स्वास्थ्य और उसकी कार्यशक्ति पर भारी प्रभाव पड़ता है। इस दृष्टि से हमे भारतीय कारखानों के जीवन का अध्ययन करना आवश्यक है।

धूल और गदगी

कुछ कारखानों मे धूल और गंदगी इतनी अधिक होती है कि मज-दूर का स्वास्थ्य शीघ्र नष्ट हो जाता है। कुछ कारखाने तो ऐसे होते है कि जिनमे होने वाली क्रियाओ से ही गर्द निकलती रहती है और यदि उसे यंत्रों द्वारा कम करने का प्रयत्न न किया जावे तो उस से मजदूरों को बहुत हानि पहुँचती है। उदाहरण के लिये यदि किसी कपास के पेच या सूती कपडे के मिल मे जाना हो तो जहा रुई को साफ करने, धुनने और अन्य क्रियाये होती है, वहाँ रुई के बहुत बारीक रेशे और धूल सारे वायुमण्डल मे भरे रहते है। इसी तरह कागज, चमडा, लकडी तथा अन्य कारखानों मे भी ऐसी बहुत सी क्रियायें होती है कि जिनसे बहुत अधिक धूल और गंदगी उत्पन्न होती है। यदि मिल मालिक ऐसे स्थानों पर धूल और गदगी सोख लेने वाले यंत्र लगा दे या बिजली के पंखों से हवा मे तेजी उत्पन्न कर दे तो इस से हानि कम हो सकती है और मजदूरों को सुविधा हो सकती है। आवश्यकता इस बात की है कि प्रत्येक कारखाना धूल और गंदगी को सोखने वाले यंत्र तथा बिजली के पंखे लगावे। इस से एक लाभ तो यह होगा कि मजदूर क्षयरोग इत्यादि रोगों से बचेगे, उनका स्वास्थ्य नहीं गिरेगा और मजदूरों की कार्य-शक्ति बढेगी, मिल की उत्पत्ति मे वृद्धि होगी और मजदूर को सुख पहुँचेगा। खेद की बात है कि मिल मालिक इस ओर बहुत कम ध्यान देते है और मजदूर सभाये भी जो मजदूरी बढवाना ही अपना कर्तव्य मानती है, इस ओर तनिक भी ध्यान नही देती। रुई, जूट, ऊन तथा अन्य धन्धों मे जहां धूल और गंदगी उत्पन्न होती है, फैक्टरी कानून के अनुसार यदि कारखानो का इन्सपेक्टर आवश्यक समझे तो मिल मालिकों को आज्ञा दे सकता है कि वे धूल और गदगी कम करने के लिए यन्त्र लगावे। किन्तु अधिकांश इन्सपेक्टर अपने कर्तव्य की अव-हेलना करते है और मिल मैनेजर को इस सम्बन्ध में कोई आज्ञा नहीं

देते। आवश्यकता इस बात की है कि मजदूरों में कार्य करने वाले इस ओर ध्यान दें और कारखानो के अन्दर धूल और गंदगी को कम करने का आन्दोलन करें। यही नही कारखानो की साधारण स्वच्छता पर भी विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। दीवारें तथा फर्श को बराबर साफ किया जाना चाहिए और प्रति वर्ष उसकी चूने से पुताई होनी चाहिए। फैक्टरी कानून मे यह बात आ जानी चाहिए कि प्रत्येक कारखाना प्रति वर्ष साफ किया जावे।

सफाई

फैक्टरी कानून के अनुसार प्रत्येक कारखाने में मजदूरो की संख्या के अनुसार शौचगृह होना चाहिए। फिर भी कारखानों मे शौचगृहो की बहुत कमी होती है, और जो भी शौचगृह होते है उनकी व्यवस्था बहुत ही खराब होती है। वे इतने गदे रहते हैं कि गांव से आने वाला मजदूर उन गंदे शौचगृहों का उपयोग करना पसंद नहीं करता। मिल मालिक सदैव यह कहते है कि मजदूर, शौचगृह इत्यादि सुविधाओं का उपयोग नही करते। सच तो यह है कि वे इतने गन्दे होते है कि उनका उपयोग गांव से आने वाला मजदूर नहीं कर सकता। आवश्यकता इस बात की है कि जहां पानी की सुविधा हो वहां प्रत्येक मिल "सैप्टिक टैंक" बनावे। बंगाल की जूट मिलों ने इसका प्रयोग किया है और मजदूर उनका खूब उपयोग करते है। जहां यह सम्भव न हो वहां भी यथेष्ट स्वच्छ शौचगृह होना चाहिए और उनकी उचित व्यवस्था होनी चाहिए।

गरमी

भारतवर्ष गरम देश है। गरमी मे और बरसात में यहां इतनी भीषण गरमी पड़ती है कि मनुष्य मेहनत से घबड़ाता है। उसको बहुत थकान प्रतीत होती है। फिर कारखानों की तो कुछ न पूछिये। वहां तो बेहद

गरमी रहती है और दम घुटता है। यहां तक कि गरमियों मे फैक्टरी के बाहर हवा कम गरम होती है और अन्दर अधिक गरम होती है। मिल मालिक कारखाने के अन्दर गरमी कम करने का तनिक भी प्रयत्न नहीं करते। यदि कारखानों के अन्दर गरमी कम रहे तो मजदूर के कष्टों मे कमी हो सकती है। यही नहीं कोई-कोई कारखाने ऐसे बने होते है कि जाडों मे वहां यथेष्ट धूप भी नहीं आती। फैक्टरी कानून के अनुसार जिन कारखानो (कपडे के कारखानों) में पानी की भाप का उपयोग कपडा बुनने मे होता है, वहां तो कानून मिल मालिक को कारखानों की गरमी कम करने के लिए विवश कर सकता है। अन्य कारखानों मे कानून मिल मालिकों को कारखाने के तापक्रम (गरमी) को कम करने के लिए विवश नहीं कर सकता। सूती कपडे के कारखानो मे जहां भाप से सूत को नम किया जाता है वहां भी यदि फैक्टरी इन्स्पेक्टर समझे कि भाप से गरमी इतनी अधिक हो जाती है कि मजदूर को उस से घोर कष्ट होता है और उसके स्वास्थ्य पर इसका बुरा प्रभाव पडेगा, तब वह फैक्टरी मैनेजर को आज्ञा दे सकता है कि वह कारखाने को ठंडा रखने वाले यन्त्रो को लगावे या अन्य उपाय से कारखाने को ठंडा रक्खे। यदि छत को चूने से पोता जावे, छत पर नलों द्वारा बराबर पानी बरसाया जावे और अन्दर बिजली के पंखों की सुविधा हो तो गरमियों मे फैक्टरी के अन्दर काम करना उतना कष्टसाध्य प्रतीत न हो; किन्तु अधिकांश कारखानों मे इस ओर तनिक भी ध्यान नही दिया जाता। फैक्टरियों के अन्दर ऐसी भीषण गरमी होती है कि मजदूर पसीने से शिथिल हो जाता है और जिन कारखानों में भाप का प्रयोग होता है वहां तो मजदूर बेहोश तक हो जाते है। बहुत थोडे व्यय से कारखानों के अन्दर की गरमी को कम किया जा सकता है, किन्तु मिल मालिक मजदूरों की इस सुविधा की ओर तनिक भी ध्यान नही देते। यदि मिल मालिक इस ओर तनिक ध्यान दे तो केवल मजदूरों को ही सुख और सुविधा न मिले; वरन् कारखानों की उत्पत्ति भी

बढ जावे, क्योंकि उस दशा में मजदूर मन लगा कर काम कर सकेंगे। किन्तु मिल मालिकों को तो अपने हित की बात भी समझ नहीं पडती। अस्तु आवश्यकता इस बात की है कि कानून बना कर मिल मालिकों को विवश किया जावे कि वे कारखाने को ठंडा रक्खें। कानून द्वारा फैक्टरी के अन्दर का तापक्रम अधिक से अधिक क्या हो यह निर्धारित कर दिया जावे और यदि फैक्टरी के अन्दर का तापक्रम उससे अधिक हो तो यह जुर्म माना जावे। तापक्रम निर्धारित करते समय इस बात का ध्यान रक्खा जावे कि जितनी गरमी मजदूर बिना कष्ट के सहन कर सके और जो उनके स्वास्थ्य के लिए अहितकर न हो, उससे अधिक तापक्रम निर्धारित न किया जावे। जब तक इस प्रकार का कानून नहीं बन जाता, तब तक मजदूरों का यह कष्ट दूर नहीं हो सकता। जिन कारखानों में भाप का उपयोग होता है वहा तो कानून बना कर शीतकरण यंत्र (Cooling Plant) लगाने का प्रबन्ध होना ही चाहिए।

रक्षा

यह तो सर्वमान्य बात है कि जहां बिजली या भाप से यन्त्र चलते हैं, वहा काम करने में मजदूर को जोखिम रहती है। आवश्यकता इस बात की है कि मशीनों की ठीक तरह से घेराबन्दी (fencing) की जावे कि जिस से काम करने वाले के लिए खतरा कम हो। यही नहीं दो मशीनों के बीच मे यथेष्ट स्थान होना चाहिए। अधिक घिच पिच होने से भी दुर्घटनाएँ होने की सम्भावना रहती है। किन्तु खेद की बात है कि मिल मालिक अपने इस प्रथम कर्तव्य की ओर भी ध्यान नहीं देते। केवल खतरनाक मशीनों की ही कहीं कहीं घेराबन्दी देखने को मिलती है और दो मशीनों के बीच मे बहुत कम स्थान रहता है। इसका परिणाम यह हुआ है कि पिछले वर्षों मे भारतीय कारखानों में होने वाली दुर्घटनाओं की संख्या मे वृद्धि हुई है। यह चिन्ता की बात है और इस ओर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। यद्यपि मिल मालिक और

फैक्टरी इन्स्पेक्टर इस वृद्धि का कारण यह बतलाते है कि पहले बहुतसी दुर्घटनाओं के बारे मे ठीक ठीक पता नही चलता था, किन्तु अब अधिकांश दुर्घटनाये रेकार्ड पर ली जाती है। यह ठीक है कि पहले मिल मालिक अधिकांश दुर्घटनाओं का किसी को पता ही नहीं लगने देते थे; और न उनका कोई लेखा ही रखते थे। परन्तु अब उनका लेखा रखा जाता है। फिर भी आंकडों से यह सिद्ध होता है कि दुर्घटनाओं की संख्या और अनुपात मे भी पहले से वृद्धि हुई है।

दुर्घटनाओं को कम करने के लिए यह नितांत आवश्यक है कि भारत मे "रक्षा पहले" आन्दोलन चलाया जावे। जिस प्रकार जापान इत्यादि देशों मे इस आन्दोलन के अन्तर्गत दुर्घटना के समय अपनी रक्षा किस प्रकार करनी चाहिए, चोट लगने पर प्रारम्भिक चिकित्सा और सुश्रुषा कैसी करनी चाहिए यह सिखाया जाता है, इसी प्रकार भारतवर्ष मे भी 'रक्षा पहले' दिवस या सप्ताह मनाकर कारखानों के मजदूरों को दुर्घटनाओं से बचने की शिक्षा देनी चाहिए। यह एक महत्वपूर्ण कार्य है, जिस पर मजदूर सभाओं को विशेष ध्यान देना चाहिए। वे मिल मालिकों पर यह दबाव डाले कि मजदूरों को यह शिक्षा अवश्य देनी चाहिए। खेद है कि मजदूरों के संगठन इस ओर तनिक भी ध्यान नही देते।

कानून के अनुसार प्रत्येक कारखाने मे प्रारंभिक चिकित्सा का सामान रहना आवश्यक है। किन्तु केवल इतना ही आवश्यक नही है, आवश्यकता इस बात की है कि प्रत्येक कारखाने मे कुछ लोग ऐसे हो, जो कि प्रारंभिक चिकित्सा कर सकें। जिस कारखाने में २५० मजदूरों से अधिक हों, वहां तो एक कम्पाउन्डर और जहां ५०० से अधिक हों, वहां एक डाक्टर सदैव कारखाने मे रहे जिससे कि आवश्यकता पडने पर उसकी सहायता ली जा सके।

इमारते

कारखाने की इमारत भी मजदूरो के लिए एक विशेष खतरे का कारण

बन सकती है। कारण यह है कि जहां यंत्र, भाप और बिजली से चलते है, वहां इमारतों पर बहुत भार पडता है और फैक्टरियों मे कई मंजिल होने के कारण इमारत के गिर जाने की संभावना बनी रहती है। इस लिये आवश्यकता इस बात की है कि कारखानो की इमारते बहुत मजबूत और टिकाऊ हों। इमारतों के केवल मजबूत और सुदृढ होने से ही काम नही चलेगा। इमारतें ऐसी होनी चाहिये कि जिनमें धूप, हवा और रोशनी का हर मौसम मे खूब प्रवेश हो सके, जिसमें मजदूर को आराम मिले और उसके स्वास्थ्य पर अच्छा प्रभाव पडे। अभी तक इमारतों के सम्बन्ध मे कानून ने मजदूरो की रक्षा का पूरा प्रबन्ध नहीं किया है। फैक्टरी कानून के अनुसार फैक्टरी इन्सपेक्टर को यह अधिकार है कि यदि उसकी सम्मति में फैक्टरी का कोई भाग जर्जर और खतरनाक हो गया हो तो वह मालिक को आज्ञा दे कि वह उसको गिरवा दे, या मरम्मत करवावे। फैक्टरी इन्सपेक्टर इमारतों सम्बन्धी कोई ज्ञान तो रखते नहीं, अतएव वे इस ओर अधिक ध्यान नहीं देते और न मिल मालिकों पर ही उनकी बात का प्रभाव पडता है।

आवश्यकता इस बात की है कि इमारतों की जांच प्रतिवर्ष विशेष इन्जीनियरों से करवाई जावे, तभी यह कार्य अच्छी तरह से हो सकता है। फैक्टरी इन्सपेक्टरो को भी यह अधिकार रहे और मजदूर नेता भी इस सम्बन्ध मे फैक्टरी इन्सपेक्टरो और इन्जीनियरों को समय समय पर लिखा करें। केवल इमारत के कमजोर होने से ही मजदूरो को खतरा नही है, यदि उसमें हवा, धूप या रोशनी की कमी हो, तब भी वह मजदूरो के स्वास्थ्य के लिये खतरनाक सिद्ध हो सकती है।

वार्षिक जांच के अतिरिक्त जब कारखाना स्थापित हो और इमारत बने, उस समय प्रांतीय सरकार को उस पर नियन्त्रण रखना चाहिए। आवश्यकता इस बात की है कि कारखानों के मालिकों को फैक्टरी की इमारत का नक्शा पहले स्वीकृत करवा लेना चाहिये, तब इमारत बनवानी चाहिए। इसके लिये सरकार एक विशेष कर्मचारी नियुक्त करे,

जो यह देखे कि इमारत मजदूरों के आराम, स्वास्थ्य और सुरक्षा की दृष्टि से ठीक है। इस समय तो कानून में केवल इतना विधान है कि जब इमारत बन जावे तो कारखाना चलने से पहले मिल मालिक को फैक्टरी इन्स्पेक्टर से एक सर्टिफिकेट ले लेना पड़ता हे कि इमारत कारखाने के लिये ठीक है। वस्तुतः आज भी भारतीय कारखानों की इमारतें बहुत ही रद्दी और अस्वस्थकर होती है।

भारतीय मिल मालिक मजदूरों की सुख सुविधा की ओर से ऐसा उदासीन रहता है कि जबतक उस पर कानून का दबाव न डाला जावे वह मजदूरों के लिए कुछ करना ही नही चाहता।

भोजन

यह तो पहले ही कहा जा चुका है कि भारतीय मजदूर वस्तुतः ग्रामीण होता है। वह प्रातःकाल कारखाने के भोंपू के बजते ही मैले कपडे में रात्रि की रोटी बांध कर फैक्टरी के फाटक की ओर दौड़ता है; और अपने काम पर जुट जाता है। दोपहर को जब छुट्टी होती है तब वह अपनी रोटी खाता हे। कहीं कहीं तो उसे रोटी खाने के लिए आराम की जगह भी नहीं मिलती। वह मशीन के पास ही बैठ कर रोटी खाता हे। आवश्यकता इस बात की है कि प्रत्येक मिल के कम्पाउण्ड में बरसात के दिनों के लिए टीन या सीमेंट के शैड [बरामदे] हों, और गरमियो के लिए सायेदार वृक्षों की पंक्ति लगाई जावे, जहां बैठकर मजदूर भोजन कर सके। किन्तु कानून मिल मालिक को यह सुविधा प्रदान करने के लिए विवश नही करता। इसी कारण मिल मालिक इस ओर ध्यान नही देते।

भोजन के संबंध में एक बात ध्यान देने योग्य है, मजदूर जो रोटी ले जाता है वह रात्रि की बनी होती है; और वह दूसरे दिन दोपहर को बासी रोटी खाता है। वर्षों तक लगातार यही क्रम चलते रहने से उसका स्वास्थ्य नष्ट हो जाता है। इस ओर अभी तक किसी का ध्यान नहीं,

गया है। जो कारखाने बडे बडे औद्योगिक केन्द्रो में नहीं है, और जहा मजदूर पास ही रहता है, वहा तो यह सम्भव है कि मजदूर की पत्नी या घर का कोई व्यक्ति दोपहर को भोजन दे जावे। अन्यथा अधिकाश कारखानों के मजदूर बासी रोटी ही खाते है। अतएव आवश्यकता इस बात की है कि दोपहर की छुट्टी इतनी लम्बी हो कि यदि मजदूर चाहे तो रोटी बना ले। इसमे कोई सन्देह नही कि हिन्दू मजदूरों में जाति-पाँति की झंझटो के कारण मिल-मालिको को उन्हे स्थान देने मे कुछ असुविधा हो सकती है, परन्तु यह है आवश्यक। यही नही, प्रत्येक कारखाने मे एक सस्ता भोजनगृह भी होना चाहिए कि जहां उचित मूल्य पर रोटी, दाल, भात इत्यादि मिल सके। मिल इस प्रकार के भोजनगृहो को चलावे। भोजन की उचित व्यवस्था होना अत्यन्त आवश्यक है।

जल

भोजन के उपरान्त जल भी मजदूर के लिए नितान्त आवश्यक है। फैक्टरी एक्ट के अनुसार मिल मालिकों को पीने के लिए यथेष्ट जल देना चाहिए। कानून होते हुए भी अधिकांश मिलो में मजदूरो को स्वच्छ, मीठा और ठडा जल नही मिलता। यदि पानी का प्रबन्ध भी किया जाता है तो वहां इतनी भीड होती है कि बहुत सा समय व्यर्थ नष्ट हो जाता है। होना यह चाहिए कि बहुत सी नल की टोटिया एक विशाल सीमेंट या लोहे के जल-कुण्ड में लगा दी जावे, और उसमे कुएँ का शीतल, स्वच्छ जल बिजली के पंप से गिरता रहे। इससे पानी धूप से गरम भी नही होगा, और प्रत्येक मजदूर को पीने के लिए जल मि[illegible] जावेगा।

पीने के लिए जल की व्यवस्था तो कानून के अनुसार आवश्यक है इसलिए कारखानो मे उसका तो कुछ प्रबन्ध होता भी है, परन्तु नहाने और वस्त्र धोने के लिए तो मिलो मे जल की कोई व्यवस्था ही नहीं

होती। यह तो मानी हुई बात है कि जब मजदूर प्रातःकाल कारखाने आता है, और सायकाल घर पहुँचता है, तो वह स्नान तो घर पर कर ही नही सकता। यदि कोई करना भी चाहे, तो बडे-बडे शहरो मे, जहां मजदूरों की बस्तियां होती है, वहा सार्वजनिक पप इतने कम होते हैं, और जल लेने वालों की इतनी अधिक भीड रहती है कि काम के दिनों मे तो क्या छुट्टी के दिन भी वहां कपडा धोना और नहाना कठिन हो जाता है। शरीर और वस्त्रों को भी साफ न कर सकने का परिणाम भी मजदूर के स्वास्थ्य के लिए बुरा होता है।

आवश्यकता इस बात की है कि कानून बनाकर मिल-मालिकों को मजदूरों के लिए स्नान गृहों की व्यवस्था करने पर विवश किया जावे। प्रत्येक मिल में मजदूरो की संख्या के अनुसार स्नान गृह हों और कारखाना उन्हें प्रति मास कपडा धोने के लिए साबुन मुफ्त दे। इससे यह लाभ होगा कि मजदूर गंदे नहीं रहेंगे।

शौचगृह

फैक्टरी एक्ट के अनुसार प्रत्येक मिल मे शौचगृहों की व्यवस्था होना आवश्यक है। किन्तु शौचगृह इतने गंदे और उनको साफ रखने का प्रबन्ध इतना खराब होता है कि गांव से आया हुआ मजदूर उनका बहुत कम उपयोग करता है। अतएव इस बात की आवश्यकता है कि शौचगृह अच्छे हों, और उनकी सफाई का उचित प्रबन्ध हो। मजदूर-सभाओं और मजदूरों में कार्य करने वालों का भी यह कर्तव्य है कि वे मिल-मालिकों का ध्यान इन त्रुटियों की ओर दिलाया करें। यदि वे इस ओर ध्यान दें, तो यह छोटे-छोटे सुधार तो आसानी से हो सकते हैं। किन्तु मजदूरों में कार्य करने वालों का ध्यान मजदूरों की इन दैनिक असुविधाओं की ओर तनिक भी नहीं जाता। वे मजदूरी बढ़वाने के लिये प्रयत्न करना और आवश्यकता पड़ने पर हड़ताल करवाना ही एक मात्र अपना कर्तव्य समझते हैं। ये सब सुविधाएं तभी प्राप्त हो

सकती है जब कि मजदूरों में कार्य करने वाले इस ओर अधिक ध्यान दें।

शिशुगृह

किसी किसी फैक्टरी मे जहा अधिक सख्या मे स्त्री मजदूरिनें काम करती है मिल मालिकों ने शिशुगृह स्थापित किये हैं, और उनमें शिक्षित दाइयों का प्रबन्ध किया गया हे। बच्चों को दूध मिलने की व्यवस्था भी है। किन्तु बहुत से कारखानो मे ऐसी कोई व्यवस्था नही है। मजदूर स्त्रिया अपने बच्चों को अपने साथ ही रखती है, मशीन के पास ही वे अपने बच्चों को लिटा देती है। ऐसा करने से बच्चो के स्वास्थ्य पर बहुत बुरा असर पड़ता है। मशीनों का शोर, धूल और गंदगी, सभी का नवजात शिशु पर बहुत बुरा प्रभाव पडता है। अतएव बच्चों का वहां रक्खा जाना किसी भी प्रकार उचित नहीं कहा जा सकता। इस प्रथा को शीघ्र ही बन्द करना होगा। परन्तु भारतीय स्त्रिया अपने बच्चों को किसी की देख-रेख मे छोड़ना पसंद नहीं करतीं। फिर जात-बिरादरी की भी झंझट उपस्थित होती है। यह कुछ ऐसी कठिनाइयां है, जिनके कारण शिशुगृह अधिक सफल नहीं होते। आवश्यकता इस बात की है कि मजदूर स्त्रियो को समझाया जावे, अच्छे स्वभाव की नर्सें नियुक्त की जावे, और स्त्रियो को दिन मे दो-चार बार अपने बच्चो को देख आने की सुविधा दी जावे। मजदूर सभाओं के सहयोग से मिल-मालिक इन शिशुगृहों की उपयोगिता का प्रचार करें। कानून के द्वारा उन फैक्टरियो मे जहा एक निश्चित संख्या से अधिक मजदूर स्त्रियां काम करती हो शिशुगृह की स्थापना अनिवार्य की जावे।

पांचवा परिच्छेद

मजदूर सम्बन्धी कानन

"मज़दूर कानून पर प्रभाव" डालने वाली शक्तियाँ

मज़दूरों के सम्बन्ध में बहुत से कानून पास हो गये है। सच तो यह है कि प्रथम योरोपीय महायुद्ध (१६१४—१८) के उपरान्त मजदूर सम्बन्धी कानून तेजी से बनाये गए। इसका मुख्य कारण यह था कि भारतमे मजदूरो का संगठन इसी समय हुआ, मजदूरों मे वर्ग चैतन्य उदय हुआ। इसके अतिरिक्त अन्तर्राष्ट्रीय मज़दूर संघ की स्थापना से भी भारत मे मजदूर सम्बन्धी कानूनो को प्रोत्साहन मिला। अन्तर्राष्ट्रीय मजदूर सम्मेलनो मे जब भारतीय मजदूरो, व्यवसायियों, तथा सरकार के प्रतिनिधि अन्य देशों की तुलना में भारतीय मज़दूरों की दयनीय अवस्था की तुलना करते तो उन्हे स्वीकार करना पड़ता था कि भारतीय मजदूरों की अवस्था मे सुधार होने की आवश्यकता है। १६३१ मे शाही मज़दूर कमीशन ने भी बहुत सी शिफारिशें की और सरकार को उक्त कमीशन की सम्मति के अनुसार कुछ कानून बनाने पडे। इसके अतिरिक्त कांग्रेस जो देश की एकमात्र राष्ट्रीय संस्था है, उसने सदैव मज़दूरो के प्रश्न को आगे रक्खा। कांग्रेस के सदस्य व्यवस्थापिका सभाओं और उनके बाहर मजदूरों के हितों का सदैव समर्थन करते रहे। इसके अतिरिक्त कतिपय मिल मालिकों की भी समझ में यह बात आ गई कि उद्योग धन्धों की उन्नति के लिए यह आवश्यक है कि मज़दूरों की दशा मे कुछ सुधार हो। यही सब कारण थे कि १६२० और १६३६ के बीच मज़दूर हित के कानून बने। इसके बाद १६३७ में जब कि सर्व प्रथम प्रान्तो में उत्तरदायी मन्त्रि मण्डल स्थापित हुए और आठ प्रान्तों में कांग्रेस का शासन स्थापित हुआ तो उन्होने तेजी से मज़दूर हित के

कानून बनाने का प्रयत्न किया। बम्बई,मध्यप्रान्त, कानपुर, तथा बिहार में लेबर कमेटियां बिठाई गईं और उन्होने क्रान्तिकारी सुधारों की सिफारिश की। यद्यपि कांग्रेस मन्त्रि मण्डलों ने १९३९ मे त्याग-पत्र दे दिया, इस कारण वे मज़दूर हित के सभी कानून, जो वे चाहते थे, नही बना सके। परन्तु फिर भी बहुत से कानून बनाये गए।

प्रान्तों मे उत्तरदायी शासन की व्यवस्था हो जाने का फल यह हुआ कि ब्रिटिश भारत मे पहले ही देशी राज्यो से अधिक मजदूरों को सुविधाये मिली थी, अब तो यह अन्तर बहुत अधिक बढ गया। समस्त भारत के लिए जहां तक सम्भव हो एकसी मजदूर सम्बन्धी नीति काम में लाई जावे, इस उद्देश से भारत सरकार ने लेबर मिनिस्टरो (प्रान्तों और देशी राज्यों के) का सम्मेलन बुलाना आरम्भ किया। इसका प्रभाव यह पडा कि कुछ देशी राज्यों मे इस दिशा मे उन्नति हुई। १९४२ मे एक सम्मेलन की नीव डाली गई। जिसकी स्थायी समिति मे मजदूरों, पूंजीपतियों, प्रान्तीय तथा केन्द्रीय सरकार के प्रतिनिधि है। यह सम्मेलन मज़दूरों से सम्बन्धित सभी प्रश्नो पर विचार करता है और अपनी सम्मति प्रगट करता है। आशा है कि भविष्य मे यह और अधिक उपयोगी सिद्ध होगा।

दूसरे युद्ध के उपरान्त देश मे फिर राजनैतिक हलचल जोरो पर है, जो भी कुछ भी हो, परन्तु यह निश्चित है कि अब उत्तरदायी शासन फिर स्थापित होगा और मजदूर सम्बन्धी कानून तेजी से बनाये और लागू किये जावेगे।

मज़दूरो में कार्य करने वालो को उन सभी कानूनो की पूरी जानकारी होनी चाहिए कि जिनका सम्बन्ध मजदूरो से है। हम यहा मुख्य-मुख्य कानूनों का विवरण देते हैं।

फैक्टरी कानून

१९३४ का फैक्टरी कानून अन्तिम फैक्टरी कानून है, और इस समय

वही समस्त भारत में प्रचलित है। इस कानून की मुख्य बातें नीचे दी जाती हे —

(१) यह एक्ट उन स्थानों को फैक्टरी घोषित करता है और लागू होता है जहां २० या उससे अधिक आदमी काम करते हों और यांत्रिक शक्ति (बिजली, भाप, गैस,) का उपयोग होता हो। इस एक्ट के अनुसार प्रान्तीय सरकारों को यह अधिकार दे दिया गया है कि वे किसी ऐसे स्थान को भी फैक्टरी घोषित कर सकती है जहाँ १० या उससे अधिक आदमी काम करते हों और यांत्रिक शक्ति का उपयोग होता हो या न होता हो। बहुत सी प्रान्तीय सरकारों ने इस छूट का लाभ उठाया है और ऐसे स्थानों को जहां १० आदमी काम करते है उन्हे फैक्टरी घोषित कर दिया हे।

(२) फैक्टरी एक्ट के अनुसार वर्ष भर चलने वाली फैक्टरियों और मौसमी फैक्टरियों मे अन्तर किया गया है। फैक्टरी एक्ट के अनुसार जो फैक्टरी वर्ष में १८० दिन से अधिक चले वह वर्ष भर चलने वाली मानी जावेगी।

वर्ष भर चलने वाली और मौसमी फैक्टरियों के मजदूरों के काम के घंटों में भिन्नता रक्खी गई है। कपास के और जूट के पेंच, मूंगफली के पेंच, चाय, काफी, लाख, नील, रबर, शक्कर, गुड़, इत्यादि के कारखाने मौसमी फैक्टरियां मानी जाती है।

(३) वर्ष भर चलने वाली फैक्टरी में प्रौढ स्त्री, पुरुष एक दिन मे १० घटे और एक सप्ताह मे ५४ घटे से अधिक काम नहीं कर सकते। उन कारखानों मे जहां काम लगातार होता है, प्रौढ व्यक्ति एक दिन मे १० घंटे से अधिक और सप्ताह मे ५६ घंटे से अधिक काम नही कर सकता।

मौसमी कारखानों में प्रौढ पुरुष एक दिन मे ११ घंटे और सप्ताह में ६० घंटे से अधिक काम नही कर सकता। और स्त्रियां एक दिन में १० घंटे और सप्ताह मे ६० घंटे से अधिक काम नही कर सकतीं।

स्त्रियों को रात्रि मे काम करने की मनाही है। केवल मछली के धंधे मे वे रात्रि मे काम कर सकती है। कोई स्त्री कानून के अनुसार ७ बजे सायकाल तथा ६ बजे प्रात काल के बीच मे फैक्टरी में काम नही कर सक्ती। प्रान्तीय सरकार विशेप आज्ञा द्वारा इसमे कुछ परिवर्तन कर सकती हैं और ७--३० बजे सायकाल तथा ५ बजे प्रातःकाल के बीच के समय मे स्त्रियों को फैक्टरियों में काम करने की मनाही कर सकती है।

किसी भी दिन स्त्री या पुरुप मजदूरों को कारखाने मे विश्राम (दोपहर की छुट्टी) को मिलाकर १३ घटे से अधिक नही रहना पडेगा। दूसरे शब्दों मे काम के घंटो और विश्राम का समय १३ घंटे से अधिक समय मे नहीं फैलाया जासक्ता।

प्रत्येक प्रौढ मजदूर को अनिवार्य रूप से बीच में, विश्राम की छुट्टी मिलनी चाहिए। कोई भी मजदूर ६ घंटे, ५ घटे और ८ घंटे बिना क्रमशः १ घंटा, ½ घंटा और आध आध घंटे की दो विश्राम की छुट्टी पाये काम नहीं कर सकता।

(४) १२ वर्ष की कम की आयु के बच्चे फैक्टरियों में काम नहीं कर सकते और कानून के अनुसार १२ और १५ वर्ष की आयु वाले बच्चे माने जाते है।

कानून के अनुसार १५ और १७ वर्ष की आयु वालों को वयस्क नाम से एक अलग श्रेणी मे रक्खा गया है।

कोई भी १२ वर्ष से ऊपर का बालक मजदूर बिना डाक्टरी सर्टिफिकेट के प्राप्त किये फैक्टरी मे काम नही कर सकता। डाक्टर इस बात का प्रमाण पत्र देता है कि उसका स्वास्थ्य फैक्टरी मे काम करने के योग्य है और प्रत्येक ऐसा बालक मजदूर फैक्टरी मे काम करते समय इस सार्टिफिकेट का चिन्ह एक टोकिन अपने पास रखता है।

यह तो ऊपर ही कहा जा चुका है कि १५ और १७ वर्ष की आयु वालों को वयस्क माना गया है, जब तक वे डाक्टर से इस आशय का

प्रमाण पत्र प्राप्त नहीं कर लेते कि वह प्रौढ मजदूर के समान कार्य करने के योग्य है, उन्हे बालक मजदूर ही माना जाता है और वे सब कानून जो बालक मजदूरों को लागू होते है, उन्हे भी लागू होते हैं।

बालक मजदूर दिनमे ५ घंटे से अधिक कार्य नही कर सकते। उनके काम के घटे ७½ घंटों से अधिक समय मे नही रक्खे जा सकते अर्थात् वे फैक्टरी मे ७½ घंटे से अधिक नही ठहराये जा सकते।

बालक मजदूरों को भी रात्रि मे काम करने की मनाही है। ७ बजे सायंकाल से ६ बजे प्रात काल के बीज मे कोई बालक मजदूर काम नहीं कर सकता। प्रान्तीय सरकार इससे थोडा परिवर्तन कर सकती है, अर्थात् वह घोषणा कर सकती हे कि कोई बालक मजदूर (विशेष फैक्टरियों में) ७-३० बजे सायकाल और ५ बजे प्रातः काल के बीच मे काम नहीं करेगा।

बालक मजदूरों का एक ही दिन मे दो फैक्टरियों मे काम करना जुर्म है, और यदि कोई बालक मजदूर एक ही दिन मे दो कारखानों में काम करता पाया जाता है, तो उसके अभिभावक को दण्ड दिया जाता है। भारतीय मां-बाप लालच-वश बालकों को डाक्टर के पास कुछ समय के अन्तर से दो बार भेज कर दो प्रमाण पत्र ले लेते है और एक दिन मे दो कारखानों मे उनसे काम करवाते हे। इस प्रकार वह पांच घटे के स्थान पर १० घटे काम करता हे। इस कुप्रथा को रोकने के लिए यह विधान रक्खा गया है।

(५) फैक्टरियो के सब मजदूरो (पुरुष, स्त्री, बालक) को रविवार को छुट्टी मिलनी चाहिए। कुछ दशाओ मे प्रौढ मजदूरों को इस विधान से छूट मिल सकती है। परन्तु फिर भी किसी प्रौढ मजदूर को लगातार दस दिन स अधिक बिना एक दिन की छुट्टी के काम करने की मनाई है।

बालक मजदूरो को इस संबंध मे कोई छूट नही मिल सकती। उन्हे साप्ताहिक छुट्टी अवश्य ही मिलनी चाहिए।

यदि प्रान्तीय सरकार से विशेष आज्ञा प्राप्त करके वर्ष भर चलने वाली फैक्टरियों में ५४ या ५६ घंटे से अधिक ६० घंटे तक सप्ताह में काम कराया जावे तो साधारण मजदूरों से सवाई मजदूरी देनी होगी।

मौसमी या गैरमौसमी फैक्टरियों में यदि मजदूरो से ६० घटे से अधिक (विशेष आज्ञा प्राप्त करके) काम कराया जावेगा तो साधारण मजदूरी से ड्योढी मज़दूरी देनी होगी।

(६) कानून के अनुसार प्रत्येक फैक्टरी मे मज़दूरो की सुरक्षा का प्रबन्ध होना आवश्यक हे। अर्थात् खतरनाक यंत्रो की घेराबन्दी, फर्स्ट एड का सामान, कमरे के किवाडो का बाहर की ओर खुलना इत्यादि। प्रत्येक फैक्टरी मे सफाई, यथेष्ट वायु, आवश्यक ठंडक और यथेष्ट रोशनी का प्रबन्ध करना अनिवार्य है।

कानून के अनुसार प्रत्येक फैक्टरी को पीने के लिये यथेष्ठ जल की व्यवस्था करना चाहिए, सफाई का पूरा प्रबन्ध रखना चाहिये, और नहाने तथा कपडे धोने के लिये जल का उचित प्रबन्ध करना चाहिए। खतरनाक यंत्रों की घेराबंदी आवश्यक है। फैक्टरी इन्सपेक्टर यदि आवश्यक समझे तो फैक्टरी मैनेजर को उसे यन्त्रो से मजदूरों की रक्षा और इमारत कारखाने के लिए ठीक है इसका सतोष करवाने के लिये कह सकता है। फैक्टरी मैनेजर को किसी भी दुर्घटना (जिससे कि मजदूरो को चोट लगे और वह बेकार हो जावे) की सूचना ४८ घटे मे फैक्टरी इन्सपेक्टर को दे देनी चाहिए।

कानून प्रान्तीय सरकारो को इस बात की छूट देता है कि यदि वे चाहे तो खतरनाक कामों के सम्बन्ध मे विशेष नियम बनावें, बालकों वयस्कों तथा स्त्रियो को जोखिम के कामों को करने से मनाही कर दें, जो बालक कानून के अनुसार फैक्टरी मे काम नहीं कर सकते, उनको फैक्टरी की इमारत मे आने की मनाही कर दे और कारखानों में भाप के प्रयोग पर नियन्त्रण रखे।

इस कानून के अनुसार प्रान्तीय सरकारों को यह भी अधिकार दे

दिये गए हैं कि वे जिन फैक्टरियों मे १५० मज़दूरों से अधिक काम करते हों, उन्हे विश्राम करने लिए सायादार स्थान बनाने पर विवश करें, और जिन फैक्टरियों मे ५० स्त्रियों से अधिक काम करती है, उन्हें शिशु गृहों की व्यवस्था करने की आज्ञा दे। जहां ६ वर्ष से कम के बच्चों की देख-भाल हो और प्रत्येक फैक्टरी को फर्स्ट एड के औजारों और दवाईयों को रखने पर विवश करें।

यदि इस कानून की किसी फैक्टरी मे अवहेलना की जावे तो कानून के अनुसार ५०० रु तक जुर्माना किया जा सकता है और बार-बार कानून के विरुद्ध कार्य करने पर अधिक कड़ा दण्ड दिया जाता है।

इस कानून के अनुसार प्रान्तीय सरकारें फैक्टरियों के निरीक्षण का प्रबन्ध अपने निरीक्षकों को नियुक्त करके कराती हैं। प्रान्तीय सरकारे ही फैक्टरी इन्सपेक्टरों की नियुक्ति करती हैं और डाक्टरों की भी नियुक्ति प्रान्तीय सरकारे ही करती है जो मजदूर बालकों को सर्टिफिकेट देते है।

बालक बंधक कानून १९३३

(The children pledging of Labour Act 1933)

यह एक्ट एक विशेष कुरीति को रोकने के लिए पास किया गया है। शाही कमीशन की जांच के समय यह ज्ञात हुआ कि बहुत से माता-पिता अपने बालकों के श्रम को मालिकों के पास बंधक रख देते हैं। इस कानून के अनुसार इस प्रकार का कोई भी सौदा चाहे वह लिखित हो या जबानी हो गैर कानूनी होगा। जो अभिभावक जान बूझ कर अपने बालक के श्रम को बंधक रक्खेगा उस पर ५० रुपये तक जुर्माना हो सकता है। जो मालिक या व्यक्ति जान बूझ कर इस प्रकार बालक के श्रम को बधक रक्खेगा उस पर २०० रुपये तक जुर्माना हो सकता है।

बालको को नौकर रखने का कानून (१९३८)

इस कानून के अनुसार रेलों और बन्दरगाहों में सामान लादने

सरकारों तथा केन्द्रीय सरकार ने भी किया।

मध्यप्रान्त अनियंत्रित फैक्टरी कानून (१९३७)

यह एक्ट उन कारखानो और स्थानो में लागू होता है, जिनमें १९३४ का फैक्टरी कानून लागू नहीं होता और जहां ५० या उससे अधिक व्यक्ति काम करते और जहां नीचे लिखे धन्धे होते हैं — (१) बीड़ी बनाना (२) लाख तैयार करना (३) चमड़ा कमाना। सरकार को यह भी अधिकार है कि वह किसी स्थान मे जहां २५ मजदूरो से अधिक कार्य करते हो और जहा इन धन्धों के अलावा दूसरे धन्धे होते हो इस कानून को लागू करे। किन्तु कानून को ऐसे स्थानो में लागू करने से पहले सरकार को इस आशय की घोषणा करना होगी।

इस कानून के अनुसार पुरुषो के काम के घंटे १० निर्धारित किये गये हैं। ५ घन्टे काम कर चुकने के उपरान्त आध घन्टे का विश्राम जरूरी है और सप्ताह मे एक दिन छुट्टी आवश्यक है।

इस एक्ट के अनुसार १० और १४ वर्ष की आयु के बीच के बालको को उसी दशा मे अनियन्त्रित फैक्टरियों में काम करने की आज्ञा मिल सकती है, जब उनको शारीरिक स्वस्थता का प्रमाण पत्र डाक्टर ने दे दिया हो और काम के समय वे उस आशय का टोकिन (बिल्ला) रक्खे। ऐसे बालको के लिए ७ घन्टे का दिन, आधे घन्टे का विश्राम और सप्ताह मे एक छुट्टी कानून द्वारा निश्चित कर दी गई है। बालको के लिए रात्रि में काम करने की मनाई है। बालक केवल ८ बजे प्रातःकाल से १२ बजे दो पहर तक और १ बजे मध्यान्ह से लेकर ५ बजे तक काम कर सकते है।

स्त्रियो के लिए कानून में ९ घन्टे काम, आध घन्टे का विश्राम, और सप्ताह में एक दिन छुट्टी का निर्धारित किया गया है। स्त्रियो के लिए भी रात्रि में काम करने की मनाही है।

१९३४ के एक्ट के अनुसार ही इस एक्ट में भी सफाई, हवा, रोशनी,

शौचगृह और पेशाबखानों, पीने के पानी और इमारतों की मजबूती की व्यवस्था का प्रबन्ध किया गया है। कानून के अन्तर्गत सरकार को इन अनियन्त्रित कारखानों का निरीक्षण करने के लिए इन्सपेक्टरों और बालकों को स्वस्थ्य होने का प्रमाण पत्र देने के लिए डाक्टरों की नियुक्ति करने का अधिकार प्राप्त है। यदि कोई कारखाने का मालिक इस कानून की अवहेलना करे तो उस पर २०० रु. तक जुर्माना हो सकता है।

दुकानों मे काम करने वालो से सम्बन्धित कानून

यह तो पहिले ही कहा जा चुका है कि सर्व प्रथम बम्बई सरकार ने इस ओर कदम बढाया और फिर अन्य प्रान्तों ने उसका अनुकरण किया। अस्तु, इस सम्बन्ध में बहुत से प्रान्तीय एक्ट बन गए है, हम यहाँ उनकी एक तालिका देते है।

बम्बई शाप एक्ट १९३९ :—

यह कानून दूकानो, व्यापारिक फर्मों, रैस्टॉरैंट, होटल, तथा थिएटर सिनेमा तथा अन्य मनोरंजन के स्थानों में लागू होता है। इसके अनुसार दूकानों के लिए प्रतिदिन ९॥ घंटे, व्यापारिक फर्मों के लिए महीने में २०८ घंटे और रैस्टॉरैंट तथा मनोरंजन गृहों मे १० घटे प्रतिदिन नियत किये गए है। सप्ताह में सब कर्मचारियों को एक छुट्टी मिलनी चाहिए। यदि निश्चित घंटो से अधिक काम लिया जावे तो कर्मचारियो को सवाई मजदूरी देनी होगी। कानून के अनुसार एक निश्चित आयु से कम के बालकों को इन स्थानों मे काम करने की मनाही है। दूकानों के खुलने और बन्द होने का समय निर्धारित कर दिया गया है। एक्ट तरुण पुरुषों के लिए काम के घंटे प्रतिदिन ८ और सप्ताह में ४८ निर्धारित करता है और वे ६ बजे प्रातः काल से ७ बजे सायंकाल के बीच में ही काम कर सकते हैं।

पंजाब व्यापारी कर्मचारी एक्ट १९४०

बम्बई के समान ही यह दूकानों, फर्मों तथा मनोरंजन गृहों मे लागू होता है। कर्मचारी प्रतिदिन अधिक से अधिक १० घंटे और सप्ताह में अधिक से अधिक ५४ घंटे काम कर सकते है। कर्मचारियों से गर्मियों मे ७ बजे प्रात. काल से १० बजे रात्रि के बीच में और जाड़ों में ८-३० प्रातः काल से ९ बजे रात्रि तक काम लिया जा सकता है। सप्ताह में एक छुट्टी आवश्यक है। यदि निर्धारित घंटों से अधिक काम कराया जावे तो दुगनी मजदूरी देनी होती है। १४ वर्ष से कम आयु वालो को नौकर रखने की मनाही है। बंद वाले दिन सब दूकानो का बंद होना अनिवार्य है। पन्द्रहवें दिन मजदूरी दी जानी चाहिए। एक रुपये में एक पैसे से अधिक जुर्माना नही किया जा सकता। निकालने के लिए एक महीने का नोटिस या एक मास का वेतन देना आवश्यक है। यदि किसी कर्मचारी ने वर्ष भर लगातार काम किया हो तो १४ दिन की सवेतन छुट्टी और यदि ६ महिने काम किया हो तो ७ दिन की सवेतन छुट्टी मिलनी चाहिए। एक दिन मे एक घंटे का विश्राम मिलना चाहिए।

केन्द्रीय सरकार का साप्ताहिक छुट्टी का बिल

यह कानून दूकानों व्यापारिक फर्मों, रैस्टॉरैंट तथा थियेटरों में लागू होता है। इसके अनुसार सप्ताह मे एक दिन छुट्टी मिलना आवश्यक है। किन्तु प्रान्तीय सरकार चाहे तो किसी को इस कानून से मुक्त कर सकती है।

संयुक्त प्रान्तीय दूकान सम्बंधी बिल

इस बिल का आशय यह है कि केवल दूकानों में कर्मचारियों को ९ घंटे से अधिक काम न करना पड़े। सप्ताह मे एक दिन छुट्टी हो। १४ वर्ष से कम की आयु के बालकों को नौकर नही रक्खा जा सकता। निकालने के लिये एक मास का नोटिस देना अनिवार्य होगा। वेतन

पद्रहवे दिन देना होगा।

आसाम के बिल में भी लगभग यही बाते रक्खी गई थी, किन्तु अभी तक यह बिल कानून नही बन पाये।

सिंध का कानून तो एक प्रकार से बम्बई कानून की नकल मात्र है। अब तो अधिकांश प्रान्तों मे इस प्रकार का कानून बन गया है।

खानो मे काम करने वालों के सम्बन्ध में कानून

भारतीय खानों में काम करने के घटे तथा अन्य बातों का नियंत्रण भारतीय खान (सशोधित) एक्ट १९३५ के अनुसार होता है, उसकी मुख्य धारा नीचे लिखी हैः—

(१) वे सभी स्थान जिन्हे किसी खनिज पदार्थ के प्राप्त करने के लिये खोदा जावे, इस कानून के अनुसार 'खान' है और उसमे यह कानून लागू होता है।

(२) कोई प्रौढ पुरुष भूमि के ऊपर एक दिन मे १० घंटे से अधिक और सप्ताह में ५४ घंटे से अधिक काम नही कर सकता। और यदि वह खान के अन्दर काम करता हो तो ९ घटे से अधिक काम नही कर सकता। खान के अन्दर काम के घटे किसी एक व्यक्ति के लिये पृथक नही होते। जब टुकडी का प्रथम व्यक्ति खान में घुसता है, काम शुरू हो गया माना जाता है और जब अन्तिम व्यक्ति बाहर निकलता है, तब काम समाप्त हुआ माना जाता है। यह समय ९ घटे से अधिक नही होना चाहिए। सच तो यह है कि आने-जाने मे जो समय लगता है, उसको निकालने पर ८ घटा ही कार्य होता है।

स्त्रियों के लिए खानो मे काम करने के घटे पुरुषो के बराबर ही है, किन्तु ७ मार्च १९२९ को जो नियम बनाया गया, उसके अनुसार स्त्रियों को खानों के अन्दर काम करने की मनाही करदी गई। क्योंकि उस समय खानों के अन्दर काम करने वाली स्त्रियो की संख्या बहुत अधिक थी; इस कारण नियम के अनुसार १ जुलाई १९३९ तक क्रमशः

सभी स्त्रियों को खानों से बाहर निकल जाने की व्यवस्था की गई। किन्तु १६३६ के कई वर्ष पूर्व ही भारतीय खानों के अन्दर स्त्रियों से काम लेना बंद कर दिया गया था। परन्तु युद्ध के समय कोयले की कमी के कारण भारत सरकार ने अस्थायी रूप से स्त्रियो को खानों के अन्दर काम करने की फिर आज्ञा दे दी, जिसका देश तथा विदेशों में घोर विरोध हुआ। अब शीघ्र ही यह आज्ञा वापस ले ली जावेगी।

१५ वर्षों से कम की आयु के बालक को खान मे काम करने की मनाही है। १५ से १७ वर्ष की आयु के तरुण तब तक खान मे काम नही कर सकते, जब तक कि उनके पास शारीरिक स्वास्थ्य का प्रमाण पत्र न हो। और उस प्रमाण पत्र का सूचक बिल्ला उसके पास न हो।

(३) खान के मैनेजर को उन सब दुर्घटनाओं का एक रजिस्टर रखना आवश्यक है, जिनसे किसी व्यक्ति को ऐसी चोट लगे कि वह ४८ घंटे के लिए बेकार हो जावे और दुर्घटना के फलस्वरूप मृत्यु या गहरी चोट लग जावे तो उसकी सूचना चीफ इन्सपेक्टर को देना आवश्यक है।

(४) मैनेजर को खान में यथेष्ट पीने के लिए जल तथा शौच, पेशाबघर इत्यादि का समुचित प्रबंध करना चाहिए। जिन खानों को केन्द्रीय सरकार आज्ञा दे, उन्हे फर्स्ट-एड की सामग्री तथा अन्य दवाये इत्यादि रखना आवश्यक है।

(५) इस एक्ट का शासन केन्द्रीय सरकार करती है, जो खानों का चीफ इन्सपेक्टर नियुक्त करती है और उसके आधीन और बहुत से निरीक्षक होते है। केन्द्रीय सरकार कोर्ट भी नियुक्त कर सकती है, जो कि खानों में होने वाली दुर्घटनाओं की जांच करती है, और उस जांच की रिपोर्ट प्रकाशित करती है।

एक्ट के अनुसार केन्द्रीय सरकार माइनिंग बोर्ड या माइनिंग कमेटी नियुक्त करती है जो कि खानों सम्बंधी सभी बातो पर अपना मत प्रगट करती है। माइनिग बोर्ड पर दो प्रतिनिधि मजदूरो के भी होते है,

जिन्हे केन्द्रीय सरकार खान मे काम करने वाले मजदूरों की ट्रेड यूनियन के परामर्श से नियुक्त करती है।

इस कानून के विरुद्ध कार्य करने पर ५०० रुपये तक जुर्माना हो सकता है।

बागो मे कार्य करने वाले मजदूरो से सम्बंधित कानून

मजदूरो की भर्ती वाले परिच्छेद मे हम लिख चुके हैं कि आसाम के चाय के बागो मे १८५६ के कानून (Workman's breach of contract act) के अनुसार मजदूर एक बार भर्ती होकर नियत अवधि तक काम करने के लिये विवश था। वह बाग की मजदूरी करना नही छोड सकता था। यदि वह भाग जावे तो बाग के मालिकों को उसे कैद करने और सजा देने का अधिकार प्राप्त था। यह घृणित कानून कहीं १९२५ मे जाकर रद्द हुआ। मदरास प्लांटर्स एक्ट १९०३ और कुर्ग लेबर एक्ट मे भी ऐसी घृणित धारायें थीं; किन्तु यह कानून भी क्रमशः १९२७ और १९२६ मे रद्द कर दिये गए। १९०१ में आसाम प्रवास एक्ट बना जिसके अन्तर्गत प्रन्तीय सरकार को यह अधिकार दिया गया था कि वह चाय के बागों के सरदारों को जिन्होने सरकार से मजदूर भर्ती करने का लायसैंस नही लिया है, अपने क्षेत्र मे भर्ती न करने दें। १९०८ में एक नया कानून बना, जिसके अनुसार चाय के बागों में बिना लायसैंस प्राप्त ठेकेदारो के द्वारा मजदूरो को भर्ती करने की मनाही करदी गई और मजदूरो को कैद करने का अधिकार छीन लिया गया। १९१५ में आसाम मजदूर प्रवास (संशोधित) कानून पास हुआ, जिसके द्वारा आसाम मे शर्त बंद कुली प्रथा बंद करदी गई और आसाम लेबर बोर्ड की स्थापना हुई। यही बोर्ड अब चाय के बागों के लिए मजदूर भर्ती के काम की देख भाल करता है। आजकल चाय के बागो के लिए मजदूर भर्ती तथा चाय के बागों में काम की व्यवस्था का नियंत्रण "चाय के बागों का प्रवास" कानून १९३२ के अनुसार होता है। इस

एक्ट की मुख्य बातें नीचे लिखी हैं :-

(१) केन्द्रीय सरकार को प्रवासी मजदूरो के एक कंट्रोलर को नियुक्त करने का अधिकार है और सरकार उसके तथा उसके आधीन कर्मचारियो के व्यय के लिए मजदूरो की भर्ती पर फीस लगा सकती है।

(२) केन्द्रीय सरकार किसी भी क्षेत्र को "नियन्त्रित प्रवास क्षेत्र" घोषित कर सकती है। इन नियन्त्रित क्षेत्रो से मजदूरो की भर्ती किसी चाय के बाग के लिए बिना लायसैंस प्राप्त एजेन्टो के और कोई नही कर सकता। एजेन्ट को मजदूर के भोजन और रहने की डिपो पर उचित व्यवस्था करनी होगी और जब वह मजदूर डिपो से चाय के बाग को भेजा जावेगा तो मार्ग मे भी उसके लिए भोजन की उचित व्यवस्था करनी होगी।

(३) केन्द्रीय सरकार किसी भी क्षेत्र को सीमित भर्ती क्षेत्र घोषित कर सकती है। इस क्षेत्र मे कोई भी व्यक्ति जो लायसैंस प्राप्त भर्ती करने वाला न हो या चाय के बाग का सरदार, जिसके पास चाय के बाग के मालिक का प्रमाण पत्र न हो, मजदूरों की भर्ती नही कर सकता। जो भी व्यक्ति इस कानून के विरुद्ध चाय के बागों (आसाम) मे काम करने जाता है अथवा वह व्यक्ति जो कि किसी मजदूर को आसाम के चाय के बागों में जाने के लिए सहायता करता है, उसको ६ महीने की कैद या ५०० रु० जुर्माना या दोनों सजायें दी जा सकती है।

(४) प्रत्येक व्यक्ति जो कि आसाम के बागों मे काम करने जाता है, तीन वर्ष बाग मे काम कर चुकने के उपरान्त चाय के बाग के खर्चे पर अपने घर वापस लौट आने का हकदार है। यदि कोई मजदूर मर जावे तो उसके परिवार का भी यही हक होगा। यदि मजदूर का स्वास्थ्य बाग मे अच्छा न रहता हो अथवा अन्य कारणो से उसका वहा रहना शक्य न हो तो वह ३ वर्ष पूरे होने से पूर्व ही बाग के खर्चे पर लौटने का अधिकारी है।

(५) कोई बालक जो १६ वर्ष से कम आयु का है, भर्ती नही

किया जा सकता, जब तक कि वह अपनी माता के साथ न हो।

(६) प्रवासी मजदूरों का कंट्रोलर तथा उसके आधीन कर्मचारी इस बात की देख भाल करेंगे कि कानून के अनुसार भर्ती का काम हो रहा है या नही और वह प्रवासी मजदूरों के हितों की रक्षा करता है। जब मजदूर घर से चाय के बागों को जाता, चाय के बागों मे रहता है, और अपने घर वापस लौटता है, तब कंट्रोलर उसके हितों की देख भाल और रक्षा करता है।

गमनागम के साधनो मे लगे हुए मजदूरो से सम्बधित कानून

अभी तक कोई एक ऐसा कानून नही बना कि जो रेलवे, बंदरगाहों और सडक, मोटर पर काम करने वालों की रक्षा करे, किन्तु रेलवे और बंदरगाहों पर काम करने वालों के सम्बंध मे कुछ फुटकर कानून बने है:—

भारतीय रेलवे (सशोधित) एक्ट १९३०

रेलवे वर्क शापों में काम करने वाले मजदूरो के लिए १९३४ का फैक्टरी कानून लागू होता है। इस कानून का उद्देश्य उन श्रमजीवियों के हितों की रक्षा करना है, जो रेलवे लाइन पर स्थायी रूप से काम करते है। इस कानून की मुख्य धारायें नीचे लिखी है:—

(१) जिन व्यक्तियों का काम बीच बीच मे रुक नहीं जाता है, वे सप्ताह मे ६० घंटे से अधिक काम नही कर सकते।

(२) उन श्रमजीवियो का जिनका काम बीच-बीच में बंद हो जाता है, वे ८४ घंटे एक सप्ताह में काम कर सकते है।

(३) यदि विशेष आवश्कता आ पडे तो निर्धारित घंटों से अधिक भी काम लिया जा सकता है और निर्धारित घंटों से अधिक जितने घंटे काम लिया जावेगा, उनके लिए सवाई मजदूरी देनी होगी।

(४) जिन कर्मचारियों का कार्य मुख्यत बीच-बीच मे बंद हो जाने

वाला नहीं है, उन्हे सप्ताह मे एक दिन की अवश्य छुट्टी मिलनी चाहिए।

भारतीय रेलवे कर्मचारियो के काम के घटे संबंधी नियम (१९३१)

इस एक्ट द्वारा कतिपय रेलवे कर्मचारियों के काम के घन्टे और विश्राम की अवधि निर्धारित कर दी गई है। इस एक्ट के अन्तर्गत वे लोग नही आते, जो रेल गाडियों पर काम करते हैं (रनिंग स्टाफ) वाच वार्ड (देखभाल) तथा मैनेजर, सुपरवाइजर इत्यादि। वे लोग फैक्टरी एक्ट के अन्तर्गत आते है। अब रेलवे में भी ८ घटे प्रति दिन काम करने का नियम बन गया है।

अभी तक बन्दरगाहों मे काम करने वालों के काम के घन्टे निर्धारित नही हुए हैं। इस सम्बन्ध मे कोई कानून नहीं बना। १९३१ के पोर्ट एक्ट के अनुसार कोई बालक जो कि १५ वर्ष से कम की आयु का हो, बन्दरगाह में काम नही कर सकता। किन्तु १९३८ के (Employment of childıen Act) बालको को नौकर रखने सम्बन्धी कानून के अनुसार १५ वर्ष की आयु से कम का कोई बालक बन्दरगाहों मे काम नही कर सकता।

डाक मे काम करने वालो से सम्बंधित कानून १९३४

इस एक्ट का उद्देश्य डाक मे काम करने वालो की सुरक्षा का प्रबंध करता है। इस एक्ट मे डाको पर आने जाने के रास्तों का ठीक रखना, माल को उठाने वाले यन्त्रों को ठीक ठाक रखने, प्रारम्भिक चिकित्सा की सामग्री रखने की व्यवस्था की गई है।

जहाजो पर काम करने वालो से सम्बन्धित कानून

कोई भी बालक जिसकी आयु १४ वर्ष से कम है, जहाज पर साधारणतया काम नही कर सकता। हां, यदि वे अपने समीप के रिश्तेदार या पिता के चार्ज मे काम करे तो १४ वर्ष से कम के बालको को काम करने की आज्ञा मिल सकती हे। १८ वर्ष से कम की आयु का तरुण

(Trimmer) या (Stoker) साधारणतया काम नहीं कर सकता। विशेष दशाओं में ही ऐसा करने की आज्ञा मिल सकती है १८ वर्ष से कम की आयु का व्यक्ति जहाज़ पर बिना डाक्टरी सर्टिफिकेट के कि वह शारीरिक दृष्टि से काम करने के योग्य है, काम नहीं कर सकता। भारतीय सरकार ने १९३१ के नोटिफिकेशन के अनुसार (ट्रिमरों) और स्टोकरों के काम के घन्टे भी नियुक्त कर दिये है।

श्रमजीवी क्षति पूर्ति कानून (संशोधित) १९३३

यह कानून उन श्रमजीवियों के लिए लागू होता है कि जो शारीरिक श्रम करते है और नीचे लिखे स्थानों में काम करते हैं:—(१) फैक्टरियाँ जहां १० आदमी काम करते हों और यांत्रिक शक्ति का उपयोग होता हो, और वे फैक्टरियां जहां यांत्रिक शक्ति का तो उपयोग न होता हो, किन्तु ५० व्यक्ति काम करते हों (२) खानें (३) बाग (सिनकोना, रबर, चाय, कहवा) जिनमे २५ से अधिक व्यक्ति काम करते हों। (४) जहाजी काम मे, (५) जहाजों पर माल लादने और उतारने में (६) जहाज बनाने में (७) मकान बनाने में (यदि एक मंजिल से अधिक ऊँचा हो) (८) सडकों के बनाने मे (९) यांत्रिक गाडियो को चलाने में। (१०) विस्फोटक पदार्थों को बनाने या उनका उपयोग करने मे। (११) गैस या बिजली तैयार करने में (१२) सिनेमा फिल्मों को तैयार करने और उनको दिखलाने में (१३) हाथी तथा अन्य जंगली जानवरों को रखने मे।

इन कार्यों मे चोट लग जाने या मर जाने को ही केवल दुर्घटना नहीं माना जावेगा, किन्तु कुछ पेशो के रोगों से बीमार पडने या मरने को भी दुर्घटना माना जावेगा और उनके लिए मालिक मजदूर की क्षति पूर्ति करेगा। ये रोग नीचे लिखे हैं।

(१) ऐनथ्रैक्स (२) सीसा (Lead फास्फोरस, पारा और Benzene का जहर (३) क्रोम (Ulceration (४) Compre-

ssed air-illness.

क्षति पूर्ति का हर्जाना केवल उन्ही व्यक्तियों को दिया जाता है, जिनका मासिक वेतन ३०० रु. से अधिक न हो, साथ ही जो व्यक्ति क्लार्क का काम करते हैं, उन्हे भी क्षति पूर्ति का हर्जाना नही मिल सकता। यदि काम करते समय और उसके फलस्वरूप किसी व्यक्ति को चोट लग जावे, अथवा दुर्घटना से उसकी मृत्यु हो जावे तो वह इस कानून के अन्तर्गत क्षति पूर्ति का हकदार होगा। बडे-बडे औद्योगिक केन्द्रों मे इस कानून के अन्तर्गत मामलों को तय करने का काम कमिश्नर करते है, जो इसी कार्य के लिये नियुक्त किये जाते हैं। किन्तु अन्य स्थानो पर जज खफीफा इस कानून के अन्तर्गत सारे मामलों को तय करता है।

किसी व्यक्ति को कितना रुपया हर्जाने के रूप मे मिलेगा, यह उसके मासिक वेतन पर निर्भर है। दुर्वटना के फलस्वरुप मज़दूर को जब चोट लगती है तो उसके नीचे लिखे परिणाम हो सकते हैं — [१] आंशिक असमर्थता [२] पूर्ण असमर्थता [३] मृत्यु। इसके अतिरिक्त धन्धों में काम करने वालों को कुछ रोग लग जाते हैं, जो उन धन्धों के विशेष रोग स्वीकार किये गए हैं। आंशिक असमर्थता, अस्थायी अर्थात् थोडे दिनो के लिए भी हो सकती है और स्थायी अर्थात् हमेशा के लिए भी हो सकती है। इसी प्रकार पूर्ण असमर्थता भी कुछ समय के लिए अर्थात् अस्थायी अथवा सदैव के लिए अर्थात् स्थायी हो सकती है।

यदि काम करने वाला व्यक्ति चोट से केवल ७ दिन तक ही असमर्थ रहे तो उसे कोई हर्जाना नही मिल सकता। जब दुर्घटना से ७ दिन से अधिक के लिए असमर्थता हो तो मज़दूर को कानून में दिये हुए अनुसार हर्जाना मिलता है। कानून मे हर्जाने की जो रकम निर्धारित की गई है, वह वेतन के अनुसार है। दुर्घटना होने पर चोट खाने या मरने वाले को नीचे लिखे अनुसार हर्जाने की रकम दी जावेगी:—

चोट खाने वाले मज़दूर का मासिक वेतन या मजदूरी		प्रौढ की मृत्यु होने पर	स्थायी पूर्ण असमर्थता होने पर [प्रौढ की]	प्रौढ की अस्थायी असमर्थता होने पर पखवारे [१५ दिन] मे दी जाने वाली रकम
इससे अधिक	लेकिन इससे अधिक नही			
रुपये	रुपये	रुपये	रुपये	रुपये – आना
०शून्य	१०	५००	७००	उसकी मासिक मजदूरी का आधा
१०	१५	५५०	७७०	५—०
१५	१८	६००	८४०	६—०
१८	२१	६३०	८८२	७—०
२१	२४	७२०	१००८	८—०
२४	२७	८१०	११३४	८—८
२७	३०	९००	१२६०	९—०
३०	३५	१०५०	१४७०	९—८
३५	४०	१२००	१६८०	१०—०
४०	४५	१३५०	१८९०	११—४
४५	५०	१५००	२१००	१२—८
५०	६०	१८००	२५२०	१५—०
६०	७०	२१००	२९४०	१७—८
७०	८०	२४००	३३६०	२०—०
८०	१००	३०००	४२००	२५—०
१००	२००	३५००	४९००	३०—०
२००		४०००	५६००	३०—०

ऊपर दी हुई तालिका से यह स्पष्ट हो जाता है कि जहां तक प्रौढ स्त्री पुरुषों का सम्बन्ध है मृत्यु होने पर वेतन के अनुसार कम से कम ५०० और अधिक से अधिक ४००० रु. और स्थायी पूर्ण असमर्थता

पर कम से कम ७०० रुपये और अधिक से अधिक ५६०० रु. हर्जाना मिल सकता है। प्रौढो के अस्थायी असमर्थ होने पर प्रति पखवारे अर्थात १५ दिन के बाद एक रकम दी जातो है, जो १० रु. तक मासिक वेतन पाने वाले के लिए उसके मासिक वेतन की आधी (अर्थात उसको पूरा मासिक वेतन हर्जाने में मिलता है) और तदुपरांत ५ रु. से ३० रु. तक है। अस्थायी असमर्थता होने पर ५ वर्षों तक यह पखवारे की रकम मिलती रहेगी। यदि कोई व्यक्ति ५ वर्षों तक भी ठीक न हो तो उसकी असमर्थता स्थायी मान ली जावेगी। यदि ५ वर्षों से पूर्व ही अस्थायी असमर्थता स्थायी हो जावे तो मजदूर को अस्थायी असमर्थता होने पर जो एक मुश्त रकम मिलती है, उसमें से जितनी रकम उसे अस्थायी असमर्थता के काल मे प्रति पखवारे मिल चुकी है; वह कम कर दी जायगी। प्रौढों की पूर्ण स्थायी असमर्थता होने पर जितनी एक मुश्त रकम मजदूर को मिलनी चाहिए, वह तो ऊपर दी हुई तालिका में है किन्तु प्रौढों की "स्थायी आंशिक असमर्थता" होने पर कितनी रकम दी जावेगी यह हिसाब लगा कर मालूम की जा सकती है। स्थायी आंशिक असमर्थता से मजदूर की कार्य क्षमता जितनी घट जावे, उसी अनुपात मे उसे स्थायी पूर्ण असमर्थता होने पर मिलने वाली रकम का हिस्सा मिल जावेगा। उदाहरण के लिए किसी मज़दूर का जिसे ५० रु. मासिक मजदूरी मिलती है, बांया हाथ कट जाता है तो वह स्थायी रूप से आंशिक असमर्थ हो गया। कानून के अनुसार बांया हाथ कटने पर उसकी ६०% प्रतिशत कार्य क्षमता नष्ट हो गई। पूर्ण स्थायी असमर्थता होने पर उसे २१०० रु. क्षति पूर्ति के मिलते। अस्तु, बाया हाथ कट जाने पर उसे २१०० रु. का ६०% प्रतिशत अर्थात १२६० रु. मिलेंगे। कौन सा अंग भंग हो हो जाने पर कितनी कार्य क्षमता नष्ट होती है, उसकी भी एक तालिका एक्ट मे दी हुई है जिसे हम आगे चल कर देंगे।

यदि अल्पवयस्क (१२ वर्ष और १५ वर्ष के बीच की आयु वाला) स्थायी रूप से पूर्ण असमर्थ हो जावे तो उसे एक मुश्त १२००रु.

मिलेंगे। फिर चाहे उसे जो कुछ भी मजदूरी मिलती हो। यदि अल्प वयस्क की मृत्यु हो जावे तो उसके माता पिता या अभिभावकों को केवल २०० रु. एक मुश्त मिलेगे।

अस्थायी असमर्थता होने पर फिर चाहे वह आंशिक या पूर्ण हो, ऊपर दी हुई तालिका मे जो पखवारे की रकम नियत है, वह प्रौढ मज़दूरों को वेतन के अनुसार मिलेगी। अल्पवयस्क जब अस्थायी रूप से असमर्थ हो तो उसको प्रति मास अपनी मासिक मज़दूरी की आधी रकम हर्जाने मे मिलेगी। किन्तु यह मासिक हर्जाने की रकम ३० रु. प्रति मास से अधिक नहीं हो सकती।

नीचे दी हुई तालिका मे किसी अंग के भंग होने पर जो स्थायी आंशिक असमर्थता होती है, उससे होने वाली कार्य क्षमता की हानि का ब्यौरा दिया हुआ है।

चोट	कार्य क्षमता की हानि प्रतिशत में
कोन्ही पर या कोन्ही से ऊपर दायें हाथ का नष्ट हो जाना	७० प्रतिशत
,, ,, ,, ,, बांये ,, ,, ,,	६० प्रतिशत
कोन्ही से नीचे दायें हाथ का नष्ट हो जाना	६० ,,
कोन्ही के नीचे से बांयें हाथ का नष्ट हो जाना	५० ,,
घुटने पर से या घुटने से ऊपर टाँग का नष्ट हो जाना	६० ,,
घुटने से नीचे टांग का नष्ट हो जाना	५० ,,
स्थायी रूप से पूर्ण बहिरा हो जाना	५० ,,
एक आँख नष्ट हो जाने पर	३० ,,
हाथ का अंगुठा नष्ट हो जाने पर	२५ ,,
एक पैर की सब अंगुलियां नष्ट हो जाने पर	२० ,,
अंगूठाका एक पोरा [हड्डी का टुकड़ा] नष्ट हो जाने पर	१० ,,
पैर का अंगूठा नष्ट हो जाने पर	१० ,,
हाथ के अंगूठे के पास वाली अंगुली के नष्ट हो जाने पर	१० ,,

किसी अंगुली के नष्ट हो जाने पर ... ... ५ प्रतिशत

किन दशाओं में मालिक हर्जाना देने को बाध्य न होगा

(१) जब कि चोट से पूर्ण या आंशिक रूप से मजदूर ७ दिन से अधिक के लिए असमर्थ न हो।

(२) चोट उस समय लगी हो, जब कि मजदूर शराब या अन्य किसी नशीली वस्तु के प्रभाव मे हो। अथवा मजदूर जानबूझ कर उन नियमों को तोडे या अवहेलना करे कि जो विशेषकर उसकी सुरक्षा के लिए बनाये गये हो। अथवा कोई सुरक्षा यंत्र लगा हो उसको जानबूझ कर हटा दे। यदि वह यह जानता था कि यह यंत्र उसकी मशीन से रक्षा करने के लिये था तो वह क्षति पूर्ति के हर्जाने का दावा नहीं कर सकता।

(३) यदि मजदूर अपने काम को छोडकर दूसरे मजदूर के काम पर जावे।

परन्तु यदि नशे की अवस्था मे अथवा जानबूझ कर सुरक्षा के नियमों इत्यदि की अवहेलना करने पर चोट से मृत्यु हो जावे तो मालिक को हर्जाना देना होगा।

यह तो पहले ही बतलाया जा चुका है कि इस एक्ट का शासन कमिश्नर करते है, जिन्हे प्रांतीय सरकार इस काम के लिए नियुक्त करती है। मृत्यु की सूचना पाने पर कमिश्नर ३० दिन के अन्दर मालिक से इस आशय का बयान देने को कह सकता है कि जिससे यह ज्ञात हो कि वह हर्जाने की रकम देना स्वीकार करता है, या नहीं करता है। यदि मालिक अपनी जिम्मेदारी स्वीकार करता है तो वह हर्जाने की रकम कमिश्नर के पास जमा कर देता है। कमिश्नर को मृतक मजदूर के परिवार वालों को उसके मृतक संस्कार के लिए २५ रु पेशगी देने का अधिकार है। यदि मालिक हर्जाना देने की जिम्मेदारी लेना अस्वीकार करे तो कमिश्नर को यह अधिकार है कि वह मृतक व्यक्ति के आश्रितों को

यह सूचना दे कि वे हर्जाने का दावा करे। कमिश्नर को सारे मामले को सुनने और उसका फैसला देने का भी अधिकार है।

मालिक और मजदूर यदि कोई दुर्घटना होने पर दी जाने वाली रकम के सम्बन्ध मे आपस में व्यक्तिगत रुप से समझौता कर ले तो वह गैर कानूनी होगा, जब तक कि उसकी रजिस्ट्री कमिश्नर के यहां न हो जावे। कमिश्नर को यह अधिकार है कि इस प्रकार के समझौते की रजिस्ट्री कर ले। यदि वह इस बात से संतुष्ट हो जावे कि वह धोखे या दबाव से नही हुआ है। मृत्यु होने पर प्रत्येक मालिक को उसकी सूचना कमिश्नर को देनी होती है।

१९३७ मे कानून में जो संशोधन हुआ है, उसके अनुसार बड़े बड़े गोदामो मे माल को लादने, ढोने और उतारने मे यदि कोई चोट लगे या मृत्यु हो जावे तो भी यह कानून लागू होता है।

१९३९ के संशोधन के अनुसार यदि मज़दूर मालिक को नोटिस देना भूल जावे या निर्धारित समय के अन्दर दावा न करे तो इसमें उसके हर्जाने का दावा करने का हक नष्ट नहीं हो जाता। हां, उस दशा मे कमिश्नर को यह संतोष हो जावे कि मजदूर ने प्रार्थना पत्र इस विश्वास मे दिया था कि उसकी चोट ऐसी है कि उसे कानून के अनुसार हर्जाना मिलना चाहिये था और वह प्रार्थना पत्र अस्वीकार हो गया, तब वह बिना नोटिस दिये ही उस दावे को सुन सकता है। किन्तु मजदूर या मजदूर कार्यकर्ताओं के लिये ठीक यही है कि वे हर्जाने का नोटिस मालिक को अवश्य दे दे।

मजदूरी अदायगी एक्ट (१९३६)

इस कानून का मुख्य उद्देश्य यह है कि मज़दूरों को उनका वेतन समय पर दिया जावे, उनके वेतन में से मनमानी कटौती न की जा सके, एक निश्चित रकम से अधिक जुर्माना न किया जा सके। कानून की मुख्य धारायें नीचे लिखी हुई हैं —

शान्ति बनाये रखने के लिए १६२६ मे हडताल कानून (Trade Disputes Act) बनाया गया।

हडताल कानून १९२९

इस कानून का मुख्य उद्देश्य ऐसे साधन उत्पन्न करना है, जिनसे औद्योगिक झगडे शान्तिपूर्वक बिना हडताल के निबट जावे, और बिजली, पानी, रेलवे, इत्यादि जन-उपयोगी कारखानों या धन्धो में यकायक हडताल करना जुर्म बना दिया जावे। तथा राजनैतिक हडताले गैरकानूनी कर दी जावे। कानून की मुख्य धारायें नीचे लिखी है:--

इस कानून के द्वारा केन्द्रीय तथा प्रान्तीय सरकारों को यह अधिकार दे दिया गया है कि यदि कही हडताल हो रही हो या हडताल होने की आशंका हो तो उस झगडे को तय करने के लिए सरकार "समझौता-बोर्ड" या जाच अदालत नियुक्त करे। सरकार बोर्ड या अदालत की रिपोर्ट को प्रकाशित कर सकती है।

(२) जन उपयोगी धन्धो जैसे रेलवे, जहाज तथा नावो, ट्रामगाडी डाक, तार, तथा टेलीफोन, शक्ति, रोशनी, तथा जल के कारखानो तथा स्वास्थ्य और सफाई के काम मे लगे हुए मजदूरो के द्वारा बिना १४ दिन का नोटिस दिये हडताल करना गैर कानूनी है। साथ ही मालिक भी बिना १४ दिन का पेशगी नोटिस दिये द्वारावरोध (Lock out) नही कर सकते। यदि इस कानून की मजदूर अवहेलना करें तो उन्हें एक महीने की सज़ा या ५० रु. जुर्माना या दोनो ही किया जा सकता है। यदि मालिक इस कानून की अवहेलना करें तो उस पर १००० रु. जुर्माना या एक मास का कारावास या दोनो ही किये जा सकते हैं।

(३) जो हडतालें राजनैतिक या साधारण हो और औद्योगिक झगडे से सम्बन्ध न रखती हो और जिनका उद्देश्य समाज को घोर कष्ट पहुँचाना हो, वे गैर कानूनी घोषित करदी गई है। इस प्रकार की हडतालो मे भाग लेने के लिए प्रोत्साहित करने वालो को ३ महीने का

कारावास या २०० रु. का जुर्माना या दोनों ही किया जा सकता है। जो मजदूर इस प्रकार की गैर कानूनी हडतालों मे भाग लेने से इन्कार करेंगे कानून ने उनके साधारण मजदूर सभाओं के अधिकारों को सुरक्षित कर दिया है। अर्थात मज़दूर सभायें ऐसे मजदूरों को अपनी सदस्यता से हटा नहीं सकती।

(४) इस एक्ट के अन्तर्गत केन्द्रीय सरकार को समझौता अधिकारी (Conciliation officer) नियुक्त करने का अधिकार दे दिया गया है। यह अधिकारी मालिक और मजदूरों के बीच मे समझौता कराने का प्रयत्न करते है।

बम्बई हड़ताल कानून (१९३८)

बम्बई की कांग्रेसी सरकार ने १९३८ में हड़तालों सम्बंधी एक क्रान्तिकारी कानून बनाया। जिसका मुख्य उद्देश्य मालिक और मजदूरों के बीच समझौता कराने के लिए साधन उपस्थित करना, प्रान्त के बड़े और संगठित धंधों मे मजदूरों को नौकर रखने मे मनमानी न होने देना, और बिना नोटिस दिये हुए हडताल या द्वारावरोध करने की मनाही करना है। इस कानून का यही मुख्य उद्देश्य है कि जब तक समझौता करने के सारे प्रयत्न विफल न हो जावें, तब तक हडताल न होने दी जावे। १९२९ के हडताल कानून मे जनोपयोगी धंधों में जो नोटिस देने की कैद लगाई गई थी, बम्बई कानून मे प्रत्येक धंधे के लिये लगा दी गई है। इसकी मुख्य धारायें नीचे लिखी हैं :-

(१) इस कानून के द्वारा औद्योगिक झगडों को तय करने के लिये तथा मिल मालिक और मजदूरों के बीच समझौता करवाने के लिए बहुत समुचित प्रबंध किया गया है।

प्रान्तीय सरकार का लेबर आफिसर मुख्य समझौता कराने वाला (पच) है। किन्तु सरकार किसी विशेष झगडे का निपटारा करने के लिये विशेष समझौता कराने वालों की नियुक्ति कर सकती है। यदि समझौता कराने

वालों से झगडा न निपटे और वे असफल हो जावे तो सरकार समझौता बोर्ड स्थापित कर सकती है। एक्ट के अन्दर इस बात की भी सुविधा कर दी गई है, कि यदि दोनो पक्ष राजी हों और अपनी स्वीकृति लिखकर दे दे तो उनका झगडा तय करने के लिये किसी ऐसे व्यक्ति को नियुक्त कर दिया जावे, जिसे कि दोनो पक्ष चाहे। कुछ दशाओं मे झगडा औद्योगिक पंचायत अदालतो के सामने भी भेजा जा सकता है। इस प्रकार एक्ट के अन्तर्गत औद्योगिक झगडों को निपटाने के लिये मुख्य समझौता कराने वाला (लेबर आफिसर) विशेष समझौता कराने वाले, समझौता बोर्ड, स्वयं निर्वाचित पंच, औद्योगिक पंचायत अदालत इत्यादि समझौता कराने के साधन उपलब्ध कर दिये गये है।

(२) प्रान्तीय सरकार को यह अधिकार है कि वह लेबर आफिसर की नियुक्ति करे, जो कि मजदूरों के हितों की रक्षा करे और यदि उनका और मालिकों का कोई झगडा हो, तो यदि मजदूर अपना प्रतिनिधि न भेज सके तो उस दशा में उनका प्रतिनिधित्व करे।

(३) एक्ट के अन्तर्गत उन प्रश्नों को दो भागो मे विभक्त कर दिया गया है, जिनको लेकर मालिक और मजदूरों मे झगडा होता है। वे इस प्रकार है। पहले भाग मे निम्नलिखित प्रश्नो को रक्खा गया है —

(अ) मजदूरो का वर्गीकरण—उदाहरण के लिए स्थायी, अस्थायी, अपरैंटिस, प्रोबेशनर, और बदली मजदूर।

(ब) मजदूरो के काम के घंटे, छुट्टिया, तनखाह का दिन और मजदूरी की रेट इत्यादि की सूचना देने का ढंग।

(क) शिफ्ट मे काम करने का आयोजन।

(ख) हाजरी और देरी से आने के सम्बंध में नियम।

(ग) छुट्टियां, छुट्टी देने लेने के नियम, शर्तें, छुट्टियां कौन मजूर करेगा इत्यादि।

(घ) कारखाने मे खोज का उत्तरदायित्व, और फाटको से घुसने के सम्बंध में नियम।

(ङ) अस्थायी रूप से कारखाने बंद हो जाने पर मालिकों और मजदूरों के अधिकार और दायित्व।

(च) नौकरी का समाप्त होना। मालिक तथा मजदूरों का एक दूसरे को नोटिस देना।

(छ) अवांच्छनीय चरित्र के लिए मुअत्तिल करने तथा नौकरी से हटाने के सम्बंध में नियम।

(ज) मजदूरो के साथ मालिक अथवा उसके कर्मचारियों के दुर्व्यवहार से उनकी रक्षा करने के उपाय।

दूसरे भाग मे निम्नलिखित प्रश्नों का समावेश है।

(अ) स्थायी अथवा अर्ध स्थायी रूप से मजदूरों की संख्या मे कमी करना।

(ब) किसी विभाग में अथवा विभागो मे स्थायी अथवा अर्ध-स्थायी रूप से मजदूरों की संख्या को बढाने की मांग।

(क) किसी कर्मचारी को नौकरी से हटाना जो कि इस कानून के अन्तर्गत बने हुए स्टैंडिंग आर्डर के विरुद्ध हो।

(ख) रेशनैलाइज़ेशन तथा अन्य उन्नत तरीकों का कारखाने में उपयोग करना।

(ग) शिफ्ट सिस्टम मे परिवर्तन करना, उसको बंद करना इत्यादि जो कि स्टैंडिंग आर्डर के अनुसार न हो।

(घ) मज़दूर सभाओं को स्वीकार करना या स्वीकृति को वापस लेना।

(ङ) कोई पुरानी सुविधा जो कि मजदूरों को प्राप्त हो, उसको वापस लेना या किसी पुरानी परम्परा में परिवर्तन करना।

(च) अनुशासन सम्बंधी नये नियमो का प्रचलन करना और प्रचलित नियमों मे परिवर्तन करना।

(छ) मजदूरी और सप्ताह के काम के कुल घंटो को निर्धारित करना।

इस कानून के प्रचलित होने के दो महीने के अन्दर मिल मालिक को प्रथम भाग के सभी प्रश्नों के सम्बंध में नियम बनाकर लेबर कमिश्नर

के पास भेजना आवश्यक है। लेबर कमिश्नर को उन नियमों पर विचार करने और मजदूरों इत्यादि सभी पक्षों से राय करके तय करने का अधिकार है। जब उन नियमों के सम्बंध मे अन्तिम समझौता हो जावे, तब वे रजिस्ट्रार के पास रजिस्ट्री के लिए भेज दिये जाते है। भाग १ के सम्बन्ध मे इन नियमों को स्टैंडिंग आर्डर कहते हैं। स्टैंडिंग आर्डरो के सम्बन्ध मे यदि मजदूरो को कोई आपत्ति हो तो उन नियमो के प्रचलित होने के १५ दिनो के अन्दर उन्हे अपनी आपत्ति लेबर कमिश्नर के पास भेजनी चाहिए। लेबर कमिश्नर के फैसले के विरुद्ध स्टैंडिग आर्डरो के सम्बंध मे औद्योगिक अदालत या पचायत मे अपील की जा सकती है। लेकिन एक बार नियमों के अन्तिम रूप से तय हो जाने पर ६ महीने तक उनमे कोई परिवर्तन नहीं हो सकता। यदि मालिक या मजदूरो मे से कोई पक्ष उन नियमो मे परिवर्तन कराना चाहे तो उसे दूसरे पक्ष तथा लेबर कमिश्नर, लेबर आफिसर, अथवा विशेष समझौता कराने वालों को नोटिस देना होगा। यदि १५ दिन के अन्दर दोनो पक्षो मे कोई समझौता हो जाता है तो उस समझौते की एक प्रति लेबर कमिश्नर, लेबर आफिसर तथा रजिस्ट्रार को रजिस्ट्रेशन के लिए भेजी जानी चाहिए। यदि दोनो पक्षो मे कोई समझौता न हो सके तो नोटिस देने वाला पक्ष नोटिस देने के २१ दिन के अन्दर लेबर कमिश्नर को सारे मामले का ब्योरा (लिखित) भेजेगा। जब झगडे के सम्बन्ध मे लिखित ब्योरा आजावेगा तो प्रान्तीय सरकार उस झगडे की महत्ता के अनुसार उसे तय करने के लिए मुख्य समझौता कराने वाले, विशेष समझौता कराने वाले, अथवा समझौता बोर्ड के पास भेजेगी। समझौता कराने वालो को उस मामले की जांच करके दो महीने के अन्दर और अधिक से अधिक ४ महीने के अन्दर अपनी रिपोर्ट भेजनी चाहिए। यदि समझौता हो जावे तो समझौता कराने वालो को समझौते की रजिस्ट्री करवा देना चाहिए और यदि समझौता न हो सके तो उन्हें उस मामले की पूरी रिपोर्ट (कि समझौता क्यो नहीं हुआ) प्रान्तीय सरकार को भेजना चाहिए। प्रान्तीय

सरकार उस रिपोर्ट को जनता की जानकारी के लिए प्रकाशित कर देगी।

(४) स्टैंडिंग आर्डर के सम्बंध में अन्तिम निर्णय या समझौता होने से पूर्व अथवा समझौता हो जाने पर ६ महीने व्यतीत हो जाने के पूर्व, अथवा हडताल करने से पहले आवश्यक नोटिस न देने पर अथवा समझौते की व्यवस्था जो कि कानून द्वारा बनाई गई है उसके पूरा हुए बिना ही यदि मजदूर हडताल करदें तो वह गैर कानूनी होगी।

इसी भांति बिना स्टैंडिंग आर्डर के सम्बन्ध में समझौता हुए अथवा समझौता होने पर एक वर्ष व्यतीत हो जाने के पूर्व अथवा बिना पूर्व सूचना दिये कोई परिवर्तन करने पर अथवा समझौते की व्यवस्था को पूरा हुए बिना यदि मिल मालिक द्वारावरोध (कारखाना बंद कर दें) करें तो वह गैर कानूनी होगा।

(५) एक्ट के अनुसार जो ट्रेड यूनियन (मजदूर सभायें) सरकार से स्वीकृत है वे औद्योगिक झगडों मे मजदूरों का प्रतिनिधित्व कर सकती है। इन ट्रेड यूनियनों को तीन समूहों में बांटा गया है।

(अ) वे ट्रेड-यूनियने जिनके सदस्यों की संख्या उस धंधे मे लगे हुए मजदूरो की पांच प्रतिशत से कम नहीं है, रजिस्ट्रार को प्रार्थना-पत्र भेज सकती है और वे क्वालीफाइड ट्रेड यूनियन घोषित कर दी जावेगी।

(ब) वे ट्रेड यूनियने जिनके सदस्यों की संख्या उस धंधे मे लगे हुए मजदूरों की पांच प्रतिशत से कम नहीं है और जिसको उस धधे के २५ प्रतिशत मालिकों या ट्रेड यूनियनों ने स्वीकार कर लिया हो, प्रार्थना पत्र दे सकती है और वे "रजिस्टर्ड ट्रेड' यूनियन घोषित कर दी जावेगी।

(क) एक यूनियन जो 'रजिस्टर्ड यूनियन' है और समस्त मजदूरों की २५ प्रतिशत सख्या पिछले ६ महीने मे उसकी सदस्य रही हे वह 'प्रतिनिधि यूनियन' 'Representative Union, घोपित कर दी जा सकती है।

रजिस्ट्रार को यह अधिकार है कि वह किसी यूनियन को रजिस्टर

करना अस्वीकार करदे यदि उसे यह विश्वास हो जावे कि रजिस्ट्री का प्रार्थना पत्र मजदूरों के हित मे नहीं वरन मालिकों के हित मे है। यह विधान इस लिए बनाया गया है कि मिल मालिकों द्वारा प्रोत्साहित "कम्पनी यूनिअनों" की स्थापना न हो सके। इन तीनो प्रकार की ट्रेड यूनियनो को यह अधिकार दिया गया है कि वे उन औद्योगिक झगडों मे जिनमे कि उनके यथेष्ट सदस्यों का सम्बन्ध हो अपने प्रतिनिधि भेजे। एक्ट के अनुसार मालिक इन ट्रेड यूनियनों के प्रतिनिधियो से झगडे के सम्बन्ध मे बात चीत करने के लिए बाध्य है। यद्यपि एक्ट मिल मालिको को प्रत्यक्ष रूप से इन ट्रेड यूनियनो को स्वीकार करने के लिए विवश नही करता परन्तु अप्रत्यक्ष रूप से मिल मालिको को एक्ट ने ट्रेड यूनियनो को स्वीकार करने के लिए विवश कर दिया है।

(६) एक्ट के अन्दर इस बात का भी प्रबन्ध कर दिया गया है कि मिल मालिक किसी मजदूर या कर्मचारी को ट्रेड यूनियन के कार्य मे भाग लेने के कारण किसी बहाने हानि नही पहुँचा सकते। कोई मालिक किसी व्यक्ति को ट्रेड यूनियन मे काम करने के कारण निकाल नही सकता और न उसकी अवनति ही कर सकता है।

इस कानून की अवहेलना करने पर कानून के अन्दर कठोर दण्ड की व्यवस्था है।

इस कानून मे १९४१ मे एक महत्वपूर्ण संशोधन कर दिया गया है। कुछ धन्धो में झगडा उठ खडा होने पर "पंचायत" अनिवार्य कर दी गई है और प्रान्तीय सरकार को यह अधिकार दे दिया है कि यदि किसी औद्योगिक झगडे से जनता को घोर कष्ट हो या धन्धे को बहुत हानि हो तो वह उस झगडे को पंचायत या औद्योगिक अदालत के सुपुर्द कर दे।

भारतीय ट्रेड यूनियन एक्ट १९२६

१९२६ में बकिंगघम मिल्स में हडताल कराने पर उक्त मिल के

मालिकों ने मदरास लेबर यूनियन के पदाधिकारियों के विरुद्ध मुकदमा दायर कर दिया था और अदालत ने उनके विरुद्ध डिगरी दे दी थी। तब से ही ट्रेड यूनियन को कानूनी संरक्षण दिलवाने के लिए प्रयत्न किया गया और १९२६ में उक्त कानून बना। इस कानून का उद्देश्य ट्रेड यूनियनों को कानूनी दर्जा देना और उन्हें हडतालों के सम्बन्ध में फौज़दारी तथा माल के जुर्म से मुक्त कर देना है। उसकी मुख्य धारायें नीचे लिखी है।

(१) मज़दूरो की कोई भी संस्था ट्रेड यूनियनों के रजिस्टार को रजिस्ट्री करने के लिए प्रार्थना-पत्र भेज सकती है और यदि रजिस्ट्रार को इस बात का संतोष हो जावे कि वह संस्था ट्रेड यूनियन का कार्य करने के लिए बनाई गई है तो वह उसकी रजिस्ट्री करने के उपरान्त उसे एक रजिस्ट्री का प्रमाण पत्र दे देगा।

(२) ट्रेड यूनियन के साधारण कोष में से रूपया केवल ट्रेड यूनियन के वास्तविक कार्यों के लिए ही व्यय किया जा सकता है। अन्य कार्यों के लिए साधारण कोष मे से धन व्यय नहीं किया जा सकता।

(३) ट्रेड यूनियन राजनीतिक कार्यों के लिए एक विशेष राजनीतिक कोष स्थापित कर सकती है और अपने सदस्यों से उसके लिए चंदा ले सकती है। किन्तु यदि कोई सदस्य उस राजनीतिक कोष में चंदा न देना चाहे तो उसको ट्रेड यूनियन की सदस्यता से हटाया नही जा सकता।

(४) जो ट्रेड यूनियन रजिस्टर्ड हैं उनके विरुद्ध हड़ताल के सम्बन्ध मे कोई मुकदमा नही चलाया जा सकता।

(५) कम से कम ट्रेड यूनियन के आधे पदाधिकारी स्वयं मजदूर होने चाहिये जो कि उस धंधे में कार्य करते हों जिसका सम्बन्ध ट्रेड यूनियन से है। यह व्यवस्था इस लिए की गई है कि जिससे बाहर के व्यक्ति ट्रेड यूनियन को न हथिया लें।

(६) प्रत्येक ट्रेड यूनियन को अपना हिसाब रजिस्ट्रार के पास प्रतिवर्ष भेजना पडता है। उन्हें पदाधिकारियों में यदि कोई परिवर्तन हो

अथवा नियमों मे कोई परिवर्तन हो तो उसकी सूचना भी देनी होती है।

इस एक्ट के बन जाने से ट्रेड यूनियनों का कानूनी दर्जा बहुत ऊँचा हो गया है। बम्बई हड़ताल कानून ने तो ट्रेड यूनियनो को और भी अधिक महत्व प्रदान कर दिया है। बम्बई हडताल कानून ट्रेड यूनियनो के स्वाभाविक विकास मे बहुत सहायक सिद्ध हो रहा है।

मजदूरो की सुख सुविधा सम्बन्धी कानून

फैक्टरी एक्ट में सफाई, स्वास्थ्य, सुरक्षा इत्यादि के सम्बन्ध में जो विधान कर दिया गया है, तथा जो मजदूरो की सुख-सुविधा के कार्य स्वतंत्र रूप से मिल मालिक अपने कारखानो मे करते है, उनको छोडकर मजदूरों की सुख सुविधा के सम्बन्ध मे यदि कोई कानन है तो वह मजदूर स्त्रियों के बच्चा उत्पन्न होने के समय उन्हे सवेतन छुट्टी देने के सम्बन्ध मे है। १९२९ मे सर्व प्रथम बम्बई मे मैटरनिटी बैनीफिट एक्ट बना (जो १९३४ मे संशोधित हुआ) इसके उपरान्त क्रमश· मध्यप्रांत (१९३०) मदरास (१९३५) देहली (१९३६) संयुक्तप्रात (१९३८) बगाल (१९३९) आसाम (१९४०) केन्द्रीय सरकार का कोयले की खानो सम्बन्धी एक्ट (Mines Maternity Benefit Act 1941) बनाये गये। केन्द्रीय सरकार का खानो सम्बन्धी मातृत्व लाभ एक्ट अभी केवल कोयले की खानो में लागू हे।

इन कानूनो की मुख्य मुख्य बाते लगभग एकसी है। इन कानूनो के अनुसार प्रत्येक मालिक को स्त्री मजदूर को जिसने फैक्टरी या खान मे लगातार एक निश्चित समय तक काम कर लिया है (अधिकतर प्रांतो में यह अवधि ९ महिने की है) बच्चा होने से पहले और बाद को एक निश्चित अवधि (४ सप्ताह पहले और ४ सप्ताह बाद को) की छुट्टी देनी होगी और छुट्टी के समय कुछ अलाउन्स देना होगा। कितनी अवधि तक लगातार काम करने पर स्त्री मजदूर छुट्टी अलाउन्स की हकदार हो जावेगी, छुट्टी बच्चा होने से पहले और बाद कुल मिलाकर

कितने सप्ताह की होगी और छुट्टी के समय में कितना अलाउन्स मिलेगा, यह भिन्न भिन्न एक्टों में भिन्न है, परन्तु मूल सिद्धांत सभी में एक ही है। नीचे भिन्न भिन्न प्रांतों के कानूनों का ब्योरा दिया जाता है।

भिन्न-भिन्न प्रान्तो में मातृत्व लाभ कानून

नाम प्रांत	अवधि जिसमे लगातार काम करने पर स्त्री मज़दूर अलाउंस और छुट्टी की अधिकारी हो जाती है	मातृत्व लाभ पाने का अधिक से अधिक समय	मातृत्व लाभ की दर
	महीने	सप्ताह	
१ बम्बई ...	९	८	८ आना प्रति दिन या औसत दैनिक मजदूरी जो भी कम हो
२ सिंध ...	९	८	
३ मध्यप्रांत बरार ...	९	८	ऊपर के अनुसार
४ अजमेर मेरवाड़ा ...	१२	६	,, ,,
५ आसाम ...	९	८	,, ,,
६ मदरास ...	९	७	८ आना प्रतिदिन
७ देहली .	९	८	ऊपर के अनुसार
८ संयुक्तप्रांत	६	८	८ आना प्रतिदिन या औसत दैनिक मजदूरी जो भी अधिक हो।
९ बंगाल ...	९	८	ऊपर के अनुसार

मदरास और बंगाल मातृत्व लाभ कानूनों में एक विशेषता यह है कि उनमे इस बात का भी समावेश कर दिया गया है कि यदि मालिक स्त्री मजदूर को मातृत्व लाभ के देने से बचने के लिए नौकरी से हटा दे तो उसको दण्ड दिया जावे। मदरास कानून में यह विधान किया गया है कि मालिक बच्चा होने के ३ महीने पहले स्त्री मजदूर को नौकरी से हटाने

अन्तर्गत इस बात का विधान है कि यदि कोई व्यक्ति किसी फैक्टरी, खान, रेलवे स्टेशन, या बंदरगाह मे इस उद्देश्य से घूमता हो कि वह अपना रुपया मजदूरो से वसूल करेगा तो उसको ६ महीने तक की सजा हो सकती है। यह कानून १९४० में संशोधित हो गया है। अब और भी कडाई के साथ महाजन का उस स्थान का घेरना वर्जित कर दिया गया है, जहां कि मजदूर को उसका वेतन मिलता है। साथ ही रेल, डाक, तार, बिजली इत्यादि जन-उपयोगी धंधों और समुद्री जहाजों पर काम करने वालों को भी इस कानून के अन्तर्गत संरक्षण प्रदान कर दिया गया है।

पंजाब कर्जदारी कानून (१९३४)

पजाब कानून में एक ऋणी व्यक्ति (judgment debtor) जिसके ऋण के सम्बंध मे न्यायालय ने फैसला दे दिया है, ऋण को चुकाने में असमर्थ होने पर कैद नहीं किया जा सकता। वह केवल उसी दशा मे कैद किया जा सकता है कि जब वह उस ऋण को जो कि उसकी चुकाने की क्षमता के अन्दर है, अपनी उस सम्पत्ति को बेचकर चुकाने से इनकार करता है जो कि कुर्क हो सकती है।

केन्द्रीय सिविल प्रोसीजोर एक्ट संशोधन कानून १९३६

इस कानून के अतर्गत ऋणी व्यक्ति को उस समय तक कैद नही किया जा सकता, जब तक यह प्रमाणित न हो कि वह अपने स्थान को छोड कर अदालत के क्षेत्र के बाहर जाना चाहता है, अथवा वह बेईमानी से अपनी सम्पत्ति को किसी दूसरे के नाम करता है, जब कि ऋणी व्यक्ति उस सम्पत्ति को बेच कर ऋण की चुकाने की क्षमता रखता है, जो कि कुर्क की जा सकती है, जिससे कि अदालत का फैसला कार्य रूप में परिणित न हो सके।

केंद्रीय कानून केवल उद्योग धधों मे काम करने वाले मजदूरों के ही लिये लागू नहीं है, वरन उन सभी कर्जदारों के लिए लागू होता है जिनका न्यायालय से फैसला हो चुका है।

देशी राज्यों के मजदूर कानून

ब्रिटिश भारत में मजदूर सम्बन्धी कानून के बनने से देशी राज्यों पर भी प्रभाव पड़ा और कुछ देशी राज्यों ने मजदूर कानून बनाये हैं। अधिकांश देशी राज्यों मे आज भी मजदूर कानून नही है। ध्यान में रखने की बात यह है कि ब्रिटिश भारत में जब से राष्ट्रीय आंदोलन प्रबल हुआ और उसके फलस्वरूप मज़दूरों मे भी वर्ग चैतन्य का उदय हुआ, तब से क्रमशः पूंजीपति अपनी पूंजी ब्रिटिश भारत में न लगा कर देशी राज्यों मे लगा रहे हैं। देशी राज़्यो मे आय कर तथा अन्य कर नहीं है। मजदूर कानून या तो है ही नहीं और यदि है भी तो उनका कठोरता से पालन नहीं होता। देशी राज्यों में मजदूर आंदोलन नाम मात्र को भी नही है और यदि कहीं मजदूर सगठन है भी तो वे अशक्त है क्योंकि नरेश मजदूरो के संगठन को कभी भी सहन नहीं करते। पूंजीपति बहुधा नरेश को प्रति वर्ष कुछ रकम देते हैं या कम्पनियों मे उनको हिस्से दे देते है। राज्य के मंत्री इत्यादि उनके डायरेक्टरो मे होते है। ऐसी दशा मे यदि राज्य मे मजदूर एक्ट हों भी तो उनका ठीक से कभी पालन नही होता। यही सब कारण है कि पिछले बीस वर्षों मे देशी राज्यो में बड़ी तेजी से फैक्टरियां स्थापित हुई है और आज भी हो रही हैं। उनमे कुछ देशी राज्यो ने ब्रिटिश भारत के कानूनो के आधार पर मजदूर कानून बनाये है.—उनमें मुख्य राज्य नीचे लिखे हैं—मैसूर, बड़ौदा, हैदराबाद, इंदौर, ट्रावनकोर और कोचीन। इनमे अधिकांश रियासतो के कानूनों में ६० घंटे काम की आज्ञा दी हुई है।

१९२० मे भारत सरकार ने देशी राज्यो के सम्बन्ध में एक जांच करवाई थी। उस समय कुल ४८ राज्यो में फैक्टरियां, खान, खानें, या रेलवे या बंदरगाह थे किन्तु केवल २२ में नाम मात्र के मजदूर कानून बने हुए थे। १९३० के उपरान्त देशी राज्यो में बहुत तेजी से कारखानों की स्थापना हुई है। सबसे छोटे से छोटे राज्यों में भी जोरों से फैक्टरियाँ

की स्थापना का काम चल रहा है और लगभग सभी राज्यों में जहा रेल कारखाने खुलते जा रहे हे। यद्यपि इन वर्षों में मजदूर कानून भी बहुत से राज्यों मे बने है परन्तु फिर भी अधिकांश देशी राज्यो मे कोई मजदूर कानून नही है । जहाँ मजदूर कानून हैं भी वे ब्रिटिश भारत के कानूनों की तुलना मे बहुत ही पीछे हैं। फिर उन कानूनो का भी ठीक तरह से पालन नही होता । अस्तु यह स्पष्ट है कि देशी राज्यो में मजदूरों की दशा और भी दयनीय हे।

उपसंहार

द्वितीय महायुद्ध (१८३८-४५) में कुछ कारखानो में जहा युद्धोपयोगी वस्तुओं का निर्माण होता था अस्थायी रूप से काम के घंटो को बढा कर ६० प्रति सप्ताह कर दिया गया था, कोयले की खानों मे स्त्रियों को पृथ्वी के अन्दर काम करने की आज्ञा देदी गई किन्तु युद्ध जनित सकट टलते ही, यह अस्थायी छूट फिर वापस ले ली गई।

यही नहीं युद्ध के उपरान्त जहां देश की औद्योगिक उन्नति की अनेक योजनायें उपस्थित की जारही है वहां मजदूर कानूनों मे भी आवश्यक सुधार और परिवर्तन करने की चेष्टा की जारहो है। १६४५ के नवम्बर दिसम्बर मास मे भारत सरकार के तत्कालीन मजदर सदस्य डाक्टर अम्बेडकर की अध्यक्षता मे जो सरकार, मिल मालिकों तथा मजदूरों के प्रतिनिधियो का त्रिदलीय सम्मेलन हुआ था, उसमे काम के घंटो को ५४ से घटा कर ४८ करने, न्यूनतम मजदूरी कानून बनाने, तथा अन्य कानून बनाने की बात तय हुई थी। अस्तु यह आशा है कि नवीन फैक्टरी एक्ट मे काम के घटे घटा कर ४८ कर दिये जावेगे तथा न्यूनतम मजदूरी कानून अवश्य बन जावेगा।

अस्तु जहां तक बाहर से देखने से ज्ञात होता है, भारतीय मजदूर-कानून अन्य देशों की तुलना में पीछे नहीं है । परन्तु केवल कानून बन जाने से ही मजदूरो को पूरा संरक्षण मिल जावे यह आवश्यक नहीं है।

कानूनों की पाबंदी कैसी होती है, इस पर मजदूरों की दशा बहुत कुछ निर्भर रहती है। खेद के साथ कहना पडता है कि भारत में मजदूर कानूनों की पाबंदी कठोरता के साथ नही होती। पहले तो भारतीय मजदूर पूर्ण रूप से संगठित नहीं है, इस कारण फैक्टरियों के अन्दर कानूनों की अवहेलना रोकने का साधन ही निर्बल है। दूसरे, सरकार द्वारा मनोनीत फैक्टरी इन्स्पेक्टर इतने कम है कि वे फैक्टरियों का भली-भांति निरीक्षण नहीं कर पाते। वर्ष में एक बार या दो बार निरीक्षण होने से कानून की ठीक पाबंदी होना कठिन है। जो कारखाने छोटी-छोटी जगहों और कस्बो में है, वहां फैक्टरी इन्स्पेक्टर मिल-मैनेजर का अतिथि होता है, उसकी सवारी का उपयोग करता है, फिर वह फैक्टरी का चलता-फिरता निरीक्षण करता है। देशीराज्यों में तो निरीक्षण केवल एक दिखावा मात्र होता है। तीसरे, यदि कोई गैर कानूनी बात पकडी भी गई तो भी बहुत हलका दण्ड दिया जाता है। बहुधा तो चेतावनी देकर छोड दिया जाता है। लेबर-कमीशन तक को यह बात स्वीकार करनी पडी कि भिन्न-भिन्न प्रान्तो में कानूनो की पाबंदी एक-सी नही होती। बिहार, उडीसा और आसाम में अत्यधिक नरमी बरती जाती है। यही नहीं, अधिकांश प्रान्तों मे बार-बार एक ही जुर्म करने पर भी नाम मात्र का जुर्माना होता है।

आवश्यकता इस बात की है कि प्रत्येक स्थान में कुछ गैर-सरकारी फैक्टरी निरीक्षक नियुक्त किये जावें और उन्हे फैक्टरियों के निरीक्षण का अधिकार दिया जावे। साथ ही, कानून की अवहेलना होने पर कडाई से दण्ड दिया जाय। तभी मजदूरो को उचित संरक्षण मिल सकता है।

इस सम्बन्ध में एक बात और भी ध्यान देने योग्य है कि आगे चल कर भिन्न-भिन्न प्रान्तों और देशीराज्यो मे यदि मजदूर-कानूनों मे अधिक भिन्नता हो गई तो वह कानून की प्रगति को रोक देगी। उदाहरण के लिए यदि एक प्रान्त की सरकार अधिक प्रगतिशील है और पड़ोसी देशी-राज्य अथवा प्रान्त के मजदूर-कानून पिछडे हुए है तो प्रगतिशील प्रान्त की औद्योगिक उन्नति रुक सकती है। वहाँ की पूँजी अन्य स्थानो पर

जाकर लगेगी। ऐसी दशा में दो प्रान्तों या देशी राज्यों के मजदूरों की दशा में बहुत भेद हो जावेगा, जो कि उचित न होगा।

एक और भी समस्या है, जिसकी ओर अभी तक किसी ने भी ध्यान नहीं दिया है। भारत में फैक्टरियों के अन्दर काम करने वालों की संख्या बहुत कम है। खेती के मजदूरों, छोटे-छोटे काम धंधों में कार्य करने वालों की संख्या बहुत ही अधिक है, किन्तु अभी तक उनको कोई कानूनी संरक्षण नहीं मिला है।

सन् १९४६ के कुछ नये कानून

काम के घंटे

१९४६ में मजदूरों से सम्बन्धित कई कानून पास हुए, उनमें सब से महत्वपूर्ण १९३४ के फैक्टरी एक्ट का संशोधन था। इस कानून के अनुसार कारखानों में काम के घंटों को ५४ प्रति सप्ताह से घटा कर ४८ कर दिया गया और मौसमी कारखानों में काम के घंटों को ६० से घटा कर ५० कर दिया। किन्तु प्रान्तीय सरकारों को यह अधिकार दे दिया गया कि यदि वे चाहें तो किसी धंधे को इस नवीन कानून से मुक्त कर सकती हैं। अर्थात् यदि प्रान्तीय सरकार चाहे तो किसी धंधे विशेष को पूर्ववत् ५४ घंटे प्रति सप्ताह काम करने की अनुमति दे सकती है। इस कानून की एक अन्य धारा से ओवरटाइम (निर्धारित काम के घंटों से अधिक) काम लेने पर दुगने रेट से मजदूरी देने की व्यवस्था की गई है। अभी तक यदि ओवरटाइम काम लिया जावे तो केवल ड्योढ़ी दर से मजदूरी दी जाती थी। किन्तु अब ओवरटाइम काम करने पर मजदूर को दुगने रेट से मजदूरी देनी होगी। कानून का उद्देश्य यह है कि ओवरटाइम काम न लिया जावे। यह कानून १ अगस्त १९४६ से लगा दिया गया।

सवेतन छुट्टी

उससे पूर्व ही फैक्टरी एक्ट का १९४५ में संशोधन हो गया था,

जिसको १ जनवरी १९४६ मे लागू किया गया। इस कानून के अनुसार प्रान्तीय सरकारों को अधिकार दिया गया कि वे मजदूरों को सवेतन छुट्टी देने के सम्बन्ध मे नियम बनावें। इस कानून के अन्तर्गत प्रांतीय सरकारों ने नियम बनाकर प्रत्येक कारखाने में मजदूरों को वर्ष में १० दिन की छुट्टी देने का नियम बना दिया है। एक वर्ष मे मजदूरों को १० दिन की सवेतन छुट्टी मिलती है, किन्तु जिस मजदूर ने कारखाने मे एक वर्ष पूरा नही किया, उस मजदूर को यह अधिकार नही है अर्थात् उसे सवेतन छुट्टी नही मिल सकती। दूसरे शब्दों मे नये मजदूर जब तक एक वर्ष पूरा न कर लें, तब तक वे दस दिन की सवेतन छुट्टी के हकदार नही होते। पुराने मजदूरों के सम्बन्ध मे भी यह शर्त है कि यदि वे वर्ष में ६० दिन से अधिक गैरहाजिर होते है तो उनको १० दिन की वेतन सहित छुट्टी नहीं मिलती।

न्यूनतम मजदूरी बिल

भारत सरकार ने जनवरी १९४६ मे न्यूनतम मजदूरी कानून बनाने के उद्देश्य से एक बिल तैयार किया, जो कि मजदूर संघों तथा मिल-मालिक संघों के पास उनकी सम्मति के लिए भेजा गया है। इस बिल के अनुसार सभी उद्योग-धंधों, व्यापार तथा खेती मे काम करने वालों की न्यूनतम मजदूरी निर्धारित कर दी जावेगी। कानून बन जाने के उपरान्त दो वर्ष के अन्दर प्रांतीय सरकारें प्रत्येक धंधे और खेती में न्यूनतम मजदूरी निर्धारित कर देंगी। न्यूनतम मजदूरी कितनी निर्धारित होगी, इसका निर्णय करने के पूर्व प्रांतीय सरकार कमेटियाँ बिठावेगी, जिनमे मजदूरों तथा मिल-मालिकों के बराबर प्रतिनिधि होंगे। ऐसी आशा है कि शीघ्र ही भारत में न्यूनतम मजदूरी कानून बन जावेगा।

भारत सरकार की पंचवर्षीय योजना

१९४६ के अन्त मे भारत-सरकार ने मजदूरों की दशा में सुधार करने की दृष्टि से एक पंचवर्षीय योजना तैयार की और उसको मिल

मालिको तथा श्रमजीवी समस्याओं मे रुचि रखने वालो के पास सम्मति के लिए भेजा। इस पंचवर्षीय योजना के तैयार करने में भारत सरकार को १९३१ के शाही लेबर कमीशन की मजदूरो के स्वास्थ्य तथा उनकी कार्यक्षमता को बढाने के लिये की गई सिफारिशो तथा 'रेज कमेटी' की रिपोर्ट से विशेष प्रेरणा मिली थी। १९४४ मे भारत सरकार ने उद्योग-धंधो में लगे हुए मजदूरो की मजदूरी, उनकी नौकरी की शर्तें तथा रहने के मकानो की समस्या को जाच करने के लिए कमेटी बिठाई थी। इस कमेटी ने ३८ धधो को जाच की और मजदूरो से सम्बन्धित बहुत ही उपयोगी और मूल्यवान सामग्री इकट्ठी की। कमेटी ने नीचे लिखे दोष पाये, जिनको दूर करना नितान्त आवश्यक है। १. अधिकांश धंधो मे मजदूरी की दर बहुत नीची है। २. धंधो में नौकरी की शर्तों तथा मजदूरो की दर का कोई एक मापदण्ड [स्टैन्डर्ट] निर्धारित नही है। ३ महगाई के भत्ते का अलाउन्स भी एक समान सब जगह और सब धंधो में नही दिया जाता। ४. मजदूर भरती करने, उनकी उन्नति तथा उनकी बरखास्तगी की पद्धति बहुत ही दोषपूर्ण है, जिससे घूसखोरी को प्रोत्साहन मिलता है और मजदूरो का शोषण होता है। ५ जिस दशा मे मजदूरो को कारखानो मे काम करना पडता है, वह अत्यन्त अवांछनीय है और मजदूरो की कार्यक्षमता तथा उनके स्वास्थ्य को नष्ट करती है। इसका मुख्य कारण यह है कि फैक्टरी कानूनो की अवहेलना होती है और उनके अन्तर्गत कारखानो का ठीक निरीक्षण तथा देखभाल नही होती। ६. जब मजदूर बीमार होते हैं तो उनकी चिकित्सा का उचित प्रबंध नही है और न उनको बीमारी के भत्ते देने की ही व्यवस्था है। ७. रहने के मकानो की समस्या अत्यत विकट है, मजदूरो को नारकीय जीवन व्यतीत करने पर विवश होना पडता है।

कमेटी की उक्त रिपोर्ट ने भारत सरकार के ध्यान को विशेष रूप से आकर्षित किया और उसने मजदूरों की दशा मे सुधार करने के उद्देश्य से उक्त पचवर्षीय योजना तैयार की।

इस पंचवर्षीय योजना मे मजदूरों की सभी प्रमुख समस्याओं पर विचार किया गया है,—अर्थात् मजदूरी, काम के घंटे, फैक्टरियो मे काम किस प्रकार होता है, वहां की दशा कैसी है, रहने के मकानों की समस्या, चिकित्सा, सामाजिक सुरक्षा (Social Security) सम्बन्धी उपाय, मजदूरों और मालिको का सम्बन्ध इत्यादि। पंचवर्षीय योजना मे केवल कारखानों में काम करने वाले मजदूरों के बारे मे ही विचार नही किया गया है, वरन् खेती, बागो (चाय इत्यादि के) व्यापारिक फर्मों तथा इमारते बनाने के काम मे लगे हुए मजदूरों के बारे मे भी विचार किया गया है। उक्त योजना में मजदूरों से सम्बन्धित सभी तथ्यों, आँकड़ों को इकट्ठा करने तथा प्रकाशित करने की व्यवस्था है। इस योजना के अन्तर्गत इन्डियन लेबर कान्फरेन्स, स्टैंडिंग लेबर कमेटियां और कोयले, जूट, सूतीवस्त्र चाय के बागों तथा इन्जिनियरिंग धंधों के लिए इन्डस्ट्रियल कमेटियां बिठाई जावेंगी। इन संस्थाओं का मुख्य उद्देश्य मजदूर समस्याओं का अध्ययन करना और उनकी दशा को किस प्रकार सुधारा जा सकता है, इस सम्बन्ध में सुझाव उपस्थित करना है।

न्यूनतम मजदूरी बिल (१९४६)

१९४६ मे जब मजदूर वर्ग अत्यन्त क्षुब्ध हो उठा और मंहगाई के फलस्वरूप देश में हड़तालों का तांता-सा लग गया, तब भारत सरकार ने अपनी पूर्व घोषणा के अनुसार एक न्यूनतम मजदूरी बिल तैयार किया और उसको मिल मालिकों के संघों के पास भेजा। इस बिल के अन्तर्गत सभी उद्योग-धंधे, व्यापार तथा कृषि में भी न्यूनतम मजदूरी निर्धारित करने की व्यवस्था है। इस बिल में इस का विधान है कि भारत सरकार द्वारा न्यूनतम मजदूरी कानून बना दिये जाने पर प्रान्तीय सरकारें धंधों तथा खेती मे काम करने वाले मजदूरों के लिए न्यूनतम मजदूरी निर्धारित कर दे। कितनी मजदूरी निर्धारित की जावे, इसका निर्णय करने को प्रान्तीय सरकारें कमेटियां बिठावेंगी, जिनमें आधे सदस्य

मिल-मालिको के तथा आधे सदस्य मजदूरो के प्रतिनिधि होगे।

यह बिल एसेम्बली मे उपस्थित कर दिया गया है, किन्तु उस पर विचार नही हो सका है। आशा है कि शीघ्र ही भारत में सभी धंधो में न्यूनतम मजदूरी कानून लागू हो जावेगा।

हडताल सम्बन्धी बिल

यह तो पहले ही कह चुके हैं कि बम्बई में हडताल सम्बन्धी कानून १९३८ में बना था। १९४६ मे कानून का संशोधन किया गया और वह केवल वस्त्र व्यवसाय मे ही नही, वरन् सभी धन्धो में लागू कर दिया गया।

बाद को मध्यप्रान्त, संयुक्तप्रान्त और मदरास की प्रान्तीय सरकारो ने बम्बई के सदृश हडताल सम्बन्धी कानून बनाने की इच्छा प्रगट की। मध्यप्रान्त ने तो एक कानून बना भी दिया। किन्तु भारत सरकार ने जब बम्बई के सदृश एक हडताल सम्बन्धी कानून बनाने की घोषणा की तो संयुक्तप्रान्त तथा मदरास ने अपने बिल वापस ले लिए।

भारत सरकार का हडताल सम्बन्धी बिल (१९४६) बम्बई हडताल सम्बन्धी कानून पर आश्रित है। इस बिल पर एसेम्बली मे यथेष्ट बहस होने के उपरान्त उसे सिलेक्ट कमेटी के सुपुर्द कर दिया गया है और आशा है कि वह शीघ्र ही एक्ट के रूप में आ जावेगा।

इस कानून के अनुसार दो नवीन संस्थाओ की स्थापना की जावेगी। इन संस्थाओ का कार्य हडतालो को रोकना और मिल-मालिकों तथा मजदूरो के झगडो को निपटाना है। पहली संस्था 'वर्क्स कमेटी' होगी, जिसमें मजदूरो और मिल-मालिको के प्रतिनिधि होंगे। दूसरी संस्था का नाम 'औद्योगिक ट्रिब्यूनल' है। इसके सदस्यों की योग्यता हाई-कोर्ट के जजो की योग्यता के समान होगी। इस कानून के अन्तर्गत सरकार को यह अधिकार होगा कि वह किसी भी झगडे को ट्रिब्यूनल के पास फैसले के लिए भेज दे अथवा पंच नियुक्त कर दे और उनके फैसले को दोनों पक्षो पर लागू कर दे। 'वर्क्स कमेटियो' का कर्तव्य यह होगा

कि जो भी कोई नवीन परिवर्तन कारखाने में होगा अथवा यदि मज़दूरों की कोई मांग होगी तो सबसे पहले वह 'वर्क्स कमेटी' के सामने उपस्थित की जावेगी। यदि वहां कोई समझौता न हो सकेगा तो फिर सरकार उस झगडे को पंच के सुपुर्द कर देगी अथवा ट्रिब्यूनल को फैसले के लिये दे देगी, तब तक दोनों पक्ष क्रमशः द्वारावरोध अथवा हड़ताल नहीं कर सकेंगे।

मजदूर संघो की स्वीकृति सम्बन्धी बिल (Trade Union Recognition Bill)

१९४६ मे भारत सरकार ने ट्रेड यूनियनो की स्वीकृति के सबंध मे एक बिल एसेम्बली में उपस्थित किया था। जब बिल पर बहस हो रही थी तो कुछ सदस्यो ने जातिगत ट्रेड यूनियनों को स्वीकृति के प्रश्न को भी उठाया। परन्तु अधिकांश धारा-सभा के सदस्यों का मत था कि जातिगत मजदूर संघ मजदूरों के हितों के विरुद्ध होंगे। अस्तु, हिन्दू अथवा मुस्लिम मजदूर संघों को स्वीकार न किया जावे। यह बिल सिलेक्ट कमेटी को विचार के लिए दे दिया गया है और आशा है कि शीघ्र ही कानून बन जावेगा।

कैन्टीन बिल

भारत सरकार ने एक बिल इस आशय का केन्द्रीय धारा-सभा में उपस्थित किया है कि जिस कारख़ाने मे २५० मजदूरों से अधिक काम करते हों, वहां कैन्टीन अवश्य स्थापित किये जावे। साथ ही, इस बिल के अन्तर्गत प्रान्तीय सरकारों को यह भी अधिकार दे दिया गया है कि वे कैन्टीन किस प्रकार के हो, उस सम्बन्ध मे भी नियम बना दें।

मजदूर राजकीय बीमा कानून (Workmen's State Insurance Act 1946)

१९४६ में एक अत्यन्त महत्वपूर्ण कानून बनाया गया, जिसके लिए

तीन वर्षों से तैयारियां हो रही थीं। मजदूरों के स्वास्थ्य के बीमे के सम्बन्ध में जो योजना थी, उसको कार्यरूप में परिणत करने के लिए यह एक्ट पास किया गया है। मजदूरों के इस 'स्वास्थ्य बीमा एक्ट' के अन्तर्गत सभी स्थायी अर्थात् वर्ष भर चलने वाली फैक्टरियों में काम करने वाले कर्मचारी—फिर चाहे वे शारीरिक परिश्रम करते हों अथवा नहीं, चाहे वे स्थायी मजदूर हों अथवा थोड़े दिनों के लिए रक्खे गये हों—बीमा के लाभ के अधिकारी हैं। मौसमी कारखानों को इस कानून से मुक्त कर दिया गया है। इस बीमा कानून के अन्तर्गत यदि कोई मजदूर बीमार हो जावे, मजदूर-स्त्री के बच्चा उत्पन्न हो और काम करते समय मजदूर को चोट लग जावे तो मजदूर को कुछ अलाउन्स दिया जावेगा। जिन मजदूरों का स्वास्थ्य बीमा हो गया है, उनके बीमार पड़ने पर सरकार द्वारा स्थापित विशेष अस्पतालों में उनकी चिकित्सा कराई जावेगी। एक वर्क्समैन इन्स्योरन्स कोर्ट स्थापित की जावेगी, जो कि बीमा सम्बन्धी दावों का फैसला करेगी। इसका प्रबन्ध एक कारपोरेशन के सुपुर्द किया जावेगा, जिसका निर्माण केन्द्रीय व्यवस्थापिका सभा द्वारा होगा। कारपोरेशन का कार्य एक केन्द्रीय बोर्ड करेगा और स्वास्थ्य-कोष (Health Fund) उसके अधिकार में रहेगा। यह केन्द्रीय बोर्ड उन मजदूरों को, जिनके दावों को स्वीकार कर लिया जावेगा, इस स्वास्थ्य-कोष में से निर्धारित अलाउन्स देगा। इस कार्य के लिए एक कोष (फंड) स्थापित होगा, जिसमें मिल-मालिक और मजदूर दोनों ही धन देंगे। जिन मजदूरों को दस आना प्रति दिन से कम मिलता है, उनको इस कोष मे कुछ देना न होगा। इस कानून के अनुसार यद्यपि केन्द्रीय बोर्ड प्रान्तीय सरकारों और केन्द्रीय सरकार से दान स्वीकार कर सकेगा, किन्तु सरकार भी नियमित रूप से इस कोष मे अपना हिस्सा देगी, ऐसा कोई विधान नहीं है।

फैक्टरी कानून का संशोधन और परिवर्धन

अभी कुछ दिन हुए भारत सरकार ने वर्तमान फैक्टरी एक्ट मे संशोधन और परिवर्द्धन करने के उद्देश्य से जनता की सूचनार्थ एक नया फैक्टरी बिल प्रकाशित किया है, जो शीघ्र ही कानून बनकर भारतीय कारखानों पर लागू होगा। भविष्य में भारतीय कारखानों का नियंत्रण इसी कानून के अन्तर्गत होता रहेगा, इस कारण उसके संबध मे भारतीय मजदूरो की समस्याओं का अध्ययन करने वाले पाठकों तथा मजदूर कार्यकर्त्ताओं को पूरी जानकारी प्राप्त कर लेना आवश्यक है। इसी उद्देश्य से हम उसकी मुख्य धाराओ का यहा विवेचन करेंगे। यह कानून संभवतः एक एप्रिल १९४८ से लागू होगा, जो १९३४ के पुराने कानून को रद्द कर देगा। नये फैक्टरी कानून मे नीचे लिखे विशेष परिवर्तन किये गये हैं।

पहला परिवर्तन तो फैक्टरी की भाषा मे ही किया गया है। अभी तक फैक्टरी वह स्थान माना जाता था कि जिसमें यांत्रिक शक्ति का उपयोग किया जावे और जहां २० या उससे अधिक व्यक्ति काम करते हों। इस नये कानून के अनुसार उन स्थानों को भी अब फैक्टरी घोषित कर दिया जावेगा जहां यांत्रिक शक्ति का उपयोग न होता हो किन्तु २० या उससे अधिक व्यक्ति काम करते हों। इसका दूसरे शब्दों में यह अर्थ हुआ कि बहुत से कारबार फैक्टरियों की श्रेणी मे आ जावेंगे और उनके मजदूरो को फैक्टरी कानून का संरक्षण प्राप्त हो जावेगा।

अभी तक अनियंत्रित धन्धों (unregulated industries) में फैक्टरी एक्ट की स्वास्थ्य, काम के घंटे, रोशनी, हवा के सम्बन्ध में जो धाराये लागू नहीं होती थीं, वे भी लागू होंगी: क्योंकि अनियंत्रित कारखानों तथा काम के स्थानों की दशा अत्यन्त दयनीय है। इसके

अतिरिक्त नये फैक्टरी कानून मे मौसमी और स्थायी कारखानों के भेद को समाप्त कर दिया गया है। अब मौसमी कारखानो तथा स्थायी कारखानो मे काम के घंटो इत्यादि में कोई अन्तर न रहेगा।

नये फैक्टरी कानून मे एक महत्वपूर्ण परिवर्तन यह है कि प्रौढ पुरुष की न्यूनतम आयु १७ वर्ष से बढा कर १८ वर्ष कर दी गई है और बालक मज़दूरो की आयु १२ वर्ष से बढा कर १३ कर दी गई है। इसका अर्थ यह हुआ कि १८ वर्ष की आयु से कम का व्यक्ति प्रौढ नहीं माना जावेगा और उसे पूरे ८ घंटे काम नहीं करने दिया जावेगा और १३ वर्ष की आयु से कम का बालक कारखानो में काम न कर सकेगा। बालक मजदूरो के काम के घंटो को नये फैक्टरी कानून में ५ से घटा कर ४½ कर दिया गया है। प्रांतीय सरकारो को यह भी अधिकार दे दिया गया है कि खतरनाक धन्धों के लिए यदि वे चाहें तो बालक मजदूरो की न्यूनतम आयु को १३ वर्ष से भी अधिक कर दे।

सब से अधिक परिवर्तन वर्तमान एक्ट के उस अध्याय में किया गया है, जिसका सम्बन्ध मजदूरो के स्वास्थ्य और सुरक्षा से था। नये एक्ट में एक अध्याय के स्थान पर तीन अध्याय हैं,—१. स्वास्थ्य, २. सुरक्षा, ३. मजदूरो का हितवर्धन। अभी तक कानून मे कारखानो की सफाई, हवा, रोशनी, तापक्रम, खतरनाक गंदी धूल, चिनगारियो, लपटो और तेज चमक से मजदूरो की रक्षा करने के सम्बन्ध में कोई स्पष्ट विधान नही था। जो कुछ भी थोडा सरक्षण मजदूरो को दिया गया था, वह बहुत कुछ फैक्टरी इन्सपेक्टरो की इच्छा पर छोड दिया गया था। इसका परिणाम यह होता था कि कारखानो मे अत्यधिक तापक्रम, लपटे तथा चमक और गदी धूल के कारण मजदूरो के स्वास्थ्य को अपार हानि होती थी। इसके अतिरिक्त आंखो की रक्षा, फर्स्ट एड, विश्राम गृह, शिशु पालन गृह, नहाने-धोने की सुविधाओ तथा मजदूरो की सुरक्षा के सम्बन्ध में भी वर्तमान कानून मे समुचित विधान नहीं था। अब इन महत्वपूर्ण प्रश्नों के

सम्बन्ध मे जो भी उपधारायें है, उनको बिलकुल स्पष्ट कर दिया गया है। इस सब के लिए निश्चित मानदंड निर्धारित कर दिये है, जिन्हे प्रत्येक कारखाने को करना ही होगा। अब फैक्टरी इन्सपेक्टर के हाथ मे यह बात नहीं दी गई है कि यदि आवश्यक समझे तो मिल मैनेजर को आज्ञा दे कि अमुक सुविधा मजदूरों को दी जावे।

इस बिल मे कारखानों की इमारतों के सम्बन्ध मे भी विशेष ध्यान रक्खा गया है। वायु, रोशनी इत्यादि का समुचित प्रबन्ध तभी हो सकता है, जब कि कारखानों की इमारते ठीक प्रकार से बनी हों। अतएव इस बिल के अन्तर्गत प्रान्तीय सरकारों को अधिकार दे दिये गये है कि वे इमारतों के सम्बन्ध में नियम बनावें और उन्हे लागू करे। इस बिल के अनुसार प्रान्तीय सरकार को यह अधिकार प्राप्त है कि वह इस प्रकार का नियम बनादे कि किसी भी नये कारखाने की इमारत बिना प्रांतीय सरकार की आज्ञा के नही बनाई जावेगी और न वर्तमान इमारतों में कोई वृद्धि बिना प्रान्तीय सरकार की आज्ञा के की जावेगी। प्रान्तीय सरकार कारखानों की इमारतों के नक्शे तैयार करायेगी और उनका प्लान किस प्रकार का हो यह भी निर्धारित करेगी। प्रत्येक कारखाने को प्रांतीय सरकार से लायसैंस लेना होगा। लायसैंस के प्रार्थना-पत्र के साथ इमारत का प्लान तथा नक्शा इत्यादि भेजना होगा। इसका परिणाम यह होगा कि इमारतों के ऊटपटांग बने होने से कारखानों में जो वायु तथा रोशनी की कमी रहती है और मजदूरों के लिए खतरा रहता है वह बहुत कुछ दूर हो जावेगा।

बिल मे सवेतन छुट्टियों के बारे में भी परिवर्तन हुआ है। मजदूर सुविधा को दृष्टि में रखते हुए सवेतन छुट्टियां (वर्ष में १० दिन की) वर्ष मे एक साथ न लेकर दो बार में ले सकेगा, साथ ही, वर्ष में २० दिन बिना अधिकारियों की आज्ञा प्राप्त किये अनुपस्थित रहने पर भी वह निकाला नहीं जा सकेगा।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि इस एक्ट के बन जाने से मजदूरों के

स्वास्थ्य, सुरक्षा और हित में वृद्धि होगी। यह कानून वर्तमान फैक्टरी एक्ट से अच्छा है; परन्तु इसमें एक कमी है। जब तक फैक्टरियों के निरीक्षण का उचित प्रबन्ध न हो, तब तक कानून से विशेष लाभ नहीं होगा। इसके लिये आवश्यकता इस बात की है कि प्रत्येक औद्योगिक केन्द्र में अवैतनिक फैक्टरी निरीक्षक भी रक्खे जावे, जो सम्माननीय व्यक्ति हों और मजदूरों के शुभचिंतक हों।

ट्रेड डिस्प्यूट्स एक्ट १९४७

१९४७ में भारत सरकार ने ट्रेड डिस्प्यूट्स एक्ट बनाकर मिल मज़दूर तथा मिल मालिकों के संघर्ष को कम करने का प्रयत्न किया है। इस कानून का उद्देश्य यही है कि कारखानों में हड़ताल तथा द्वारावरोध को जहां तक हो कम किया जावे, जिससे उत्पादन पर बुरा प्रभाव न पडे और उद्योग-धन्धों में शान्ति रहे।

इस कानून के अनुसार प्रान्तीय सरकार किसी भी कारखाने के मजदूरों तथा मालिकों के झगडे को निबटाने के लिये एक समझौता कराने वाला अधिकारी नियुक्त कर सकती है। यदि वह अधिकारी समझौता कराने में असफल रहे तो सरकार उस झगडे की पूरी जांच करने के लिये तथा निर्णय देने के लिये एक एडजुडिकेशन बोर्ड बिठा सकती है। बोर्ड की जानकारी के लिये तथ्यों को संग्रहीत करने के लिए एक औद्योगिक अदालत भी बिठाई जा सकती है। बोर्ड के निर्णय को किसी-किसी दशा में सरकार दोनों पक्षों पर भी लागू कर सकती है, उन्हें उस फैसले को मानना ही होगा। जिस समय समझौता आफिसर समझौता कराने का प्रयत्न कर रहा हो अथवा बोर्ड मामले की जाँच कर रहा हो, उस समय हड़ताल करना गैर कानूनी होगा। जो जनहित के धंधे है अथवा जो मूलभूत धंधे हैं, उनमें हड़ताल करने से पूर्व सरकार को सूचना देनी होगी। इस प्रकार धंधों में हडतालों पर अधिक प्रतिबन्ध लगा दिये गये हैं।

इस कानून के द्वारा मजदूरों के हडताल करने के मौलिक अधिकार

पर कुठाराघात हुआ है, यही इसका सबसे बडा दोष है। यद्यपि सरकार का रुख मजदूरों की ओर सहानुभूतिपूर्ण है और इस कानून के अन्तर्गत जो फैसले किए गए हैं, उनमें मजदूरों के हितों का ध्यान भी रक्खा गया है। फिर भी, मजदूरों को उनके इस अधिकार से वंचित किए जाने का समर्थन नहीं किया जा सकता।

न्यूनतम मजदूरी कानून

फरवरी १९४८ में भारतीय पार्लियामेन्ट ने न्यूनतम मजदूरी बिल स्वीकार कर लिया और अब वह शीघ्र ही कानून के रूप मे देश मे लागू होगा। देश के आर्थिक इतिहास मे मजदूरों को नियमित रूप से न्यूनतम मजदूरी दिलाने का यह पहला प्रयास है। मज़दूरों को दशा को देखते हुए यह प्रयास अत्यन्त प्रशंसनीय कहा जावेगा, यदि इस कानून के अन्तर्गत उचित नियम बनें और उनका कडाई से पालन किया गया। किन्तु यदि न्यूनतम मज़दूरी का अर्थ लिया गया कि एक प्रौढ को उतनी मजदूरी दी जावे कि वह किसी प्रकार अपना पेट मात्र भर सके अर्थात् वह केवल अपने शरीर की रक्षा मात्र कर सके तो इससे अधिक लाभ न होगा। न्यूनतम मज़दूरी निर्धारित करते समय सरकार को इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि एक प्रौढ की मजदूरी कम से कम इतनी हो कि जो उसकी कुशलता को बढाने में सहायक हो और उसके परिवार के पालन-पोषण के लिए यथेष्ट हो।

स्वीकृत बिल के मुख्य अंग नीचे लिखे हैं:—

प्रान्तीय सरकार तथा केन्द्रीय सरकार को उन उद्योग धंधों मे, जिनकी बिल में सूची दी हुई है, न्यूनतम मजदूरी निर्धारित करने का अधिकार होगा। न्यूनतम मजदूरी निर्धारित करने के लिए सरकार सलाहकार समिति तथा उप-समिति नियुक्त करेगी। केन्द्रीय सरकार प्रान्तीय सरकारो के न्यूनतम मजदूरी सम्बन्धी कार्यों को सम्बद्धित करने के लिए केन्द्रीय सलाहकार बोर्ड स्थापित करेगी। न्यूनतम मजदूरी से कम मजदूरी मिलने के दावों का निर्णय करने के लिए आयोजन

किया जावेगा ।

प्रमुख धन्धो के अतिरिक्त नीचे लिखे धन्धो में भी न्यूनतम मजदूरी कानून लागू होगा:—ऊनी गलीचे, अथवा कम्बल बनाने के कारखाने, चावल, आटा और दालो की मिलें, बीडी बनाने का धन्धा, मोटर बसो पर काम करने वाले, सडक और मकानों का कार्य करने वाले, चर्मालय तथा चमड़े की वस्तुएँ बनाने का उद्योग, तेल पेरने की मिले, लाख और अभ्रक का उद्योग, खेत-मज़दूर अर्थात् खेती में काम करने वाले, तथा गौशालाओ इत्यादि मे काम करने वाले श्रमिक। प्रान्तीय सरकारो को उल्लिखित उद्योगो के अतिरिक्त अन्य उद्योगो को भी सूची मे सम्मिलित कर लेने का अधिकार दे दिया गया है ।

इस कानून के बन जाने से लगभग १० करोड श्रमिको पर प्रभाव पडेगा। इस कानून के अन्तर्गत लगभग ७ करोड़ कृषि श्रमिको के जीवन स्तर में परिवर्तन होने की सम्भावना है। इसमें कोई संदेह नहीं कि खेती मे लगे हुए मजदूरो तथा छोटे-मोटे फुटकर धन्धो में लगे हुए मजदूरो को संरक्षण प्रदान करने के कारण इस कानून का बहुत व्यापक प्रभाव होगा। परन्तु यह सब तभी होगा जब कि न्यूनतम मज़दूरी निर्धारित करते समय उदार दृष्टिकोण रक्खा जावे और जो भी मजदूरी निर्धारित की जावे, उसको कडाई से लागू किया जावे ।

पूजीपतियो ने अभी से इसका, विरोध करना आरम्भ कर दिया है और वे कहने लगे हैं कि इससे धन्धो का उत्पादन-व्यय बढ जावेगा, देश में धन्धो की अवनति होने लगेगी, उद्योग धंधे इस भार को सहन नहीं कर सकेंगे और वे बन्द हो जावेगे। इससे उत्पादन में कमी आवेगी और देश में उत्पादन-संकट उपस्थित हो जावेगा इसका उत्तर माननीय श्रम-मंत्री ने अच्छे शब्दो में दिया है। "जो उद्योग धन्धे अपने मज़दूरो को न्यूनतम मजदूरी नही दे सकते, वे वास्तव मे श्रमिकों के शोषण पर चलते हैं और राष्ट्र के हित मे उन्हे बन्द ही हो जाना चाहिए। यदि राष्ट्र को किसी ऐसे धन्धे की आवश्यकता है तो सरकार उसको आर्थिक

सहायता देगी।" इससे सरकार की दृढता प्रगट होती है। आशा है कि सरकार भविष्य में इसी दृढता से उस नियम को लागू करेगी।

यहां यह कह देना आवश्यक है कि पूंजीपतियों का विरोध सत्य के आधार पर नहीं है। यदि मज़दूरों को मज़दूरी अधिक मिलेगी तो उनका जीवन-स्तर ऊँचा होगा और उनकी कुशलता में वृद्धि होगी। इसका परिणाम यह होगा कि उत्पादन-व्यय नहीं बढ़ेगा। बहुत से अन्य देशों में न्यूनतम मजदूरी निर्धारित करने का यही परिणाम हुआ है। किन्तु इस बात की आवश्यकता है कि खेत मजदूरों और फुटकर छोटे-मोटे धन्धों में लगे हुए मजदूरों को भी संगठित कर दिया जावे, नहीं तो असंगठित होने की दशा में उन्हें न्यूनतम मज़दूरी कानून का पूरा लाभ नहीं मिल सकेगा। इसके अतिरिक्त इस बात की भी आवश्यकता है कि देशी राज्यों में भी यह कानून लगाया जावे। देशी राज्यों में मजदूरों की दशा प्रान्तों के मजदूरों से भी गई बीती है।

छठा—परिच्छेद

मजदूरों के रहने के मकान

मजदूरों के लिए रहने के मकानों की समस्या भारतवर्ष के लिए कोई नई नहीं है। प्रत्येक औद्योगिक देश में यह समस्या उठ खड़ी हुई है। पिछले पचास वर्षों में लगातार ग्राम निवासी जन समूह बड़े-बड़े औद्योगिक तथा व्यापारिक केन्द्रों की ओर बहता रहा है। यही कारण है कि बम्बई, कलकत्ता, मदरास, करांची, कानपुर, लाहौर, दिल्ली, नागपुर, जबलपुर, मदुरा, जमशेदपुर आदि बड़ी तेजी से बढ़ते गये और देखते-देखते इन केन्द्रों की जनसंख्या कई गुनी हो गई। इन बड़े-बड़े नगरों में मज़दूरों के रहने के लिए मकानों की समस्या ने भयंकर रूप धारण कर लिया है। जगह की कमी के कारण भूमि का मूल्य कल्पनातीत बढ़ जाता है और

इसी कारण इन नगरो मे बेहद भीड हो गई है। वस्तुस्थिति यह है कि वहा रहने के लिए मकान नहीं मिलते। एक कठिनाई यह भी है कि अभी तक उद्योग धंधो की स्थापना बिना किसी सोच विचार और योजना के हुई है। कहा नये कारखाने स्थापित किये जाने चाहिये, इसका ध्यान किये बिना ही बडे-बडे केन्द्रो के मध्य में कारखाने स्थापित किये जाते रहे है। इसका परिणाम यह होता है कि केन्द्रो के मध्य मे जहा कि वैसे ही बहुत भीड होती है, बहुत बडी सख्या में मजदूर रहना चाहते है और मकानो की कमी विकराल रूप धारण कर लेती है। कलकत्ता, बम्बई, कानपुर, नागपुर, अहमदाबाद इत्यादि बडे-बडे औद्योगिक केन्द्रो को देखिये। ऐसा प्रतीत होता है कि मानो कारखानों के बनाने में किसी को इस बात के ध्यान रखने की आवश्यकता ही नही थी कि कारखाना ऐसे स्थान पर बनाया जावे, जहा काफी जगह हो। यही कारण है कि इन धन्धो की स्थापना से बडे-बडे केन्द्रों में अत्यधिक भीड गंदगी और बीमारिया उत्पन्न होती है। जहां धन्धो की स्थापना से इन केन्द्रो की समृद्धि, वैभव, वाणिज्य और व्यापार में आश्चर्य जनक उन्नति हुई है, वहा इन धन्धो के कारण औद्योगिक केन्द्रो मे दैन्य, गंदगी बीमारी और भीड का बाहुल्य हो गया है। हा, जो कारखाने छोटे-छोटे स्थानो पर स्थापित हुए है, उदाहरण के लिए शक्कर, रुई के पेंच, जूट के पेच इत्यादि, वहा मकानो की समस्या ऐसी विकट नही है।

भीड

भारतवर्ष में इस सम्बन्ध में सरकारी जाच अभी तक कोई नही हुई है, इस कारण मकान मे भीड का ठीक-ठीक अनुमान करना कठिन है परन्तु जो भी फुटकर जाच हुई है और उनसे जो कुछ ज्ञात हुआ हे, वह हृदय को कँपा देने वाला है। पिछली जनगणना के अनुसार बम्बई में ७० प्रतिशत मकानो मे केवल एक कोठरी है। १९२१-२२ मे लेबर आफिस ने कुछ पारिवारिक बजट तैयार किये थे, उस जांच के अनुसार बम्बई में ९७ प्रतिशत मजदूर एक कोठरी के मकानो मे

रहते थे और प्रत्येक कोठरी में ६ से ६ तक जीव रहते थे। करांची में तो सारा मजदूर वर्ग ही एक कोठरी में ६ से ६ व्यक्ति प्रति कोठरी के हिसाब से रहता है। अहमदाबाद मे ७३ प्रतिशत मजदूर एक कोठरी में रहते है। शाही मजदूर कमीशन का कहना था कि भारत के अन्य औद्योगिक केन्द्रों के सम्बन्ध मे इस प्रकार के आंकडे प्राप्त नहीं है; परन्तु जो कुछ कमीशन ने देखा उससे उसका कहना था कि कलकत्ता, कानपुर, मद्रास इत्यादि सभी बडे औद्योगिक केन्द्रों मे लगभग सभी मजदूर एक कोठरी के मकानों मे रहते हैं। रहने के स्थान की इस कमी का मजदूरों के स्वास्थ्य पर भयंकर प्रभाव पडता है। सच तो यह है कि यह केन्द्र बीमारियों के स्थायी अड्डे बन गए है और मजदूरों को इन स्थानों में नारकीय जीवन व्यतीत करना पडता है। जिन लोगों ने इन स्थानों को नहीं देखा है, वे तो उनकी भयंकरता की कल्पना भी नहीं कर सकते। टाट के पर्दे या टीन डाल दी जाती है, जिससे कि हवा और रोशनी घरो में प्रवेश ही न कर सके। हमारे मजदूर के रहने के स्थानों का यह एक साधारण चित्र है। सच तो यह है कि जिस प्रकार के मकानो में भारतीय मजदूर रहता है, वे मनुष्य के लिए क्या, पशुओं के लिए भी उपयुक्त नही है। अब हम भिन्न-भिन्न औद्योगिक केन्द्रों के सम्बन्ध में कुछ विस्तार पूर्वक लिखेंगे।

बम्बई

बम्बई में अधिकाश मजदूर "चालो" मे रहते हैं। चाल एक लम्बी कोठरियो की पंक्ति को कहते हैं, जिसके सामने पतला बरामदा होता है। यह दो-तीन मंजिल की होती है और एक दूसरे से सटी हुई बनी होती है। मकानो की दो पंक्तियो के बीच मे एक गज से अधिक जगह नहीं होती। इसका परिणाम यह होता है कि नीचे की मंजिल तथा ऊपर की मंजिलो के बीच के कमरो मे न तो हवा पहुंचती है और न रोशनी ही। इन चालों में अधिकांश में तो शौचगृह होते ही नहीं। दो चालों के

बीच में जो पतली सी गली होती है, उसमें ही टट्टिया होती हैं, वही शौचगृह का काम देती है। इतने अधिक व्यक्तियो के लिए शौचगृहों का उचित प्रबन्ध न होने के कारण और दूसरे उन संडासों की सफाई का प्रबन्ध ठीक न होने के कारण वहां बुरी दुर्गन्ध फैली रहती है। यदि पाठकों में से किसी को इन चालों में जाने का अवसर हो तो वह उस दुर्गन्ध को अधिक देर तक सहन नहीं कर सकता। दुर्गंध से बचने के कारण मज़दूर अपनी खिडकियो को, जो उसी पतली गली में खुलती हैं जिसमें टट्टियां होती है, बन्द रखते है। इस कारण कोठरियों में हवा का प्रवेश नाममात्र को ही हो पाता है। केवल इतना ही सब कुछ नहीं है, इन मकानो का सारा कूडा भी इन्हीं पतली गलियो मे फेंक दिया जाता है। मल-मूत्र और कचरे की सड़ांद भयानक दुर्गंध उत्पन्न करती है और सारे वायुमडल को विषैला बना देती है।

अभी तक विद्वानों ने भारत के औद्योगिक केंद्रो में मकानो की कमी के कारण होने वाली भीड का और उनमे रहने वालो की मृत्यु का सम्बन्ध निर्धारित नहीं किया है। किन्तु श्री बरनट हर्स्ट महोदय ने बम्बई मे जो खोज की थी, उससे उन्होने यह प्रमाणित कर दिया है कि एक कोठरी के मकान में रहने वाले बच्चो की मृत्यु संख्या (८७ प्रतिशत) सबसे अधिक है। दो कोठरियों के मकानो मे रहने वालों की २२ प्रतिशत, तीन कोठरियो के मकान मे रहने वालो की मृत्यु-संख्या १६ प्रतिशत और अस्पतालो में रहने वालो की मृत्युसंख्या १६ प्रतिशत याने सबसे कम है। श्री बरनट हर्स्ट की खोज से यह स्पष्ट सिद्ध हो जाता है कि मकानो मे अत्यधिक भीड़ होने के कारण मजदूरों के बच्चो की मृत्यु-संख्या मे वृद्धि होती है। अस्तु, मकानों की समस्या इस दृष्टि से अत्यन्त महत्व की है। यदि मिल मालिक अपने स्वार्थ के कारण इस ओर ध्यान नही देते तो सरकार को इस ओर से उदासीन नहीं होना चाहिए।

कुछ उद्योगपति यह कहते नहीं थकते कि गाव में जिन मकानों में

मज़दूर रहता है, वह भी कुछ अधिक अच्छे नहीं होते; किन्तु वह ऐसा कहते समय यह भूल जाते हैं कि यद्यपि गांव के मकानों मे हवा का पूरा प्रबन्ध नहीं होता और गांव की गलियां इत्यादि गंदी रहती हैं, फिर भी उनमे जो आंगन होता है, उसमें धूप-रोशनी और हवा यथेष्ट मात्रा में रहती है। फिर किसान खेतों के स्वास्थ्ययुक्त वातावरण मे काम करता है। किंतु नगरों में मजदूरो के रहने के स्थान अत्यन्त गंदे, सीलयुक्त और कूडे-कचरे से भरे हुए हैं। वहां का सारा वायुमण्डल दुर्गन्धयुक्त और विषैला हो उठता है। रोग के तो वे स्थायी अड्डे बन जाते हे। कई मंजिल और पास-पास सटे होने के कारण उनमें यथेष्ट धूप, रोशनी और हवा की गुंजाइश नहीं होती। एक कोठरी के मकानो में पर्दों के लिए खिड़की और दरवाजों पर के पर्दे का तो केवल अनुभव ही किया जा सकता है। उसका विवरण लेखनी की शक्ति के बाहर की बात हे।

कुछ समय हुआ बम्बई सरकार ने एक लेडी डाक्टर को मज़दूर स्त्रियों के स्वास्थ्य के सम्बन्ध में जांच के लिए नियुक्त किया था। उसने जो विवरण अपनी रिपोर्ट में लिखा है वह हृदय को कंपा देने वाला है। एक मकान के सम्बंध में उसने लिखा है "मैं चाल की दूसरी मंजिल के एक कमरे में गई, जिसकी लम्बाई १४ फीट और चौड़ाई १२ फीट थी। उस कमरे मे ६ परिवार रह रहे थे। उनका भोजन पकाने के लिए उस कमरे मे ६ चूल्हे थे। उन परिवारों में स्त्री-पुरुष-बच्चे सभी मिलाकर ३० प्राणी थे और ये सब उसी एक कमरे मे रहते थे। छत मे डोरियाँ बांध कर, उनमें बांस बांध कर, उन पर टाट और कम्बल डाल दिये गये थे, जिससे कि प्रत्येक परिवार पृथक रह सके। उनमें से २ स्त्रियां गर्भवती थीं और उनके शीघ्र ही बच्चा होने वाला था। वे सभी बम्बई में ही बच्चा उत्पन्न करने वाली थीं। जब मैंने नर्स से पूछा जो मेरे साथ थी कि वह किस प्रकार इस कमरे में बच्चा उत्पन्न करेगी, तो मुझे एक कोने में चार फीट लम्बी और ३ फीट चौड़ी जगह दिखलाई गई, जिसके चारों तरफ पर्दा कर दिया गया था। इन ६ चूल्हों मे निकलने वाले धुयें और गन्दगी

का प्रभाव माता और बच्चों के स्वास्थ्य पर कैसा पडेगा, यह तो किसी से छिपा नही है। यह इस तरह का अकेला कमरा नहीं था। ऐसे बहुत से कमरे मेरे देखने में आये। बम्बई की चालो का नारकीय-जीवन वर्णन के बाहर है।

अधिकांश चालों की ईमारतें जर्जर अवस्था मे हैं। नीचे की मंजिल में बेहद सीलन होती है। कहीं-कहीं तो चाल की इमारत सड़क के धरातल से ही खड़ी कर दी गई है, उसकी कुर्सी होती ही नहीं। ऐसी अवस्था में वर्षा की ऋतु में जब बम्बई मे मूसलधार वर्षा होती है, तब सडक का पानी कमरों मे आ जाता है और सीलन का तो कहना ही क्या? इन चालों के अहाते मे कूड़ा-कचरा और यहां तक कि मल के ढेर लगे रहते है, जो कि वर्षा के दिनो मे सडकर विषैले रोग के कीटाणुओ को जन्म देते हैं। प्रत्येक चाल मे नल की थोडी सी ही टोटियां एक स्थान पर होती हैं। चाल के सभी रहने वाले, चाहे स्त्री हो या पुरुष, उन्ही नलो पर नहाते और कपडा धोते हैं। नलो की कमी के कारण और बन्द स्नानागार न होने के कारण मज़दूरो को विशेषकर मजदूर स्त्रियो को बहुत कठिनाई का सामना करना पडता है। घंटो प्रतीक्षा करने के उपरांत कहीं वे यथेष्ट जल पाती है।

उत्तम चालें

ऊपर जिन चालो के सम्बन्ध मे कहा गया है, वे व्यक्ति विशेष की सम्पत्ति होती हैं और वे लोग अधिक से अधिक किराया वसूल करना ही अपना प्रमुख कर्तव्य समझते है। कहीं-कहीं ऐसा भी होता है कि जाबर या सरदार किसी चाल को पट्टे पर ले लेता है और अपने अधीन मजदूरों को उसमें रखकर मनमाना लाभ उठाता है। उस दशा मे उसका मजदूरो पर बेहद प्रभाव होता है। इन चालो के अतिरिक्त कुछ मिलों ने अपने मजदूरो के लिए रहने की सुविधा की है और कुछ चालें

बनवाई हैं। लगभग २० मिलों ने अपने बीस प्रतिशत मजदूरों के लिए एक कमरे की चालें बनवाई हैं। इसमें सदेह नहीं कि यह चालें उन चालों से, जो व्यक्ति विशेष की सम्पत्ति होती हैं, बहुत अच्छी हैं; फिर भी उनमें स्थान की कमी है। मिल मालिक इन कमरों के लिए किराया लेते हैं। किन्तु अनुभव यह बतलाता है कि गाव से आया हुआ मजदूर जो मकान का किराया देना जानता ही नहीं, कुछ लोगों को रख लेता है और उनसे किराया वसूल करता है। साधारणतया कोई मिल ऐसे व्यक्ति को, जो कि उस मिल में काम नहीं करता, कमरा किराये पर नहीं देती, किन्तु उस मिल मे काम करने वाला मजदूर जब अन्य किसी व्यक्ति को अपना भाई या भतीजा कह कर रख लेता है तो उसको हटाना कठिन हो जाता है और इन चालों में भी भीड़ हो जाती है।

मिलो के अतिरिक्त बम्बई पोर्ट ट्रस्ट ने तीन स्थानो पर अपने मजदूरों के लिए चालें बनवाई हैं, जिनमें ट्रस्ट के ८००० मजदूरो में से ३००० मजदूर रहते हैं। बम्बई इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट ने अपने सभी मजदूरों के लिये रहने की सुविधा की है, परन्तु वहां भी टीन से छाई हुई बहुत घटिया कोठरियां हैं।

पिछले महायुद्ध के उपरान्त बम्बई में मजदूरों के लिए मकानों की सुविधा उत्पन्न करने के लिये बम्बई सरकार ने एक विशेष डेवलपमेन्ट विभाग स्थापित किया और उस विभाग ने २०७ कंक्रीट की नवीन चालें बनाईं। इन चालों में १६००० एक कमरे वाले घर हैं। इन चालों में कमरे बड़े हैं, रोशनी और हवा की सुविधा है। साथ ही पखाना, शौचगृह और बिजली का प्रबन्ध है। यद्यपि मौजूदा आवश्यकता को देखते हुए संख्या में कम हैं। प्रत्येक चाल में बिजली की रोशनी, पानी और दुकानों की सुविधा का प्रबंध है। इन चालों में स्कूल और औषधालयों का भी प्रबंध किया गया है। परन्तु आरंभ में इन चालों को मजदूरों ने पसंद नहीं किया और बहुत सी चालें खाली पड़ी रहीं। इसका मुख्य कारण यह था कि ये चालें मिलों से दूर थीं और

आने-जाने के लिये कोई उचित प्रबंध नहीं था। यद्यपि धीरे-धीरे यह चालें आबाद हो गई।

बम्बई में मकानों की समस्या कितनी भयंकर हो उठी है, इसका अनुमान तो इसी से लगाया जा सकता है कि १९३८ के पूर्व भी वहा एक बहुत बड़ी संख्या फुटपाथो पर सोया करती थी। अधिकाश मज़दूरो के लिए एकान्त स्थान नहीं होता, एक-एक कमरे या कोठरी मे दो-तीन और उससे भी अधिक गृहस्थियां रहती है। पुरुष अधिकांश बाहर ही रहते हैं। स्त्रियां ही उन कमरो मे रहती हैं और वे सामान रखने तथा खाना पकाने के काम आते है।

कलकत्ते की बस्तियां

कलकत्ता और हवडा में मिल मज़दूर बस्तियों मे रहते है। यह बस्तियां अधिकतर सरदार या अन्य व्यक्तियों की होती है। सरदार भूमि को पट्टे पर ले लेता है और जो मजदूर रहने के लिए स्थान चाहते है, उसे बांस तथा फूस इत्यादि देकर स्थान बतला देता है और मजदूर उसी स्थान पर एक कच्चा झोंपडा खड़ा कर लेता है। इन बस्तियो के मालिक इनसे खूब ही लाभ कमाते है। कलकत्ते की यह बस्तियां इतनी गदी और खराब होती है कि जिनकी कोई कल्पना ही नही कर सकता। एक लेखक ने ठीक ही कहा है कि "वे गंदे रोगग्रस्त बिल है, जहां मानवता सडती है।" इन झोपडो में न तो कोई खिडकी या रोशनदान ही होता है और न कोई चिमनी ही होती है। बस्ती के झोपडो को बनाते समय मिट्टी खोदने से जो पोखरे बन जाते है, उनमे इकट्ठा पानी साधारणतः काम में लाया जाता है और पीने के पानी की भी बहुत कमी होती है। सफाई का तो इन बस्तियो मे नाम भी नही होता। इन बस्तियो मे जाने के मार्ग दलदल और गंदगी से भरे रहते है और वर्षा में तो वे रोग-कीटाणुओं के अड्डे बन जाते है। बगाल म्यूनिसिपल कानून के अन्तर्गत इन बस्तियों के मालिको को उनके सुधार के लिए उत्तर

दायी ठहराया गया है। किन्तु आज तक कभी इन मालिकों के विरुद्ध कोई कानूनी कार्यवाही नहीं की गई। कारण यह कि इनके भाई-बंद ही म्युनिस्पैलटियों के कर्ताधर्ता होते है।

हावड़ा की स्थिति तो और भी भयंकर है। सच तो यह कि कलकत्ता और हावड़ा में स्थान की इतनी कमी है कि प्रत्येक इन्च भूमि का उपयोग मकान बनाने में किया गया है। इन बस्तियों की गलियां, जिनकी दोनों तरफ बस्तिया बनी हैं, २ फीट से अधिक चौड़ी नहीं है और इन्हीं गलियों मे बस्तियों की गंदी नाली बहती है। इन बस्तियों के रहने वाले अत्यंत नारकीय जीवन व्यतीत कर रहे हैं, फिर भी बस्ती के मालिक बेचारों से बहुत अधिक किराया लेते है। जूट-मिलों तथा अन्य धंधों में काम करने वाले मजदूरों का अधिकांश भाग ऐसी ही गंदी बस्तियों में रहता है।

मिलो द्वारा बनाई हुई कुली लाइनें

जूट-मिलों ने अपने मजदूरों के लिये कुछ कुली लाइनें बनवाई हैं। इन कुली लाइनों में छोटे-छोटे ४०,००० क्वार्टर है और एक लाख से ऊपर मजदूर रहते है। इन क्वार्टरो की लम्बाई १० फीट और चौड़ाई ८ फीट होती है और वे उन बस्तियों से कहीं अच्छे हैं। एक तो यह लाइनें पक्की होती हैं और पानी की सुविधा होती है। कुली लाइन क्वार्टरों की एक लाइन होती है। प्रत्येक क्वार्टर मे एक कमरा और उसके सामने एक बरामदा होता है, जिसका उपयोग रोटी पकाने और स्नान के लिए किया जाता है। इन लाइनों के बीच में जो पतली-सी जगह होती है, उसको पक्का कर दिया गया है। सीमेंट की पक्की नालियां बना दी गई हैं, जो कि साफ रक्खी जा सकती हैं। इन लाइनों के क्वार्टरों मे खिड़कियां होती हैं और किन्हीं-किन्हीं मे तो छत में भी हवा के मार्ग होते है। अस्तु, रोशनी और वायु का इन क्वार्टरों में समुचित प्रवेश हो सकता है। शौचगृहों की समस्या को हल करने के लिए सेप्टिक टैंक बनवा दिये गए

है। किसी-किसी मिल ने इन लाइनो में अस्पताल भी स्थापित कर दिये हैं। हावड़ा और कलकत्ता की मिलो ने यह लाइनें बना कर मजदूरो को रहने की सुविधा प्रदान करने का प्रयत्न किया है। जल का प्रबन्ध करने के लिए कहीं-कहीं गहरे ट्यूब-वेल खोदे गये है और कहीं नदियो के पानी को शुद्ध करके मजदूरों को दिया जाता है। कुछ लाइनों में बिजली का भी प्रबंध किया गया है। इसमे तनिक भी संदेह नहीं कि यह कुली लाइने उन गंदी बस्तियों से कहीं अधिक अच्छी है। फिर भी जगह की कमी के कारण कमरे छोटे है और इन लाइनो के बीच में बहुत थोडी जगह छोडी गई है। एक लाइन दूसरी लाइन से सटा कर बनाई गई है। फिर अधिकांश मजदूरों को तो यह भी प्राप्त नहीं है। वे तो उन्हीं नरक जैसी बस्तियों मे रहने पर विवश हैं।

मद्रास की चैरी

मदरास के औद्योगिक केन्द्रो (मदरास, मदुरा, तथा कोयम्बटूर इत्यादि) मे मकानो की समस्या इतनी ही गम्भीर है। मदरास शहर में २५,००० एक कोठरी के मकानो मे १५०,००० मजदूर रहते है। मकानो की इतनी भयंकर कमी है कि सैकडो मजदूरो को मकान तक नहीं मिलते और वे सडको के किनारे अपना सामान रख कर पडे रहते है या बंदरगाह के किनारे जो बडे-बड़े माल गोदाम बने हुए है, उनके बरांडों में रहते हैं। मदुरा मे तो स्थिति और भी भयावह है। न तो म्युनिस्पैलटी और न सूती कपडे की मिलों ने ही मकानो की समस्या को हल करने का प्रयत्न किया है। केवल मदुरा मिल ने १७६ क्वार्टरों का एक छोटासा उपनिवेश स्थापित किया है, जिसमे कि उस मिल के मजदूर रहते है। कोयम्बटूर तथा तूतीकोरन मे भी कोई मकानो का प्रबन्ध नहीं है।

मकानों की इस भयंकर कमी का परिणाम यह होता है कि निर्धन मजदूर खाली स्थानों पर अस्थायी झोपडे या कच्ची-पक्की कोठरियाँ खडी कर लेते हैं और जब उन जमीनों के मालिक जमीन का किराया बहुत

अधिक बढ़ा लेते हैं तो वे उठ कर दूसरी जमीनों पर चले जाते हैं। इन अस्थायी बस्तियों को ही चैरी कहते है। यह चैरियां अधिकांश मे नगर के उस भाग में होती हैं; जो सबसे गंदा और उपेक्षित होता है। सड़क और पाइप न होने के कारण इन चैरियों मे म्युनिस्पैलटी भी सफाई नहीं करती, क्योंकि चैरियां अस्थायी होती है; इस कारण न तो यहां नालियाँ होती हैं, सफाई और रोशनी का तो कहना ही क्या ? म्युनिस्पैलटी भी इनकी ओर से उदासीन रहती है। गन्दगी का तो यहां एक-छत्र राज्य होता है और इन्हीं स्थानों में अधिकांश मजदूर रहते हैं। मजदूर स्त्रियों को पानी के लिये भी बहुत दूर जाना पड़ता है।

इन चैरियों मे जो कोठरियां होती है, वे ९ फीट लम्बी और ८ फीट चौड़ी होती हैं। दीवालें कच्ची होती हैं और मिट्टी के तेल के पीपों की टीन से छाई जाती हैं। यह झोपड़े एक दूसरे से सटे होते हैं। इन मकानों मे गन्दगी के अतिरिक्त वर्षा और धूप से बचाव भी नहीं होता। पानी की कमी के कारण गन्दगी तो इतनी होती है कि उनके कच्चे रास्ते पर निकलना भी कठिन होता है। शौचगृहों का कोई प्रबन्ध नहीं होता इस कारण गन्दगी और भी भयंकर रूप धारण कर लेती है।

मद्रास की सफाई सुधार सभा ने इस सम्बन्ध में जो जांच की है, उससे प्रतीत होता है कि सब मिला कर मदरास मे १८१ ऐसे गन्दे उपनिवेश थे। इनमें से २६ चैरियो की जमीन सरकार की थी, २५ चैरियों की जमीन कारपोरेशन की थी और शेष की जमीन व्यक्तियों की थी। सरकार और कारपोरेशन की जमीन पर स्थापित चैरियों पर जल पाइप, सार्वजनिक शौचगृहों और सड़कों की सुविधा है, परन्तु अन्य चैरियों में इनका सर्वथा अभाव है। अधिकांश चैरियो में नल और शौच-गृह न होने के कारण गन्दगी ऐसा भयंकर रूप धारण कर लेती है कि उसका अनुमान भी नहीं किया जा सकता। यही कारण है कि इन चैरियों के रहने वालों की मृत्यु-संख्या बहुत अधिक है। मद्रास की मृत्यु-संख्या की जांच के लिए एक कमेटी बिठाई गई थी, उसने इस सम्बन्ध में जो लिखा

है वह महत्वपूर्ण है "इन उपनिवेशों में जो सब स्थानों पर मल पड़ा मिलता है, उसका कारण मजदूरों की गंदी आदत नहीं है; वरन् सार्वजनिक शौच-गृहों की कमी है। कोई भी स्वाभिमानी व्यक्ति, चाहे वह कुली हो या म्युनिसिपल कारपोरेशन का सदस्य, उन गंदे शौचगृहो का उपयोग नहीं करेगा। यही नहीं, वे गंदे शौचगृह भी यथेष्ट नहीं हैं। और उनका इतना अधिक उपयोग होता है कि वे साफ रक्खे ही नहीं जा सकते। इस समस्या को तभी हल किया जा सकता है, जब कि फलश शौचगृहों का बहुत बडी संख्या मे निर्माण किया जावे। इन उपनिवेशो में रहने वाली मजदूर स्त्रियां प्रातःकाल होने से घटे दो घंटे पहले उठ कर किसी नारियल के पेड, नाली या किसी खाली स्थान पर शौच जाती हैं, क्यों कि शौचगृहों की वहां बेहद कमी है।

यह चैरियां बहुधा सडकों से नीचे होती हैं और उनमें नालियां नहीं होतीं, इस कारण गंदा पानी वहीं भरता रहता है। वर्षा में तो सडक का पानी भी इन्हीं में भर जाता है। वर्षा के दिनों में इन उपनिवेशों मे घुटनों पानी हो जाता है और बहुत से कच्चे झोपड़े धराशायी हो जाते हैं।

कभी किसी चैरी में जाइये, रास्ते मे गन्दगी, कूड़ा, जूठन और धूल दिखलाई देगी। उसी गन्दगी मे इन मज़दूरो के बालक खेलते हैं, दूकान-दार खाने का सामान रखकर बेचते हैं और उन पर मक्खियाँ भिनभिनाया करती हैं।

एक बार मदूरा म्युनिसिपैलिटी के अभिनन्दन-पत्र के उत्तर मे महात्मा गांधी ने कहा था "आपने कहा है कि म्युनिसिपैलिटी हरिजनों को शिक्षा तथा अन्य नागरिक सुविधा सवर्णों के समान ही देती है, परन्तु जो कुछ आपने कहा है, वह सत्य नहीं है। आप उन मज़दूरो को वे सुविधाये तभी दे सकते है कि जब आप इन चैरियो को नष्ट कर दे। मैं अभी तीन चैरियों को देख कर आया हूं और आप मुझे यह कहने के लिए क्षमा करें कि म्यूनिसिपैलिटी ने उन निर्धन व्यक्तियो के रहने के

स्थानों का सुधार करने का तनिक भी प्रयत्न नही किया। एक चैरी जो मैंने देखी, उसके चारों ओर गन्दी नाली और पानी भरा हुआ था। वर्षा में वह स्थान मनुष्यों के रहने योग्य नही हो सकता। वह सड़क से नीचे पर है इस कारण वर्षा का पानी चैरी में भर जाता होगा। न इन चैरियों में कोई सडक है न अन्य सुविधाये ही है।"

सच तो यह है कि मद्रास प्रान्त के सभी औद्योगिक केन्द्रों मद्रास, मदूरा, तूतीकोरन तथा कोयम्बटूर इत्यादि मे मजदूरों के रहने के स्थानों की ऐसी ही दुर्दशा है।

मद्रास मे मकानो की समस्या हल करने का प्रयत्न

मद्रास सरकार के लेबर डिपार्टमेन्ट (मजदूर विभाग) तथा एक दो सहकारी गृह-समितियों ने कुछ मजदूरों के लिए क्वार्टर बनाये हैं; परन्तु उनका प्रयत्न दाल मे नमक के बराबर भी नहीं है। केवल बकिंगहम करनाटक मिल ने अवश्य ही अपने मजदूरों के लिए रहने के मकानों का सुन्दर प्रबन्ध किया है। उक्त कंपनी ने चार आदर्श मजदूर ग्राम बसाये है, जिनमें लगभग ७०० मकान हैं। प्रत्येक मकान में एक कमरा, उसके सामने बरांडा, एक रसोई घर, एक स्नानागार तथा आंगन होता है। इन गांवो के बीच-बीच मे काफी जगहे छोड दी गई है। पक्की सड़कें डाली गई हैं और उन पर बिजली की रोशनी का प्रबन्ध है। अभी तक घरों में बिजली की रोशनी नहीं है। पानी के लिए पाइप का प्रबन्ध है। सडकों की रोशनी, सफाई तथा पानी का सारा खर्च कम्पनी देती है। प्रत्येक क्वार्टर का डेढ रुपया मासिक किराया लिया जाता है। किन्तु मजदूरों को इस बात की आज्ञा नहीं है कि वे उसे दूसरे को उठा दें या दूसरी मिलो में काम करने वालो को रख लें। इतना सब कुछ करने पर भी मिल अपने दस प्रतिशत मजदूरों को ही मकान दे सकी है। इसका कारण यह है कि मकान बनाने के लिए उपयुक्त जगह नहीं है. और जमीन का मूल्य बेहद ऊँचा है। इसी कारण मिल इच्छा रहते भी

शीघ्र ही मकान नही बनवा सकती । अधिकाश मिल मजदूर उन्ही गन्दी चैरियों मे रहते हैं ।

कानपुर

संयुक्त प्रान्त में एक बहुत बडा औद्योगिक केन्द्र है । यहा के तीन चौथाई मज़दूर बस्तियो या अहातो में रहते हैं । यह अहाते वास्तव मे मनुष्यों के रहने के लिए सर्वथा अनुपयुक्त हैं । केवल कुछ मिलों ने अपने मजदूरो के लिए अच्छे क्वार्टरो का प्रबन्ध किया है । अधिकाश मजदूर अत्यन्त गन्दे स्थानो मे रह कर नारकीय जीवन व्यतीत कर रहे है ।

यह अहाते व्यक्तियो की सम्पत्ति है । लगभग २०० अहातो में इन केन्द्र की अधिकाश मजदूर जन-संख्या निवास करती है । इन अहातों में एक कोठरी और उसके सामने एक बरांडे वाले बहुत से मकान होते है । कमरे की लम्बाई १० फीट और चौडाई ८ फीट होती है । प्रत्येक कमरे मे केवल एक दर्वाजा होता है और कोई खिडकी या अन्य हवा का मार्ग नहीं होता । इन मकानो मे रोशनी और हवा का तनिक भी प्रबन्ध नहीं होता । अधिकाश का फर्श कच्चा और नम होता है और छते भी कच्ची होती है, जो वर्षा में टपकती है। तीन चौथाई मकानो मे कोई आँगन नही है और जल की भी बहुत कठिनाई है, क्यों कि सार्वजनिक नलो से ही पानी लेना पडता है । प्रत्येक टोटी से २०० व्यक्ति पानी लेते है । अधिकाश मजदूर सार्वजनिक शौचगृहो का उपयोग करते है । प्रत्येक सार्वजनिक शौचगृह औसत ७६१ व्यक्तियो का होता है । प्रत्येक मजदूर अपने घर का कूडा-कचरा सडक पर ही फेंक देता है । इसका परिणाम यह होता है कि अहातों में भीषण दुर्गन्ध रहती है । नालिया बहुत ही खराब दशा मे हैं, जिनसे और भी गन्दगी उत्पन्न होती है ।

उत्तम मकान

कानपुर में सर्व प्रथम ब्रिटिश इन्डिया कारपोरेशन ने अपने मजदूरों

के लिए मकानों की सुविधा का प्रबन्ध किया। उक्त कम्पनी ने दो बड़े मज़दूर उपनिवेश ऐलनगंज और मैकराबर्टगंज नाम से बसाये हैं। इन उपनिवेशों में लगभग २५०० सिंगल क्वार्टर, कई सौ डबल क्वार्टर और १२ छोटे बंगले हैं। यह क्वार्टर बहुत ही अच्छे बने हैं और इनमें यथेष्ट स्थान है। क्वार्टरों की पंक्तियों के बीच में जो जगह है, उसमें सायेदार वृक्षों की पंक्ति लगा दी गई है। छुट्टियों के दिनों में मज़दूर अपने क्वार्टरों के सामने इन वृक्षों की छाया में बैठते हैं। इन क्वार्टरों का आँगन भी पक्का होता है। पक्की साफ नालियाँ हैं और पानी का बहुत अच्छा प्रबंध है। क्वार्टरों में रहने वालों के लिए स्वच्छ सार्वजनिक शौचगृहों की व्यवस्था है, जिनमें सफाई के लिए जल कल (फ्लश लैट्रिन) लगी हुई है। उक्त क्वार्टरों में शौचगृहों की सफाई के लिए मेहतर नियुक्त हैं। मज़दूरों के लिए खेलने के मैदान भी हैं। संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि ब्रिटिश इंडिया कारपोरेशन ने मज़दूरों के लिए रहने की सुविधा का समुचित प्रबंध किया है। ब्रिटिश इन्डिया कारपोरेशन के इन उपनिवेशों में लगभग १०,००० मज़दूर रहते हैं।

म्यूनिस्पैलिटी में इनका बेहद प्रभाव होता है, इस कारण उनके सुधार का कोई प्रयत्न भी सफल नहीं हो पाता। आवश्यकता इस बात की है कि इन अहातों को मनुष्य के रहने के लिए अयोग्य घोषित कर दिया जावे; किंतु यह तब तक नही हो सकता जब तक कि यथेष्ट उत्तम मकानों को बनवाने का प्रबन्ध न किया जावे।

अहमदाबाद

अहमदाबाद की भी ठीक ऐसी ही दयनीय दशा है। वहा भी मजदूर मानों नरक में रहता है। ९२ प्रतिशत मजदूर एक कमरे के मकानों में रहते है। इन मकानों की दशा जर्जर होती है। गदे तो यह इतने होते है कि जिसका कोई ठिकाना नहीं और हवा तथा रोशनी का कोई प्रबन्ध नही रहता। पानी और शौचगृह की व्यवस्था बहुत ही खराब है। इसका परिणाम यह है कि अहमदाबाद मे मृत्यु-सख्या का अनुपात बहुत ऊँचा है।

अहमदाबाद में कुछ सूती कपड़े के कारखानो ने अपने मज़दूरों के लिए क्वार्टरो की व्यवस्था की है, किन्तु वे केवल १६ प्रतिशत मजदूरों को ही मकान दे सके हैं। यद्यपि लगभग ३४ मिलों ने चालें बनवाई है, किन्तु एक दो को छोड़ कर उनकी व्यवस्था ठीक नहीं है। केवल अशोक और कैलिको मिल ने जो चालें बनवाई है, वे अच्छी है और वहाँ सफाई तथा अन्य सुविधाओ की व्यवस्था है। इन मिलो ने मिलों के समीप ही चाले बनवाई है, जिनमे उनके लगभग आधे मज़दूर रहते है। इन चालो के बीच में वृक्ष तथा बाग़ लगाये गये है, जिससे कि यह मजदूर उपनिवेश अधिक आकर्षक तथा सुन्दर दिखलाई देते है। इन चालो में दो क्वार्टर हैं। एक में केवल एक कमरा, एक वरांडा और आगन होता है। कुछ वर्ष पहिले कैलिको मिल ने मिल से दूर एक मज़दूरों की बस्ती बनाई, जिसमे प्रत्येक घर में एक कमरा और वरांडा के अतिरिक्त रसोईघर

और स्नानागार भी हैं; परन्तु दूर होने के कारण मज़दूर उसमें रहना पसंद नहीं करते। अहमदाबाद की लेबर यूनियन ने भी मज़दूरों के रहने के लिए एक मज़दूर उपनिवेश स्थापित करने की योजना बनाई है और कुछ मकानों का निर्माण किया है।

शोलापुर मे सूती कपडे की मिलों के मजदूरों के लिए रहने की व्यवस्था बम्बई तथा अहमदाबाद से अच्छी है।

नागपुर

नागपुर में मजदूरों के रहने की व्यवस्था उतनी ही बुरी है, जितनी कि अन्य औद्योगिक केन्द्रों की है। परन्तु एम्प्रेस मिल नागपुर ने मज-दूरों के रहने के लिए जो सुन्दर उपनिवेश बनाने की योजना हाथ में ली है वह उल्लेखनीय है। मिल ने सरकार से इन्दोरा के समीप २०० एकड भूमि लम्बे पट्टे पर ली है और उस जगह कपनी २५ लाख रुपये व्यय करके १५०० मकान बनवा रही है। यह एक आदर्श मज़दूर उपनिवेश होगा। योजना यह है कि मकानों के लिए प्लाट बना दिये गए है। सडकें, नालियां इत्यादि कंपनी ने टलवा दी हैं। प्रत्येक प्लाट ५३ फीट लम्बा और ३६ फीट चौडा है। किन्तु इसमें केवल एक तिहाई भूमि पर ही इमारत बन सकती है, शेष खुली रहेगी। प्रत्येक घर में शौच गृह और नल की टोंटी होगी। कंपनी एक मकान को बनाने में ६६० रु. व्यय करती है और वह मकान ८४० रु. में मजदूर को बेच दिया जाता है। मजदूर को मासिक किश्तों में रकम चुकानी पड़ती है। मूल-धन पर ३ प्रतिशत सूद लिया जाता है। यह तो हुई पक्के मकानों की बात. परन्तु कम्पनी, यदि मजदूर चाहें तो कच्चे मकान बनाने की भी आज्ञा देती है। परन्तु उन्हें कम्पनी के नक्शे के अनुसार ही मकान बनाना होगा। कम्पनी मजदूरों को ३०० रु. पेशगी दे देती है। जो कि एक कच्चे मकान की लागत होती है और ४ से ७ वर्ष में प्रति मास किश्तों में यह रकम अदा कर दी जाती है। इस उपनिवेश में सार्वजनिक

उद्यान, बाजार, अस्पताल, स्कूल, मज़दूरों की इंस्टिट्यूट तथा मज़दूरों के सम्बन्ध में अन्य संस्थाओ की इमारतो के लिए जमीन निश्चित कर दी गई है। यद्यपि अभी तक यह पूरा उपनिवेश बन नहीं पाया है, महायुद्ध ने इसमें बाधा डालदी है, परन्तु जब वह बन जावेगा तो एक अत्यन्त सुन्दर और आकर्षक मज़दूर उपनिवेश होगा तथा मजदूरो को इस बात का गौरव होगा कि उनका अपना मकान है।

चाय के बाग

आसाम तथा बंगाल के चाय के बागो मे मज़दूर बहुधा दूसरे प्रान्तो से आते है और चाय के बागो में उन्हे रहने के लिए मकान देने का नियम है। यद्यपि वहां पर जमीन की समस्या नहीं है, परन्तु फिर भी वहा मकानो की दशा सतोषजनक नही है। अधिकांश मकानों मे केवल एक ही कमरा होता है, मकान की कुर्सी प्रायः बिलकुल ही नहीं होती, इसी कारण सीलन वहुत रहती हैं और बहुत से बागो मे मजदूरो की तुलना मे मकान इतने कम होते है कि एक कमरे में एक से अधिक परिवार रहते है। इनके अतिरिक्त यह मकान खुले और हवादार नही होते। चाय के बगीचो के सम्बन्ध मे एक कठिनाई यह है कि वहां बाहरी आदमियो को जाने नही दिया जाता। चाय के बागो के मालिकों का कहना है कि इतना व्यय करके जो मजदूर हम लाते है, उन्हे यदि बाहरी व्यक्तियो से मिलने की सुविधा दी जावेगी तो ग़ैर जिम्मेदार मजदूर कार्यकर्ता उन्हे भड़का देंगे। इसी कारण वे अपने मजदूरो को बाहरी व्यक्तियो के सम्पर्क मे नहीं आने देते। दिन को तो निगरानी रहती ही है, रात्रि मे भी उनकी लाइनो पर पहरा रहता है। एक प्रकार से चाय के बागो के कुली कैदी है और उनके सम्बन्ध मे बाहरी जनता को कुछ अधिक ज्ञान नही है। शाही मज़दूर कमीशन ने चाय के बागो के मालिकों की इन मनोवृत्तियो की निन्दा करते हुए कहा था कि एक न एक दिन तो यह होना ही है। इसी प्रकार मज़दूरों

को हमेशा दबाये नहीं रक्खा जा सकता। अस्तु मालिकों को उनमें संगठन उत्पन्न होने देना चाहिए। किन्तु अभी तक चाय के बागों के मालिकों की वही नीति चली आ रही है।

खानों के मजदूरों के रहने के मकान

जिस प्रकार बड़े-बड़े औद्योगिक केन्द्रों में मज़दूर अत्यन्त दयनीय दशा में रहते हैं, उसी प्रकार उन्हें खानों में भी रहना पड़ता है। बंगाल और बिहार की कोयले की खानों में तीन प्रकार के मजदूर होते हैं। (१) वे ग्रामीण किसान, जो खान के समीपवर्ती गांवों के रहने वाले होते हैं। उनके गांव खानों से ५ मील की दूरी पर होते हैं। वे अपने घरों पर रहते हैं और खानों में काम करते हैं। (२) दूसरे प्रकार के वे मजदूर होते हैं जो खानों से बहुत दूरी पर स्थित गांवों में रहते हैं और वे वर्ष में कुछ महीनों के लिए खानों में काम करने के लिए आते हैं तथा खेत बोने तथा फसल काटने के समय वे अपने गांवों को वापस लौट जाते। (३) तीसरी प्रकार के वे मजदूर हैं, जो स्थायी रूप से खानों में रह कर काम करते हैं। खानों के पास के गांवों में रहने वाले संथाली मजदूर अपने सुन्दर, स्वच्छ और आकर्षक गाँवों को छोड़कर कभी खानों के गंदे 'धोरों' मकानों में रहना पसन्द नहीं करते, परन्तु अन्य मजदूर इन 'धोरों' में रहते हैं। इन 'धोरों' में एक कमरा होता है, जिसकी लम्बाई १० फीट और चौड़ाई १० फीट होती है। इन्हीं कमरों में मजदूर सोते हैं और खाना पकाते हैं और इस कारण यह कमरे बहुत काले हो गये हैं। अधिकांश की छतें टपकती हैं और वर्षा ऋतु में तो मजदूर के लिए इन "धोरों" में रहना ही कठिन हो जाता है।

खानों में केवल रहने की ही कठिनाई हो, केवल यही बात नहीं है। इन औरों की लाइनों मे सफाई का भी समुचित प्रबध नही होता। शौच-गृह तो बहुत ही कम होते है और नहाने तथा कपडा धोने के लिए भी वहां उचित व्यवस्था नहीं है। अधिकाश मजदूर गंदे तालाबो का उपयोग करते है। इस बात की बहुत बडी आवश्यकता है कि खानो के मालिक मजदूरों के लिए पानी के नलो और स्नान गृहो की उचित व्यवस्था करें और साथ ही अच्छे शौचगृह भी बनवाये जावे।

कोलार सोने की खानो मे मजदूर झोपडियों मे रहते हैं। इन झोपड़ियों की दीवारे बास की चटाई की होती है। उनपर टीन की छत होती है। झोपडियो की लम्बाई और चोडाई ६ फीट होती है। इन झोपडियों मे कोई नाली का प्रबंध नहीं होता, पानी वही भरता रहता हे और गंदगी उत्पन्न करता है। प्रत्येक झोपडी मे चार व्यक्ति रहते है। इन झोपडियों की ऊँचाई बहुत कम होती है, इस कारण गर्मियों में टीन की छत इतनी गरम हो उठती है कि मनुष्यों का वहाँ रहना दूभर हो जाता है। जब कि हवा तेज चलती है तो धूल और गर्द बास की चटाईयों की संधों से झोपडी मे भर जाती है। मजदूर का भोजन, वस्तु सभी धूल से भर जाते है और उसी धूल मे वह सांस लेते है।

जमशेदपुर (टाटानगर)

मकानों की ऐसी भयकर कमी और गंदगी, जैसी कि ऊपर दिये हुए औद्योगिक केन्द्रों में दिखलाई देती है, अनिवार्य हो, ऐसी बात नही है। जमशेदपुर को देखने से यह सिद्ध हो जाता है कि यदि वास्तव में प्रयत्न किया जावे तो मजदूरों के रहने की समस्या को हल किया जा सकता है, मजदूर को नरक तुल्य स्थानों मे रहने से बचाया जा सकता है।

जमशेदपुर मे जैसी अच्छी सडकें है, स्वच्छ जल का जैसा सुन्दर प्रबंध है और चिकित्सा की जैसी समुचित व्यवस्था है, वैसी भारत के कम

शहरों में मिलती है। बालक-बालिकाओं के लिए खेलने के लिए मैदानों और पार्कों की समुचित व्यवस्था की गई है और शिक्षा का भी समुचित प्रबंध है। शहर में बिजली अपेक्षाकृत बहुत कम मूल्य पर दी जाती है। जिस भूमि पर जमशेदपुर नगर बसा हुआ है, वह टाटा कंपनी की सम्पत्ति है, अतएव नगर का प्रबन्ध कंपनी की देख-रेख में ही होता है। रोशनी, नालियों और सड़कों की सफाई, शिक्षा, चिकित्सा तथा जल की व्यवस्था का व्यय कंपनी करती है।

कंपनी ने मजदूरों के रहने के लिए मकानों की भी व्यवस्था की है। लगभग ६००० क्वार्टर कंपनी ने अपने व्यय से बनवाये हैं। प्रत्येक क्वार्टर के चारों ओर एक छोटा-सा बगीचा होता है और साफ शौचगृहों की व्यवस्था की गई है। मजदूरों को भी कंपनी रुपया कर्ज दे कर मकान बनाने के लिए उत्साहित करती है। मकान की लागत का दो तिहाई तक रुपया कंपनी कर्ज दे देती है। ऋण पर ३ प्रतिशत सूद लिया जाता है और मासिक किश्तों में रुपया चुका दिया जाता है। निर्धन मजदूर बहुत सादे, कच्चे और कम खर्चीले मकान बना लेते हैं। वे स्वयं ही काम करते हैं, केवल मिस्त्रियों को नौकर रख लेते हैं और सामान खरीद लेते हैं। इस प्रकार बहुत कम खर्च में मकान बन जाते हैं। नगर के भिन्न-भिन्न भागों में इस प्रकार के लगभग दस हजार मकान हैं।

ऊपर दिये हुए विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि भारतीय मज़दूर औद्योगिक केन्द्रों में अधिकतर अत्यंत गंदे मकानों में रहते हैं और भीड़ इतनी अधिक होती है कि विवाहित स्त्री-पुरुष एकांत में स्वतंत्ररूप से मिल-जुल भी नहीं सकते। गंदगी और भीड़ के कारण उनके स्वास्थ्य और चरित्र पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है। सच तो यह है इन औद्योगिक केन्द्रों में मानवता नष्ट की जा रही है। यदि हमने मजदूरों के जीवन को अधिक सुखी और समृद्धिशाली नहीं बनाया तो यह कहना पड़ेगा कि राष्ट्र के लिए यह उद्योग-धंधे अत्यंत हानिकारक सिद्ध होंगे।

यदि राष्ट्र की बहुत बडी जनसंख्या को केवल इसलिए नारकीय जीवन व्यतीत करने पर विवश होना पडे कि जिससे वडे-बडे पूंजीपतियो को अधिकाधिक लाभ मिल सके तो यह कदापि सहन नही किया जा सकता। कोई भी सरकार इस स्थिति को सहन नहीं कर सकती। मजदूरों के जीवन को सुखी बनाने लिये पहले हवादार और अच्छे मकानो की व्यवस्था करना अत्यंत आवश्यक हे।

मकानो की समस्या हल करने मे कठिनाइयाँ

कारखानों को मजदूरों के लिये मकानों की समस्या हल करने में सबसे बडी कठिनाई जमीन की उपस्थित होती है। जो कारखाने छोटे-छोटे केन्द्रो या कस्बो में है, उनकी बात छोड दे तो बडे औद्योगिक केन्द्रों में तो जमीन की बहुत कमी है और यदि हे भी तो उसका मूल्य कल्पनातीत हे। अभी तक सरकार जहां अन्य सार्वजनिक हित के कार्यों के लिये उचित मावजा देकर (Land acquisition Act) कानून के अन्तर्गत जमीन ले सकती थी, वहा कारखानो के मजदूरो के लिए मकान बनाने के लिए जमीन लेने की सुविधा नहीं थी, किन्तु शाही मजदूर कमीशन की सिफारिश के अनुसार कानून मे संशोधन कर दिया गया है और अब इस कार्य के लिए भी सरकार ज़मीन को उचित मावजा देकर ले सकती है। फिर भी जमीन की समस्या औद्योगिक केन्द्रों मे है ही।

एक कठिनाई यह हे कि बहुत से नगरो मे मिलों के पास तो तनिक सी जमीन नहीं है, हां, बहुत दूर पर जमीन मिल भी सकती है। स्वभावत मजदूर मिल के पास ही रहना पसन्द करता है। क्योंकि यदि मिल से चार-पाच मील दूर जाकर रहे तो आने जाने की कठिनाई के अतिरिक्त उसे तीन घटे आने-जाने के लिए नष्ट करना पडेगे। ऐसी दशा में उसे अपने घर से दो घटे पहले चलना होगा और दिन भर काम कर चुकने के उपरान्त छुट्टी होने पर थका-मांदा दो घंटे के उपरान्त वह

घर पहुँचेगा। यही कारण है कि जहां-जहां मिलों से अधिक दूरी पर मजदूरों के रहने का प्रबन्ध किया, वहां मजदूरों ने रहना पसंद नहीं किया। इसके अतिरिक्त बाजार और अस्पतालों की भी सुविधा मजदूर अवश्य देखते है। अतएव आवश्यकता इस बात की हे कि यदि मजदूरों के लिए बहुत दूरी पर अच्छे मकानों का प्रबन्ध किया जावे तो बाजार और अस्पतालों की सुविधा प्रदान करने के अतिरिक्त उनके मिल तक आने और जाने के लिए बस सर्विस या ट्राम का भी प्रबन्ध किया जावे और उसका व्यय मिलें दे।

घने आबाद औद्योगिक केन्द्रों मे नए कारखाने न खोलने दिए जावें

भविष्य मे मकानों की समस्या और उग्ररूप धारण न करले इसके लिए यह आवश्यक है कि प्रत्येक ऐसे नगर मे जहां की आबादी घनी है और जहां मकानों की कमी है, कोई नया कारखाना न खुलने दिया जाय। यह अत्यंत आवश्यक सुधार है, नहीं तो औद्योगिक केन्द्रों में इस समस्या का हल कर सकना सम्भव न होगा। यों भी धन्धों का विकेन्द्रीकरण आवश्यक हो गया हे। अस्तु यदि भविष्य मे किसी भी बडे नगर में कारखाना खोलने से पूर्व प्रान्तीय सरकार से आज्ञा लेना अनिवार्य कर दिया जावे तो भविष्य मे इस समस्या की भयंकरता को कम किया जा सकता है।

कारखानो के मजदूरो के लिए मकानो की व्यवस्था

अब प्रश्न यह है कि मकानों की व्यवस्था किस प्रकार की जावे। मजदूरों के लिए मकानो की व्यवस्था तो किसी न किसी प्रकार होनी ही चाहिए। यह तभी हो सकता हे कि प्रांतीय सरकार म्युनिसिपल बोर्ड तथा मिल मालिक सभी मिल कर इस समस्या को हल करने का प्रयत्न करें। सच तो यह है कि प्रत्येक प्रांत की सरकार का यह पहला कर्तव्य होना चाहिए कि वह औद्योगिक केन्द्रों में मजदूरो के जीवन को अधिक सुन्दर बनाने का प्रयत्न करे।

आवश्यकता इस बात की है कि प्रत्येक औद्योगिक केन्द्र में जन संख्या की दृष्टि से मकानों की जांच की जावे और फिर प्रत्येक मिल मालिक को अपने मज़दूरों के लिए मकान बनाने के लिए उत्साहित किया जावे। प्रान्तीय सरकार मकानों के लिए उपयुक्त स्थान दिलाने का प्रयत्न करे और जो भी मिल मालिक चाहे उन्हें बहुत कम सूद पर इस कार्य के लिए ऋण दिया जावे। जो कंपनियाँ अपनी पूंजी पर दस प्रतिशत से अधिक लाभ देती हो, उन्हे मज़दूरो के लिए हवादार अच्छे और खुले हुए मकान बनवाने पर विवश किया जाय। इस आशय का एक कानून बन जाना चाहिए कि जो कम्पनिया पूजी पर १० प्रतिशत से अधिक लाभ देती है, उनका अतिरिक्त लाभ का कुछ अश मजदूरो के लिए मकान बनाने मे काम आना चाहिए, साथ ही बडे औद्योगिक केन्द्रो में किसी भी नये कारखाने को खोलने की आज्ञा न देनी चाहिए।

छोटे-छोटे कस्बो और नगरो में जो कारखाने है उनके समीप ही यथेष्ट भूमि अभी से कारखानों को लेने पर विवश करना चाहिए, जिससे कि भविष्य मे वहा मकानों के लिए भूमि का टोटा न हो जावे। जैसे ही कारखाने की स्थिति ऐसी हो कि वह मकानो मे पूजी लगा सके, कारखानों को मजदूरो के लिए मकान बनाने के लिए विवश करना चाहिए। यदि मिल मालिक चाहे तो सरकार उन्हे ऋण दे दे। भविष्य मे नये कारखानो की स्थापना होने पर इस बात का विशेष ध्यान रखना चाहिए कि फैक्टरी ने इतनी भूमि ली है या नही कि जिस पर मजदूरो के मकान बन सके। एक कानून बना कर प्रत्येक कारखाने को जिसमें १०० से अधिक मजदूर काम करते हो, अपने लाभ का कुछ अंश इस कार्य के लिए पृथक रखने पर बाध्य किया जावे। जिससे कालान्तर मे मजदूरो के लिए मकानो की व्यवस्था हो सके।

म्यूनिसिपल बोर्डों का भी इस सम्बंध मे कुछ कर्तव्य है। जहां मजदूरो की बस्तियां है वहा रोशनी, पानी, सफाई, सडक, नाली, अस्पताल, शिक्षा और बाजार का प्रबंध उन्हे करना चाहिए। अभी तक म्यूनिसिपेल-

टियो ने इस आवश्यक कर्तव्य की ओर ध्यान ही नही दिया है। यही नही, जो मकान अत्यन्त गंदे और मनुष्यों के रहने के अयोग्य है, उन्हे नष्ट करवा देना भी म्यूनिसिपल-बोर्ड का कर्तव्य होना चाहिए। बात यह है कि गंदे मकानों के मालिक जो निर्धन मज़दूरो से किराये के रूप में खूब लाभ कमाते है, वे ही म्यूनिसिपल-बोर्डो को घेरे रहते हैं। इस कारण उनके विरुद्ध कुछ कार्यवाही नहीं हो पाती। अतएव आवश्यकता इस बात की हे कि प्रान्तीय सरकार प्रत्येक शहर मे मकानों की जांच करावे और जिन मकानों को मनुष्यों के रहने के अयोग्य समझा जावे, उन्हे एक नियत समय के अन्दर नष्ट कर देने की आज्ञा दे दे।

इसके अतिरिक्त प्रान्तीय सरकार म्यूनिसिपल बोर्ड, इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट तथा अन्य सरकारी संस्थाये अपने कर्मचारियों के लिए मकानो की व्यवस्था करें। निर्धन मजदूरों के जीवन को सुखी बनाने के लिए हवादार, आकर्षक, सुन्दर और साफ मकान की अत्यन्त आवश्यकता हे और उसके लिए जितना भी प्रयत्न किया जावे थोडा है।

ऊपर लिखी हुई योजना के विरुद्ध यह आशंका की जा सकती है कि यदि कारखानों को मकान बनवाने के लिए विवश किया गया नो औद्योगिक उन्नति की गति रुक जावेगी, क्योंकि बहुत अधिक पूंजी मकान बनवाने मे लग जावेगी। परन्तु जब कारखाने पूंजी पर १० प्रतिशत से अधिक लाभ दे, तभी उन्हे मकान बनवाने पर बाध्य किया जावे और उस दशा मे भी प्रान्तीय सरकार उन्हे बहुत कम सूद पर ऋण दे। इससे मिलो को अन्तत. लाभ ही होगा। मजदूरो की कार्यक्षमता बढेगी और उन्हे अधिक स्थायी मजदूर मिल सकेंगे। कुछ मालिकों ने इस रहस्य को समझ लिया है और वे इस ओर प्रयत्नशील है। ऐसे मिल मालिकों को प्रान्तीय सरकार ने हर प्रकार की सहायता देना चाहिए।

कहीं-कहीं मजदूर मालिको के बनाये हुए मकानो में रहना पसंद नहीं करते हैं, क्योंकि मालिक उन पर तथा उनके कार्यों पर निगरानी

रखते हैं। मज़दूर कार्यकर्ताओं को वहां आने से रोका जाता है और मजदूर सभा के कार्यों में विघ्न डाले जाते है। जब मजदूर हडताल कर देते हैं तो उन्हें तुरन्त मकान खाली कर देने के लिए कहा जाता है और कभी-कभी तो पानी और रोशनी बंद कर देने की धमकी दी जाती हैं। आशा है कि भविष्य मे मिल मालिक मजदूरो पर इस प्रकार का अनुचित दबाव नही डालेगे। किन्तु यदि आवश्यकता समझी जावे तो सरकार कानून बनाकर इस प्रकार के अनुचित कार्यों को गैर कानूनी घोषित कर दे।

नये कारखाने यदि बड़े औद्योगिक केन्द्रों मे न खुलने दिये जावे और वे क्रमश छोटे शहरो तथा कस्बो मे ही स्थापित किये जावें तो उनके लिए जमीन का प्रबंध हो सकता है और मालिको द्वारा मकानों की व्यवस्था हो सकती है। किन्तु बम्बई, कलकत्ता, कानपुर अहमदाबाद मदरास, नागपुर, इत्यादि मे केवल मिल मालिकों के ऊपर ही मकानों की व्यवस्था का भार छोड देना सम्भव नहीं है। वहां प्रान्तीय सरकार को भी इस कार्य मे हाथ बंटाना होगा। यदि आवश्यकता हो तो मिल मालिको को सरकार आर्थिक सहायता भी दे। और यदि केन्द्र से दूरी पर मजदूरों के उपनिवेश बसाये जावें तो उनको गमनागमन की सुविधायें भी प्रदान की जावे। तभी यह समस्या हल हो सकती है।

सातवां परिच्छेद

मजदूरों का वेतन तथा उनकी आर्थिक स्थिति

मजदूरो के वेतन का प्रश्न भी अत्यन्त महत्वपूर्ण है। जब तक मजदूरो को उचित वेतन नहीं दिया जाता तब तक उनकी स्थिति में सुधार होना सम्भव नहीं है क्योकि मजदूरो के रहन-सहन का दर्जा मज़दूरो को कितनी मजदूरी मिलती है, उस बात पर निर्भर है। मजदूरों की सुख सुविधा, भोजन वस्त्र [illegible] समस्या, उनका स्वास्थ्य, सभी वेतन या मजरीद

पर ही निर्भर है । अतएव मजदूर समस्याओं का अध्ययन करनेवालों के लिए मज़दूरी का अध्ययन करना अत्यन्त आवश्यक है । जहां तक मजदूरों का प्रश्न है, मजदूरी का सवाल उनके लिए सबसे अधिक महत्वपूर्ण है । यही कारण है कि अधिकांश हड़तालें मजदूरी के प्रश्न को लेकर ही होती है ।

मजदूरी की भिन्न-भिन्न पद्धतियाँ

व्यवहार में मज़दूरी की बहुत पद्धतियां है । क्योंकि मजदूर कितना काम करता है उसको निश्चय करने के बहुत से ढंग हैं । किन्तु मोटे रूप मे हम मजदूरी की भिन्न-भिन्न पद्धतियो को दो मुख्य पद्धतियो में विभाजित कर सकते है (१) पहली पद्धति वह है, जिसमे मजदूरी समय के अनुसार दी जाती हैं (२) दूसरी पद्धति वह है, जिसमे मजदूरी उत्पादन पर निर्भर रहती है, अर्थात मजदूर जितना काम करता है, उसके अनुसार मजदूरी दी जाती है।

समय के अनुसार मजदूरी निर्धारित करने मे इस बात का ध्यान नहीं रखा जाता कि मजदूर कितना काम करता है । मजदूरी प्रतिघंटा, प्रतिदिन, अथवा प्रति सप्ताह के अनुसार निर्धारित की जाती है । समय के अनुसार मजदूरी के निर्धारित होने पर मजदूर कितना काम करता है, इसका विचार नहीं किया जाता । हां मालिक इस बात का ध्यान अवश्य रखता है कि कोई मजदूर इतना कम काम तो नहीं करता कि वह रखने योग्य न हो । समय के अनुसार मजदूरी निर्धारित करते समय भी कार्य का न्यूनतम मानदंड रक्खा जाता है । जो मजदूर उतना कार्य नहीं कर पाता उसको निकाल दिया जाता है।

कार्य अर्थात उत्पादन के अनुसार जहां मजदूरी दी जाती है, वहां जो वस्तु तैयार की जाती है, अथवा जो कार्य किया जाता है उसके अनुसार मज़दूरी का हिसाब लगाया जाता है ।

उदाहरण के लिये यदि किसी कारखाने में प्रति घन्टा दो आना

अथवा प्रति दिन १ रु. के हिसाब से मजदूरी दी जावे तो उसे "समय के अनुसार मजदूरी" कहेगे और यदि किसी बुनकर को प्रति गज कपडा बुनने के लिए २ आना प्रति गज कपडा मज़दूरी दी जाती है तो उसे "कार्य के अनुसार मज़दूरी" कहेगे।

अधिकाश धन्धों में समय के अनुसार मजदूरी दी जाती है। क्योकि मजदूर और मजदूर सभाये समय के अनुसार मजदूरी का समर्थन करते है। समय के अनुसार मजदूरी का एक गुण विशेष यह है कि वह बहुत सरल है। मजदूर की समझ में वह आसानी से आजाती है और उसका हिसाब लगाना भी सरल है। यही नहीं, कुछ धंधे ऐसे होते है, जहां किसी व्यक्ति विशेष ने कितना काम किया है, इसका हिसाब लगाना सम्भव नही है। उदाहरण के लिए रेलवे मे, शकर के कारखाने मे, जहाज मे, बिजली के कारखाने में, वाटर वर्क्स मे इत्यादि। इन धधों तथा अन्य ऐसे ही धंधो में किसी एक मजदूर ने कितना कार्य किया है, यह नही जाना जा सकता। क्योंकि इन धधो में प्रत्येक क्रिया एक दूसरे से ऐसी मिली हुई होती है कि उसको किसी बीच की स्थिति मे नाप सकना सम्भव नही है। इसके विपरीत सूती या ऊनी कपडे के कारखाने में मजदूरों ने कितना कार्य किया है, इसका हिसाब बडी सरलता से लगाया जासकता है। एक बुनकर जितना कपडा एक दिन मे तैयार करता है, वह बडी आसानी से मालूम किया जा सकता है।

जिन धन्धो मे कुशलता और सावधानी की अत्यन्त आवश्यकता होती है उनमे भी समय के अनुसार मजदूरी देना ही उचित होता है। क्योंकि यदि वहा कार्य के अनुसार मजदूरी दी जावे तो मजदूर अधिक मजदूरी पाने के लालच में कार्य को जल्दी समाप्त करने का प्रयत्न करेंगे और वह कार्य भलीभांति न हो सकेगा। उदाहरण के लिए यदि बढिया रेशमी साड़ी अथवा अन्य मूल्यवान कपडा तैयार करना हो, बढिया औजार बनाने हो, हीरे के तथा अन्य बहुमूल्य आभूषण बनवाना हो, अथवा ऐसे ही अन्य कार्यों मे जहा कुशलता की आवश्यकता

होती है, वहां समय के अनुसार ही मजदूरी दी जाती है। कुछ ऐसे धन्धे है, जहां काम के अनुसार मजदूरी देने की प्रथा बहुत अधिक प्रचलित है। उदाहरण के लिए वस्त्र व्यवसाय में, इंजीनियरिंग में, चीनी मिट्टी के बर्तनों के कारखानों मे, कपडा सीने के कारखानों मे तथा कोयले की खानों मे कार्य के अनुसार ही मजदूरी दी जाती है।

समय के अनुसार मज़दूरी देने की प्रथा में एक दोष यह है कि मज़दूर जितना कार्य कर सकता है, उतना नहीं करता। वह समय को नष्ट करने का प्रयत्न करता है और कम से कम काम करने का प्रयत्न करता है। जिन कारखानों मे निरीक्षण बहुत अच्छा होता है और मजदूर विश्वासपात्र और ईमानदार होते है वहां कार्य कुछ ठीक होता है और जहां निरीक्षण शिथिल होता है, वहां कार्य ठीक नहीं होता।

किन्तु कार्य के अनुसार मजदूरी देने की प्रथा मे कुछ गम्भीर दोष है। एक बडा दोष तो यह है कि इसके कारण मजदूरों में अस्वस्थकर प्रतिस्पर्द्धा की भावना जाग्रत हो जाती है। जो अधिक कुशल मजदूर हैं, वे अधिक कमाते हैं। इस प्रतिस्पर्द्धा का प्रभाव मज़दूरो के संगठन पर बुरा पडता है। यही कारण है कि ट्रेड यूनियन (मज़दूर संघ) इस प्रथा को अधिक पसंद नहीं करती। इस प्रथा मे दूसरा भयंकर दोष यह है कि मिल मालिक मजदूरो की कार्यक्षमता कितनी है, यह जान जाता है, और यदि वह देखता है कि मज़दूर बहुत अधिक मजदूरी पाते हैं तो उसका प्रयत्न मजदूरी कम करने की ओर होता है। अथवा वह समय के अनुसार मजदूरी निर्धारित कर देता है और साथ ही एक मजदूर को कम से कम कितना कार्य अवश्य करना चाहिए, यह भी वह निश्चित कर देता है। इस कारण मजदूरों का शोषण करने का उसे अवसर मिल जाता है। यही कारण है कि जिन देशो में मज़दूर सुसंगठित हैं, वहां कार्य के अनुसार मजदूरी की दर ट्रेड यूनियन और मालिक दोनो की स्वीकृति से ही निश्चित होती है और मजदूर संघ समय के अनुसार **न्यूनतम**

मजदूरी भी निर्धारित कर देता है, जो कि मजदूर को प्रत्येक दशा में मिलना चाहिए ।

प्रीमियम बोनस पद्धति

समय के अनुसार मजदूरी देने से कुशल और क्षमतावान मजदूर को कोई लाभ नहीं होता। क्योंकि उसको उतनी ही मजदूरी मिलती है, जितनी कि अकुशल मजदूरों को । अतएव वह जितना उत्पादन कार्य कर सकता है, उतना नही करता । इस कारण कुछ व्यवसायियो ने समय के अनुसार मज़दूरी देने की प्रथा और कार्य के अनुसार मजदूरी देने की प्रथा का सम्मिश्रण करके प्रीमियम बोनस पद्धति निकाली । प्रीमियम बोनस पद्धति का स्वरूप भिन्न-भिन्न है । हम यहां मुख्य प्रीमियम पद्धतियों का विवरण देते हैं ।

टेलर पद्धति

प्रीमियम बोनस पद्धतियों में सबसे पुरानी पद्धति टेलर पद्धति है, जिसे संयुक्तराज्य अमेरिका के एफ. डब्लू. टेलर ने निकाला था । इस पद्धति में कार्य के अनुसार मज़दूरी की दरें होती है । एक ऊंची दर होती है और एक नीची दर । ऊंची दर नीची दर से ड्योढी तक होती है । यदि मजदूर कार्य के एक निश्चित मानदण्ड से अधिक काम करता है अथवा उतना ही कार्य करता है, तो उसको ऊँची दर से मजदूरी दी जाती है । और यदि वह निश्चित कार्य से कम कार्य करता है तो उसको नीची दर से मजदूरी दी जाती है। इस पद्धति मे धीरे काम करने वाला मजदूर बहुत घाटे मे रहता है और तेज काम करने वाला मजदूर बहुत लाभ उठाता है । इसमे कोई समय के अनुसार मजदूरी को गारंटी नहीं की जाती । परन्तु इस पद्धति मे कार्य का मानदण्ड निर्धारित करने मे बहुत सावधानी रखने की आवश्यकता है । यदि मानदण्ड इतना ऊंचा निर्धारित कर दिया गया कि केवल बहुत तेज मजदूर ही उतना कार्य कर सके तो साधारण

मज़दूरों को उससे बहुत हानि होगी। इस पद्धति को मज़दूरों ने कभी भी पसंद नहीं किया और मिल मालिकों में भी यह अधिक प्रचलित नहीं हुई।

गैंट की बोनस पद्धति

टेलर की पद्धति के दोष को दूर करके गैंट ने एक नवीन बोनस पद्धति निकाली। इस पद्धति की विशेषता यह है कि इसमें प्रति घंटे के हिसाब से मजदूरी की गारंटी दी जाती है, फिर मज़दूर जितना भी कार्य करे। परन्तु यदि मज़दूर निर्धारित कार्य को कर देता है तो उसको ३० प्रतिशत प्रीमियम दिया जाता है। उदाहरण के लिए यदि कारखाने ने एक मजदूर के लिए ५० गज कपड़े का स्टैंडर्ड नियत किया है और यदि कोई मज़दूर ८ घंटे में केवल २० गज कपड़ा ही तैयार करता है तो उसको प्रति घंटा के हिसाब से ८ घंटे की निर्धारित मजदूरी मिल जावेगी। यदि किसी मज़दूर ने ५० गज कपड़ा तैयार कर दिया तो उसको प्रीमियम मिलेगा। इस पद्धति में एक न्यूनतम मजदूरी की गारंटी होती है, जिसके नीचे मजदूरी जा ही नहीं सकती।

प्रीमियम बोनस पद्धतियों में सबसे महत्वपूर्ण और सर्व प्रचलित हैलसे पद्धति है। संक्षेप में पद्धति इस प्रकार है.— कारखाने में मजदूरी की रेट निर्धारित करने वाला एक पृथक विभाग होता है। प्रत्येक कार्य के लिए कितना समय साधारणतः लगेगा, इसको वह विभाग निर्धारित कर देता है। प्रत्येक मजदूर के कार्ड पर वह समय लिख दिया जाता है जो कि स्टैंडर्ड समय है और जितने समय में साधारणतः मज़दूर को वह कार्य कर लेना चाहिए। यदि कोई स्टैंडर्ड समय से अधिक में कार्य समाप्त करता है तो उसको पूरे समय (अर्थात जितने भी घन्टे उसने काम किया है) की समय के अनुसार मजदूरी दे दी जायगी। और यदि कोई मजदूर स्टैंडर्ड समय से कम में काम कर लेता है तो उसने जितने समय की बचत की है, उसके आधे या तिहाई समय की मज-

दूरी उसे बोनस के रूप में और दे दी जाती है। एक उदाहरण से यह बात स्पष्ट हो जावेगी। उदाहरण के लिए यदि प्रति घंटे की समय के अनुसार मजदूरी ४ आना प्रति घंटा है और उस कार्य के लिए पाच घन्टा स्टैंडर्ड समय नियत है और प्रीमियम-बोनस समय की बचत का आधा दिया जाता है तो यदि कोई मजदूर ६ घन्टे मे उस कार्य को समाप्त करता है तो उसे ६ घंटे की समय के अनुसार मजदूरी रु १ आना ८ दे दी जावेगी, किन्तु बोनस नही मिलेगा। यदि वह पांच घंटे में काम समाप्त कर देता है तो उसे रु १ आना ४ मिल जाता है, किन्तु बोनस नहीं मिलता। और यदि वह चार घटे मे काम समाप्त कर देता है तो उसे १ रु. चार घंटे की मजदूरी का मिलता है और आधे घंटे की २ आना मजदूरी बोनस मे मिलती है। इस प्रकार उसकी मजदूरी का रेट चार आना प्रति घंटा न होकर ४।। आना प्रति घंटा हो जावेगा। इस पद्धति का विशेष गुण यह है कि यह बहुत सरल है। मज़दूरो की समझ में आसानी से आ जाती है; साथ ही मालिक को समय की बचत का आधा ही देना पडता है। जहां तक मालिक का प्रश्न है; वहां तक तो उसे लाभ ही हे किन्तु कुशल मजदूर को अपनी कुशलता का पूरा लाभ नहीं मिलता। यही इस पद्धति का दोप है। साथ ही यदि प्रत्येक कार्य के लिए कितना समय लगना चाहिए, इसको निर्धारित करने मे मालिक कुशल मजदूरो के कार्य को स्टैंडर्ड निर्धारित करदे, तो मजदूरो को बहुत हानि उठानी पड सकती है।

रोवान पद्धति

रोवान-पद्धति हैलसे पद्धति से भिन्न है। उदाहरण के लिये यदि कारखाने के अधिकारियो ने किसी कार्य विशेष के लिए १० घटे निर्धारित किये हैं और कोई मजदूर उस कार्य को केवल ८ घंटे मे समाप्त कर देता है, तो उसको ८ घटे का $\frac{२}{१०}$ अर्थात् १.६ घटे का प्रीमियम दिया जावेगा। रोवान पद्धति में प्रीमियम कितने घंटे का मिलेगा, उसको

निकालने का नीचे लिखा गुर है:—

$$\text{जितने घंटे मे काम किया} \times \frac{\text{जितने घंटे की बचत की}}{\text{जितने घंटे निर्धारित थे}}$$

इसका अर्थ यह हुआ कि जो घंटे प्रीमियम के निकले, उनको मजदूरों ने जितने घंटे मे काम समाप्त किया है, उनमे जोड दिया जाता है और उतने की उसे मज़दूरी दे दी जाती है। ऊपर के उदाहरण मे मजदूर ने ८ घंटे मे कार्य समाप्त कर दिया, किन्तु उसको ६·६ घंटे की मजदूरी मिलेगी। इस पद्धति से आरम्भ मे हेलसे पद्धति की अपेक्षा अधिक प्रीमियम मिलेगा। किन्तु यदि मजदूर आधे समय की बचत कर दे तो हैलसे और रोवान पद्धति से एक समान प्रीमियम मिलेगा। यद्यपि इसकी कोई सम्भावना नहीं होती।

यह पद्धति भी मालिक के लाभ की है, क्योंकि मजदूर जितने समय की बचत करता है, उसको उसका लाभ नहीं मिलता और न वह इस पद्धति के पेचीदे हिसाब को ही समझ पाता है।

स्लाइडिंग स्केल पद्धति

इस पद्धति में मजदूरी उस वस्तु के विक्रय मूल्य पर निर्भर रहती है। यदि उस वस्तु का मूल्य बढता है, तो मजदूरी की दर ऊँची कर दी जाती है और घटता है तो घटा दी जाती है। यह पद्धति मालिकों की दृष्टि से तो बहुत अच्छी है परन्तु मजदूरों की दृष्टि से उतनी लाभदायक नहीं है। कारण यह है कि किसी वस्तु का मूल्य उसकी मांग, द्रव्य की घटती या बढ़ती तथा अन्य बहुत से कारणों पर निर्भर है। अन्तु इस पद्धति को स्वीकार करने से मजदूरों को जोखिम भी उठाना होगी जो कि व्यवसायी का कार्य है, न कि मज़दूरों का और जिसके लिए व्यवसायी को लाभ मिलता है।

इसके अतिरिक्त यदि मालिक चाहे तो वस्तु का मूल्य घटा कर मज़दूरों को कम मज़दूरी देकर अपने लाभ को बढा सकता है। यदि वह

वस्तु ऐसी हो कि जिसके मूल्य घटा देने से उसकी मांग बहुत बढ जावे तो मालिक को दोहरा लाभ हो सकता है। एक तो अधिक बिक्री पर थोड़ा लाभ लेने पर भी, उसको कुल लाभ बहुत अधिक होगा, दूसरे मूल्य के घटने के बहाने वह मजदूरी कम कर सकेगा। इसके विपरीत यदि मज़दूर संगठित है तो वे उत्पत्ति कम करके, वस्तु के मूल्य को बढ़ाने का प्रयत्न कर सकते है, जिससे कि उनकी मजदूरी बढ सके। यही कारण है कि यह पद्धति अधिक प्रचलित नहीं हो सकती।

बैडाक्स पद्धति

पिछले दिनों मे बैडाक्स पद्धति ने लोगों का बहुत अधिक ध्यान आकर्षित किया है। किन्तु बैडाक्स पद्धति केवल मजदूरी देने की ही पद्धति मात्र नही है। क्योंकि बैडाक्स कपनी अपने विशेषज्ञों को प्रत्येक कारखाने की उत्पत्ति के ढंग का अध्ययन और जाँच करने के लिए भेजती है। वे उक्त कारखाने की उत्पादन पद्धति में क्या सुधार हो सकते है, इसके सम्बन्ध मे सुझाव देते है। बैडाक्स कम्पनी ने एक कार्य का मानदण्ड निर्धारित किया है, जो कि एक औसत मज़दूर, साधारण परिस्थिति में सामान्य तेजी से कार्य करते हुए और उतना विश्राम करते हुए कर सकता है, जितना विश्राम करने की बैडाक्स पद्धति आज्ञा देता है। दूसरे शब्दों मे बैडाक्स पद्धति मे यह निर्धारित कर दिया जाता है कि एक औसत मजदूर यदि सामान्य रूप से उनके बताये हुए ढंग से कार्य करे तो निर्धारित कार्य कर सकता है, जो भी मजदूर बैडाक्स पद्धति के अनुसार निर्धारित ६० यूनिट प्रति घंटा से अधिक उत्पादन करता है, उसको जितना अधिक वह उत्पादन करता है, उसका तीन चौथाई लाभ दिया जाता है। परन्तु इस पद्धति का मजदूरों द्वारा विशेष रूप से विरोध हुआ है।

लाभ मे हिस्सेदारी (Profit Sharing)

कुछ विद्वानों का विचार था कि यदि मजदूरों को भी कारखाने के

लाभ में साझीदार कर लिया जावे तो वे अधिक मन लगा कर काम कर सकेंगे। उनको एक निश्चित रेट से दैनिक कार्य के लिए मजदूरी दी जावे। बोनस इत्यादि कुछ न दिया जावे, परन्तु लाभ का एक अंश वर्ष के अन्त में उन्हें दे दिया जावे। लाभ में हिस्सेदारी के भी बहुत से दोष हैं। पहले तो लाभ बहुत सी बातों पर निर्भर होता है, केवल मजदूरों के मन लगा कर काम करने पर ही निर्भर नहीं होता। उदाहरण के लिए वस्तु की बाजार में माग कम हो जावे अथवा आर्थिक मंदी के कारण उसका दाम गिर जावे अथवा मालिकों की अव्यवस्था और कुप्रबंध के कारण हानि हो जावे, तो मजदूरों के मन लगा कर काम करने पर भी, लाभ के बदले हानि हो सकती है। यही कारण है कि 'लाभ में हिस्सेदारी' ने मजदूरों को कभी भी प्रभावित नहीं किया। इसमें एक कठिनाई यह भी है कि लाभ हानि का सारा ब्योरा तो मालिक ही तैयार करता है। अस्तु यदि वह चाहे तो लाभ को कम करके दिखला सकता है। इन्हीं सब कारणों से लाभ में हिस्सेदारी अधिक प्रचलित नहीं हो सकी।

साझेदारी (Co-partnership)

डायरेक्टर होता था, परन्तु उसकी बात को सभी आदरपूर्वक स्वीक
करते थे। वास्तव में इस प्रकार के उदाहरण बहुत कम हैं और साध
रणतः पूंजीपतियों अथवा व्यवसायियों से इस मनोवृत्ति की आशा कर
भी मूर्खता है। यह तो कुछ भावना-प्रधान उदार व्यक्तियो की सिद्धां
वादिता के चिन्ह मात्र हैं। अस्तु, इस प्रकार की कोई पद्धति पूंजीवा
सगठन मे प्रचलित करना असम्भव है।

सहकारी उत्पादन (Co-operative Production)

सहकारी उत्पादन मे मालिक को हटा कर मजदूर स्वयं व्यवसा
का कार्य करते है, अर्थात् धंधे की जोखिम और उसका नियन्त्रण उ
हाथ में रहता है। वे स्वयं अपने नौकर होते हैं। उत्पादन की सारी जिम
दारी उन पर होती है और वे पूंजी उधार लेते है। धंधे का ल
उन्हे मिलता है और उस पर उनका अधिकार स्थापित हो जाता है
इस प्रकार के सहकारी उत्पादन के आदर्श ने बहुत से सामाजि
सुधारकों, राबर्ट ओवन, जान स्टुअर्ट मिल, फौरियर तथा क्रिश्चिय
सोशलिस्टों को आकर्षित किया था।

किन्तु इस प्रकार की उत्पादक समितियां सफल नही हुईं। इसका मु
कारण यह है कि आधुनिक बडी मात्रा की उत्पत्ति में बहुत अधिक पूंजी औ
व्यावसायिक योग्यता की आवश्यकता होती है। निर्धन मजदूरों को बै
इत्यादि यथेष्ट पूंजी नही देते। विशेषज्ञ तथा मैनेजर तथा अ
शिक्षितवर्ग के लोग मजदूरो के द्वारा सचालित कारखानों में काम कर
पसंद नही करते। फिर कारखानों मे उन मैनेजरो को मजदूरो पर अ
शासन रखना कठिन होता है, जो वास्तव मे उनके मालिक है। य
कोई शरारती मजदूर, जो कि बहुधा अपने अन्य साथियो में प्रभ
रखता है, काम नही करना चाहता और मैनेजर इत्यादि उनको दबा
चाहे तो मैनेजर की स्थिति गडबड हो सकती है। यही कारण है
विशेषज्ञ और अन्य उच्च अधिकारी इन कारखानों मे काम नही क

और यहां का अनुशासन ठीक नही रहता । मजदूरों के कारखानों को यथेष्ट पूंजी भी नही मिलती, साथ ही माल की बिक्री का भी उचित प्रबन्ध नही हो पाता । बडी मात्रा का उत्पादन मज़दूर मालिकों द्वारा सफलतापूर्वक नही हो पाता । यही कारण है कि इस प्रकार की फैक्टरियाँ सफल नही हुईं ।

परन्तु छोटी मात्रा मे सहकारी उत्पादन बहुत सफल हुआ है । उदाहरण के लिए चीन की औद्योगिक समितियों ने चीन में सहकारी ढंग पर उत्पादन का एक अत्यन्त सफल संगठन खडा कर दिया है ।

ऊपर के विवरण से यह तो स्पष्ट होता है कि मज़दूर का वास्तविक शोषण तभी बंद हो सकता है जब कि समाजवादी व्यवस्था स्थापित हो; किन्तु इस पूंजीवादी व्यवस्था मे उसके लिए "न्यूनतम मजदूरी कानून" बना कर इतनी मज़दूरी कानून द्वारा निर्धारित कर देनी चाहिए कि उसको मनुष्योचित जीवन व्यतीत करने के साधन प्राप्त हो सके ।

भारत मे मजदूरी

भारत मे मज़दूरी पद्धति अत्यन्त अस्तव्यस्त दशा में है । भिन्न-भिन्न धंधो में मज़दूरी निर्धारित करने की पद्धति भिन्न है और एक स्थान में भी सब कारखानों में मजदूरी एक-सी हो, यह बात नहीं है । आप किसी औद्योगिक केन्द्र में चले जाइये, दो कारख़ानो की दीवारें मिली हुई है और उनमें मजदूरी मे आकाश पाताल का अन्तर है । एक ही मालिक के दो भिन्न कारख़ानों में भी मज़दूरी में बहुत विभिन्नता है । अभी तक भिन्न-भिन्न धंधों की मज़दूरी का कोई स्टैंडर्ड निर्धारित नहीं किया गया है । यद्यपि १९२६ मे मजदूरी अदायगी कानून पास हो गया है । किन्तु अब भी मालिक मनमाना जुर्माना करते है, मज़दूरी का कुछ भाग वस्तुओं मे देते है और समय पर मज़दूरी नहीं देते । न देश में मज़दूर आन्दोलन ही इतना प्रबल है कि देश भर मे मज़दूरी का एक-सा स्केल

निर्धारित करवाने मे सफल हो सके। यही कारण है कि मज़दूरी निर्धारित करने का देश मे न तो कोई सर्वमान्य एक समान आधार ही है और देश मे मजदूरी सम्बन्धी कल्पनातीत भिन्नता पाई जाती है।

चाय के बाग मे मजदूरी

चाय के बागों में "हाजिरा" अर्थात् एक निर्धारित कार्य के लिए एक वेसिक मजदूरी होती है। जब मजदूर से अतिरिक्त कार्य (ओवर टाईम) लिया जाता है तो उस वेसिक रेट मे कुछ वृद्धि करके अतिरिक्त कार्य की मजदूरी दी जाती है। उसे टिक्का, नागदा, या डबली कहते है। किन्तु कुछ बागों मे 'हाजिरा' (निर्धारित कार्य) एकसा नही होता और कभी-कभी बागीचो के मालिक हाजिरा रेट को ही घटा देते है, जिसके कारण अधिक कार्य करने पर भी मजदूर को अधिक मजदूरी प्राप्त नही होती। कही-कहीं वेसिक रेट घटाने के साथ दूसरा और तीसरा हाजिरा भी जोड़ दिया जाता है। पहिले हाजिरा के लिए जो ४ से ६ घंटे का होता है, पुरुष को चार से पाच आना और स्त्रियों को तीन से चार आना मजदूरी मिलती है। बच्चो को एक से तीन आना तक मजदूरी दी जाती है। हाजिरा कार्य के निर्धारित मानदड (स्टैंडर्ड) को कहते है। उदाहरण के लिए भूमि जोतनी हुई तो ३५ से ७० ताल तक एक हाजिरा होगा। जब पत्तियों को तोडने का समय आता है तो हाजिरा पद्धति को छोड दिया जाता है, और एक पैसा प्रति पौंड के हिसाब से मजदूरी दी जाती है। कहीं-कही पत्तियों को तौलने मे खूब धोखा दिया जाता है, पौंड की जगह सेर का प्रयोग किया जाता है और इस प्रकार मजदूर की मजदूरी कम कर दी जाती है। पत्तियाँ तोडने के मौसम मे औरते पुरुषो से अधिक कमा लेती है। उनकी औसत मजदूरी एक रुपया प्रति दिन पहुँच जाती है। बाग के मालिको के सघों ने एक प्रकार का समझौता कर लिया है, जिसके अन्तर्गत कोई भी बगीचा अधिक मजदूरी नहीं दे सकता। दुर्भाग्यवश इस धन्धे मे मजदूर संगठन का चिन्ह

भी नहीं है। इस कारण मजदूर अपने वेतन को बढवाने के लिये आन्दोलन भी नहीं कर सकते।

बागों के मजदूरो का वास्तविक वेतन क्या है, यह जान सकना कठिन है। क्योंकि नकद मजदूरी के अतिरिक्त उन्हे बहुधा खेती के लिये थोडी सी भूमि का टुकड़ा मिलता है, जलाने के लिये लकड़ी मिलती है और पशुओं को चराने की सुविधा मिलती है। किन्तु यह सब बागों में एक समान नहीं होता। बहुत से मजदूरो को भूमि नहीं मिल पाती। जहां कहीं भूमि दी जाती है, वह दो बीघा से अधिक नहीं होती।

बहुत से बागो में मजदूर को 'सरदार' के द्वारा आरम्भ मे कुछ पेशगी रुपया दिया जाता है और जब वह बाग में आता है तो उसके वेतन में से क्रमशः वह रुपया काट लिया जाता है। यही नहीं, मजदूर प्रति सप्ताह अपने निर्वाह के लिए भी कुछ रुपया पेशगी लेता रहता है। फिर मजदूर सरदार अथवा मिस्त्री की देख रेख मे समूह (गैंग) में काम करते है और सरदारों को मजदूरा की मजदूरी पर एक आना से दो आने प्रति रुपया कमीशन मिलता है। आसाम मे सरदारों को मासिक वेतन दिया जाता है। इन सब कारणों से मजदूर की मजदूरी का हिसाब बहुधा ठीक नहीं हो पाता। सरदार क्लर्कों से मिल कर मजदूरों की मजदूरी खा जाता है।

सच तो यह है कि चाय के बागो के मजदूरों की दशा दयनीय है। उनकी मजदूरी बहुत कम है और जब कि जंगली जातियों के मजदूर वहां अधिक संख्या में काम करते हैं और उनमें कोई संगठन नहीं है, तब यह आवश्यक है कि वहां कानून द्वारा न्यूनतम मजदूरी निर्धारित करदी जावे।

खानों मे काम करने वाले मजदूरों की मजदूरी

भारतवर्ष मे लगभग २५०,००० मजदूर खानों में काम करते हैं, इनमें से अधिकांश कोयले की खानो में काम करते हैं। कोयले की

खानो में तथा अन्य खानो मे मजदूरी टब, कार, या ट्राली के आधार पर दी जाती है, अर्थात् खोदने वाले कोयला खोदते हैं और लादने वाले टबो में लाद देते है। जितने टब कोयला वे खोद कर लाद देते हैं, उसी हिसाब से मजदूरी दी जाती हे। कोयले की खानो मे लादने वाला उतना ही महत्वपूर्ण है, जितना कि कोयला खोदने वाला। क्योकि मजदूरी सबो को सामूहिक रूप से मिलती हे। दूसरे शब्दों मे एक टोली जितना कोयला काटती और लादती हे, उसके हिसाब से मजदूरी पूरी टोली को एक साथ दी जाती हे। पहले कोयले की खानो मे कोयला काटने वाले की पत्नी उसके साथ काम करती थी और वह खुदे हुए कोयले को टब मे भर देती थी। किन्तु जब से खानो मे स्त्रियो को काम करने की मनाई हो गई है, तब से कोयला खोदने वालो के साथ अकुशल मजदूर काम करते है, जो कोयले को टबो में भरते रहते हैं। कहीं-कही मजदूर एक सरदार की अध्यक्षता मे टोली (गैंग) मे काम करते है और वह सरदार ठेकेदार होता है। अर्थात् कोयले की खान उसे प्रति टन एक निश्चित रेट से कोयले को खोदने और लादने की मजदूरी देता है। वह ठेकेदार सरदार स्वयं अपने मजदूर रखता है और काम करवाता हे।

खानो मे काम करने वालो की मज़दूरी का ठीक-ठीक हिसाब लगाना बहुत कठिन है। कारण यह है कि टब या ट्राली सब एक साइज़ के नहीं होते। यही नहीं, एक टब मे कितना कोयला लादा जावेगा, यह भी निश्चित नहीं होता। फिर मज़दूर गैंग में काम करते हैं और यदि वे सरदार की अध्यक्षता में काम करते हैं तब तो उनकी मज़दूरी का हिसाब लगाना और भी कठिन होता है। रायल लेबर कमीशन ने आज से लगभग १८ वर्ष पूर्व कोयले की खानो में एक साइज के टबो की नितान्त आवश्यकता बतलाई थी, किन्तु अभी तक यह आवश्यक सुधार नहीं हो पाया हे।

अधिकांश कोयले की खानो मे ३० क्यूबिक फीट से ३६ क्यूबिक फीट तक के टब प्रचलित हैं। किन्तु इन टबो में कितना कोयला लादा

जावेगा, इसका भी कोई ठीक नहीं रहता । १० हंडरवेट से १६ हंडरवेट तक कोयला इन टबों मे लादा जाता है। इस भिन्नता के कारण मजदूरों को बहुत हानि होती है । बात यह है कि प्रत्येक कोयले की खान मे टब में कितना कोयला भरना चाहिए, यह निश्चित कर दिया गया है। यदि उससे कोयला कम भरा जाता है तो मजदूरी एक चौथियाई से आधी तक घटा दी जाती है। कुछ कोयले की खानों मे एक टन कोयले पर मजदूरों को एक टब कोयला मुफ्त भरना पड़ता है। सरदार उनको इसकी कोई मजदूरी नही देता । यह अतिरिक्त टब इस लिये भरवाया जाता है कि यदि कहीं निर्धारित राशि से कम कोयला भरा गया हो तो उस कमी को पूरा किया जा सके । निर्धारित राशि से कोयला कम न भरा जावे, इसके लिए अधिकारी मजदूरों को विवश करते है कि वे टबों मे उस निर्धारित राशि से अधिक कोयला भरें। इससे अधिकारियों को यह लाभ होता है कि जो कोयला निर्धारित राशि से अधिक भरा जाता है, उसकी मजदूरी मजदूरों को नही दी जाती, वरन् वह उच्च अधिकारियों और सुपरवाइजरों मे बांट दी जाती है। अथवा कम्पनी को उतना लाभ मिल जाता है। इस प्रकार हजारों मजदूरों की मजदूरी मारली जाती है और उनको अपने काम की पूरी मजदूरी नहीं मिलती।

पिछले दिनों कोयले की खानों की मजदूरी घट गई, इसके नीचे लिखे कारण हैं। १— नीची टब रेट। २—टबों की कमी और समय पर मजदूरों को भरने के लिए टबों का न मिलना। ३—मजदूरों का महीने मे कुछ दिनों काम पर न आना। ४— कोयले के धन्धे की अस्त-व्यस्त दशा।

टबों की कमी

साधारणतया एक खोदने वाला और एक भरने वाला तीन स्टैंडर्ड साइज़ (३० क्युबिक फिट) के टब एक दिन मे भर देता है। परन्तु टब न मिलने के कारण वे पूरी मजदूरी नहीं कमा सकते। क्योंकि यदि वे कोयला काट कर छोड दे और उन्हें टब न मिले तो दूसरे दिन दूसरी

टोली उनका कोयला चुरा ले सकती है। इस कारण मजदूरों की बहुत सी मजदूरी मारी जाती है। आवश्यकता इस बात की है कि कोलियरी में अधिक टब हो और उन टबो का पूरा-पूरा उपयोग हो। साथ ही कोयले की खानो मे सरदार, टब मेकर, और सुपरवाइजर चालाकी से मजदूर की मजदूरी खा जाते है। वह कठोरता पूर्वक रोक दिया जावे। मुन्शी लोग भी टबो के लिखाने मे चालाकी करते है। उसके लिए एक युक्ति यह की जा सकती है कि प्रत्येक मजदूर को जब वह खान मे घुसे, एक टिकिट दिया जावे जो कि कोयला भरते समय मजदूर टब मे रख दे। टिकिट पर मजदूर का नम्बर अंकित हो। इस प्रकार टब को उस नम्बर के मजदूर के हिसाब में लिखा जावेगा कि जिसका टिकिट उसमे है।

काम पर न आना

खानो में काम करने वाले मजदूरो की कम आमदनी होने का एक कारण यह भी है कि मजदूर पूरे दिन काम नहीं करते। बिहार और बगाल मे सदैव खानो में मजदूरो का टोटा रहता है, इस कारण मजदूर अधिक मजदूरी की खोज मे खान से दूसरी खान को चले जाते है। मजदूरों के काम पर न आने का दूसरा कारण यह है कि जो मजदूर समीपवर्ती गावों मे रहते है और खेती करते हैं, वे फसल बोने के समय तथा फसल काटने के समय खानो का काम छोड कर चले जाते है, अर्थात् जुलाई अगस्त तथा नवम्बर में मजदूर खानो मे काम नही करते। सितम्बर और अक्टूम्बर तथा दिसम्बर से जून के मध्य तक मजदूर खानो में काम नियमित रूप से करते है। जब से खानो के अन्दर स्त्रियों को काम करने की मनाही करदी गई है, तब से मजदूर महीने मे एक सप्ताह के लगभग अपने गांवो में परिवार की देख भाल करने के लिऐ जाते है। एप्रिल और मई मे विवाहों के कारण मजदूर खानो में कम काम करते हैं। खान में काम करने वाले मजदूर सप्ताह में

चार दिन कार्य करते है। बिहार लेबर कमेटी के अनुसार खानों में मजदूरों की उपस्थिति इस प्रकार थी।

सप्ताह मे उपस्थित

दिनों की सख्या	मजदूरों की प्रतिशत (उपस्थिति)
६	१०%
५	४५%
४	२५%
४ से कम	२०%

मजदूरों की अनुपस्थिति के मुख्य कारण यह है। १. कठिन परिश्रम के उपरान्त विश्राम की आवश्यकता २. शराब और जुए का अत्यधिक व्यसन ३. स्वास्थ्यप्रद मनोरंजन के साधनों का अभाव। जिन कोयले की खानों ने मजदूरों को रहने और उनके मनोरंजन इत्यादि की अच्छी सुविधा प्रदान की है, वहां अनुपस्थिति बहुत कम है। अस्तु इस परिस्थिति मे सुधार करने के लिए अच्छे मकान, अधिक मजदूरी, काम करने की अच्छी व्यवस्था, अच्छे मनोरंजन के साधन और ऊंचे दर्जे का सामाजिक जीवन आवश्यक है।

आवश्यकता इस बात की है कि कोयले के धंधे मे भी न्यूनतम मजदूरी निर्धारित कर दी जावे, जिसके नीचे कोई व्यक्ति मजदूरी न पावे।

सूती वस्त्र व्यवसाय मे मजदूरी

यद्यपि सूती वस्त्र-व्यवसाय भारत का सबसे पुराना संगठित धंधा है, किन्तु सूती वस्त्र के कारखानों मे मजदूरों की दशा अत्यन्त शोचनीय है। यही नहीं कि भिन्न-भिन्न केन्द्रों मे मजदूरी की दर बहुत भिन्न है, वरन् एक केन्द्र मे ही भिन्न-भिन्न कारखानों की दर भिन्न है। वस्तुतः मदरास, बंगाल और मध्यप्रान्त में सूती मिलों के

करने वाले मजदूरो की जांच कमेटी-१९४० ने बम्बई प्रान्त में भिन्न-भिन्न केन्द्रो के लिए सूती वस्त्र के कारखानो में न्यूनतम मजदूरी निर्धारित करने की सिफारिश की थी।

जूट मिलो में मजदूरी

जूट का धधा भी देश का एक महत्व-पूर्ण और प्रमुख धन्धा है, जिसमें लगभग २५०,००० मजदूर काम करते है। जूट के धन्धे को १९३९ के महायुद्ध के पूर्व घोर मन्दी का सामना करना पडा था। किन्तु धंधे का नवीन संगठन न करके जूट मिल मालिकों ने मजदूरो के रहन-सहन के दर्जे को नीचा करके मन्दी का सामना किया। जूट मिले सप्ताह में पांच दिन या चार दिन ही काम करती थी। प्रत्येक मिल अपने दस प्रतिशत करघे काम मे नही लाती थी। ऊपर से मजदूरी की दरे भी कम कर दी गई थीं। इस प्रकार जूट के कारखानो में काम करने वालों की आमदनी बहुत कम हो गई थी। इसी का परिणाम था कि जूट के धंधे मे १९२९ और १९३७ मे आम हडताले हुई। उस समय मजदूरो ने ३०रु. मासिक न्यूनतम मजदूरी, मुफ्त रहने की सुविधा, बेकारी अलाऊस, नि शुल्क शिक्षा और सम्बन्धियों को नौकरी मिलने की मांग की थी।

युद्ध आरम्भ होने पर काम के घन्टे बढा कर ६० कर दिये गए और जो करघे बन्द कर दिये गए थे, वे भी चला दिये गए। किन्तु शीघ्र ही जूट की मांग न होने पर फिर काम के घन्टे ५४ कर दिये गए और दस प्रतिशत करघे बन्द कर दिये गए। १९४३ में जाकर कहीं फिर १० प्रतिशत बन्द करघे चलाये गए। अस्तु, हम देखते है कि जूट मिल मे मजदूरों की स्थिति अच्छी नहीं। जूट की मांग की स्थिरता न होने के कारण जूट के कारखानो मे मजदूरो की मांग घटती-बढती रहती है। इस पर भी जूट के कारखानों मे मजदूरी बहुत कम है। रायल लेबर कमीशन ने जब भारतीय मजदूरो की दशा की जाच की थी, उस समय जो मज़दूरी वहां दी जाती थी, लगभग वही मजदूरी वहां मजदूरो को दी जाती है।

से इस धंधे में काम करने वालों की मजदूरी सूती वस्त्र व्यवसाय में दी जाने वाली मज़दूरी से भी कम है। नीचे दी हुई तालिका से यह स्पष्ट हो जावेगा।

देश	१ लोहे के धन्धे मे प्रति घंटा मजदूरी की दर	२ वस्त्र व्यवसाय मे प्रति घंटा मजदूरी की दर	३ (१) और (२) का अनुपात
भारत...	रु. ०'१५०	रु. ०'१५२	०'९८७
ब्रिटेन...	१' ३७ शि.	०'७० शि.	१'९६
संयुक्त राज्य .. अमेरिका. .	०'८२६ डौलर	०'४१२ डौलर	२ ०
जापान ..	०'४०४ यन	०'१७१ यन	२'३६

इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि जहाँ अन्य देशो मे इस धंधे में मजदूरी अन्य धधो की अपेक्षा लगभग दुगनी है, वहाँ भारतवर्ष मे कुछ कम ही है। यह ऐसी स्थिति है जो कि नितान्त असहनीय है। बिहार लेबर इनक्वायरी कमेटी ने जमशेदपुर के ताता के इस्पात के कारखाने के मजदूरो की दशा की जाँच की थी। कमेटी का कथन था कि ताता के कारखाने में २८६७४ मजदूर काम करते थे, उनमे ७२६५ मजदूर ऐसे थे, जिनकी मजदूरी महीने में १५ से कम थी। ५१२२ मज़दूर ऐसे थे जिनकी मजदूरी १५ से २० रु. मासिक थी। कमेटी ने हिसाब लगा कर देखा था कि उस समय जमशेदपुर में २० रु. मासिक से कम में एक मजदूर अकेला अपना जीवन निर्वाह नहीं कर सकता था। वह २० रु. मासिक मे आराम से रह सकता हो, ऐसी बात नहीं थी। वह केवल भोजन तथा अन्य अत्यंत आवश्यक वस्तुओं को पा सकता था। ऊपर के विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि लोहे के धन्धे मे कितनी मजदूरी कम है। दूसरे शब्दो मे ताता कम्पनी के १२,००० मजदूरों को जीवन-निर्वाह योग्य मजदूरी नहीं मिलती थी।

पिछले वर्षों मे ताता के लोहे के कारखाने मे(Rationalisation) किया गया। मजदूरों की संख्या कुछ कम हो गई। फिर भी उत्पत्ति क्रमशः १९२३ में २,५०,००० टन से १९३९ मे ७२१,००० टन हो गई और पिछले दिनों तो इस कारखाने मे मानों सोना बरसा है। लाभ की कुछ न पूछिये– ३० रु. का डिफर्ड शेयर लगभग ३ हजार रुपये में बिकता है, परन्तु आधे मजदूरो को भरपेट भोजन भी नहीं मिलता। यदि इसको शोषण न कहा जावे तो क्या कहा जावे ? कोई भी सभ्य देश इस प्रकार के शोषण को एक क्षण के लिए भी सहन नही कर सकता।

जिस कारखाने ने १९३७-३८ मे रु. २,३८,८०,००० मुनाफे मे अपने हिस्सेदारों को बांट दिये, जो प्रतिवर्ष प्रतिशत लाभ अपने हिस्सेदारों को बाटता है, उसके आधे मज़दूर आधा पेट भोजन करें— यह अत्यन्त लज्जा की बात है। फिर इस धधे को पिछले २५ वर्षों से संरक्षण मिला हुआ है। सरकार ने बाहर से आने वाले लोहे पर भारी कर बिठा कर खरीददारों को इस्पात का ऊंचा मूल्य देने पर विवश किया है। आवश्यकता तो इस बात की है कि हिस्सेदारों को उचित लाभ बांट देने के उपरान्त जो भी बचे, वह लाभ मजदूरों में बांट दिया जावे।

ऊपर हमने भारत के प्रमुख धंधों मे मजदूरो की क्या स्थिति है, उसका विवेचन किया। जो मौसमी कारखाने है,उदाहरण के लिये शक्कर कपास के पेच, जूट के पेच, चावल साफ करने के कारखाने, बीडी के कारख़ाने इत्यदि इनकी दशा तो और भी शोचनीय है। क्योंकि यह कारख़ाने औद्योगिक केन्द्रों में न होकर, कच्चा माल जहां पैदा होता है, वहां होते है। खेती मे काम करने वाले मजदूर तथा चाय के शहरों मे रहने वाले मजादूर इन कारख़ानों मे काम करते है। इनका कोई संगठन नही है। मालिक जो भी मजदूरी दे दे, वही गनीमत है। इन कारखानों में मजदूरो का जैसा शोषण हो रहा है, वैसा सम्भवत कहीं भी देखने को नही मिलेगा। भविष्य मे भी इन मौसमी कारखानों के

मजदूरो का कोई सबल सगठन हो सकेगा, इसमे बहुत संदेह है। इनके शोषण का अन्त तो न्यूनतम मजदूरी कानून बना कर कम से कम मिल मालिक को प्रत्येक मजदूर को कितनी मजदूरी देनी होगी, यह निश्चित कर देने से ही हो सकता है। लेखक का मत है कि इन कारखानो मे तो सरकार को तुरन्त ही एक आज्ञा निकाल कर न्यूनतम मजदूरी निर्धारित कर देनी चाहिए। भारतवर्ष मे यों ही मजदूरी बहुत कम है और जिन धंधो में मजदर सगठित नहीं है, वहा की दशा तो अत्यन्त शोचनीय है।

भारतीय मजदूरो के रहन सहन का दर्जा

ऊपर दिये हुए विवरण से यह तो स्पष्ट हो ही गया होगा कि भारत मे मजदूरी बहुत कम है और उसको ऊंचा उठाने के लिए न्यूनतम मजदूरी कानून बनाने की नितान्त आवश्यकता है। मजदूरों की संख्या अधिक होने से और उनकी मांग कम होने से यदि मजदूर काम पाने के लिए बहुत कम वेतन पर कार्य करना स्वीकार कर लेते है तब क्या मालिक को उनकी इस दयनीय स्थिति का लाभ उठाने देना न्याय है। जिस मजदूरी से मजदूर को भर पेट भोजन भी प्राप्त नही होता वह आधे पेट रह कर अपने हाड मांस को कारखानों मे सुखाता हैं उस मज़दूरी को देना देश में जुर्म बना देना चाहिए। परन्तु न्यूनतम मज़दूरी के प्रश्न को लेने से पहले हमे भारतीय मजदूर के रहन सहन के बारे मे जान लेना आवश्यक है, क्योकि न्यूनतम मजदूरी का इससे घनिष्ट सम्बन्ध है।

सच तो यह है कि भारतीय मजदूर के रहन सहन का दर्जा बहुत गिरा हुआ है। इसका परिणाम यह होता है कि उसका स्वास्थ शीघ्र नष्ट हो जाता है और उसकी कार्यक्षमता घट जाती है। किन्तु भारतीय मिल मालिको का यह विश्वास है कि यदि भारतीय मजदूर की मजदूरी बढा दी जावे तो वह उसका उपयोग अपने रहन सहन के दर्जे को ऊंचा-

उठाने मे नही करते । मिल मालिकों का यह विश्वास है कि भारतीय मजदूर का रहन सहन का दर्जा निश्चित है, उसमे परिवर्तन नही होता । यदि उनकी मज़दूरी बढा दी जावेगी तो या तो मजदूर महीने में अधिक दिन गैर हाज़िर रहने लगेंगे अथवा बढी हुई आमदनी को शराब तथा अन्य बेकार की बातों पर व्यर्थ मे व्यय कर देंगे । अस्तु मिल मालिकों की यह निश्चित धारणा है कि मज़दूरी बढाने से मजदूरो को कोई लाभ नहीं होगा । हां, कारखाने की उत्पत्ति मे कमी अवश्य हो जावेगी ।

यह तर्क बहुत ही गलत है । कतिपय अत्यन्त पिछडी हुई जातियों मे यह देखने मे आता है कि वे अपनी बढी हुई आमदनी को शराब पर व्यय कर देते है अथवा काम पर नहीं आते । किन्तु उसका यह कारण कदापि नही है कि उनमें अपने जीवन को अधिक सुखी और सम्पन्न बनाने की भावना काम नही करती । उसका कारण यह है कि उनका न केवल आर्थिक शोषण ही हुआ है वरन उनका सामाजिक शोषण इतना अधिक हुआ है कि वे यह कल्पना ही नहीं करते कि उनकी स्थिति में सुधार भी हो सकता है । अस्तु उनको अधिक मज़दूरी देकर उसको किस प्रकार व्यय करना चाहिए यह भी बतलाना आवश्यक है ।

के अन्य औद्योगिक केन्द्रो की अपेक्षा मजदूरो की आय अधिक है उनके बजट मे मनोरंजन और शिक्षा सम्बन्धी काम बढ़ता पाया गया है। यह इस बात का प्रमाण है कि उनके रहन सहन का दर्जा ऊंचा उठ रहा है। विदेशी व्यवसायियो का यह अनुभव रहा है कि ऊंची मजदूरी देना मालिक के लिए सस्ता और लाभदायक है। क्योकि ऊंची मज़दूरी पाने से मजदूर का रहन सहन का दर्जा ऊंचा उठता है और उसकी कार्य शक्ति बढती है जिससे मालिक को लाभ होता है। यही कारण है कि विदेशो मे मिल मालिक अधिक मजदूरी देने मे विश्वास करते हैं परन्तु भारतीय व्यवसायी कम मजदूरी देने मे ही अपना लाभ देखते हैं। कुछ भारतीय व्यवसायियो का भी मत अब बदल रहा है, उन्होने मजदूरी बढ़ा कर देखा कि उससे कारखाने मे उत्पादन अधिक हुआ और उनको अधिक लाभ हुआ। फिर भी भारत मे यह कहावत पूर्ण तरह से सत्य है कि "सस्ता मजदूर सबसे अधिक महंगा होता है।"

भारतीय मजदूरो के परिवारो के बजट का अध्ययन करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि उनकी आय का ५० प्रतिशत से अधिक केवल भोजन पर ही व्यय हो जाता है फिर भी जितनी केलौरी उसको मिलना चाहिए वह उसको नहीं मिल पाता और उसका स्वास्थ्य क्रमशः क्षीण हो जाता है। विशेषज्ञो का कथन है कि प्रति दिन एक मज़दूर को कम से कम ३००० कैलौरी मिलनी चाहिए परन्तु उन मज़दूरों को छोड कर कि जिनकी आमदनी बहुत अधिक है अधिकाश भारतीय मजदूरो को इतनी कैलौरी प्राप्त नही होती। इसका अर्थ यह हुआ कि मजदूरो के स्वास्थ्य को बनाये रखने के लिए जितनी कैलौरी की कम से कम आवश्यकता होती है उतनी कैलौरी भारतीय मजदूर को प्राप्त नही होती। यद्यपि वह अपनी आधी से अधिक मजदूरी केवल भोजन पर ही व्यय कर देता है।

भारतीय मज़दूर के पास बहुत कम वस्त्र होता है। यो तो गरम देश होने के कारण वस्त्रों की कमी मज़दूर की कार्यक्षमता को हानि नहीं

पहुंचाती परन्तु जाड़ों के दिनों में उत्तर भारत में शीत अधिक पड़ता है उस समय अवश्य वस्त्रों की कमी से मजदूर को कष्ट होता है। निर्धनता के कारण अधिकांश मजदूर जूते नहीं पहिन पाते इसका परिणाम यह होता है कि उन्हें हुकवर्म रोग हो जाता है और पैर की गाइयां तथा तलवे की खाल फट जाती है। हां, जिन मजदूरों की आमदनी अधिक है उनका वस्त्र तथा जूतों पर अधिक व्यय होता है क्योंकि उन्हें अपनी प्रतिष्ठा का ध्यान रखना पड़ता है।

फुटकर व्यय (स्वास्थ्य, शिक्षा और मनोरंजन पर)

भारतीय मजदूरों के बारे में ऐंजिल का नियम पूरी तरह से लागू होता है। यदि हम भारतीय मजदूरों के पारिवारिक बजटों का अध्ययन करें तो हमें ज्ञात होगा कि फुटकर व्यय का अनुपात आमदनी के अधिक होने से बढ़ता है। ऊंचे दर्जे के रहन सहन का सब से प्रबल प्रमाण यह है कि स्वास्थ्य शिक्षा और मनोरंजन पर अधिक व्यय किया जावे। यह संतोष की बात है कि भारतीय मजदूर शिक्षा पर कुछ व्यय करने का प्रयत्न करने लगा है। भारत में धार्मिक तथा सामाजिक समारोहों पर कभी-कभी निर्धन मजदूर को बहुत अधिक व्यय करना पड़ता है। जहां तक यह समारोह उसके नीरस जीवन में परिवर्तन और मनोरंजन के क्षण उत्पन्न करते हैं वहां तक इनका उपयोग है, परन्तु वह कभी-कभी अपनी शक्ति के बाहर इन समारोहों पर व्यय करता है और उसके कारण उसकी आर्थिक स्थिति खराब हो जाती है। परन्तु इससे भी अधिक हानिकर व्यय भारतीय मजदूर नशीली वस्तुओं और विशेष कर शराब और ताड़ी पर करता है।

आसाम के चाय के बागों का मजदूर अपनी आमदनी का १२·८ प्रतिशत, जूट मिलों का मजदूर अपनी आय का ११·६ प्रतिशत शराब पर व्यय करता है। बम्बई लेबर आफिस ने इस सम्बन्ध में वहां पर जांच कराई थी। इस जांच का परिणाम यह निकला कि बम्बई का

मजदूर अपनी कुल आमदनी का ८ से १० प्रतिशत शराब पर व्यय करता है। उस जाच से यह भी पता चला है कि वहा ७२ प्रतिशत मजदूर परिवार शराब पीते है। शोलापुर मे ४२ प्रतिशत और अहमदाबाद में ७७ प्रतिशत मजदूर परिवार शराब पीते है। बिहार की कोयले की खानो के मजदूरो में मद्यपान सबसे अधिक प्रचलित है। वहां ९० प्रतिशत मजदूर शराब पीते है और लगभग पचास प्रतिशत आय शराब पर व्यय कर देते है। वहा क्रमशः मजदूर स्त्रिया भी अधिकाधिक शराब पीने लगी है। १९३९ में बिहार की कांग्रेसी सरकार ने झरिया जिले तथा हजारीबाग और राची जिलो के कुछ भागो मे शराब बंदी करदी थी, परन्तु बाद को कांग्रेस मन्त्रिमडल के हट जाने पर नौकरशाही शासन मे फिर वहा शराब बिकने लगी। आवश्यकता इस बात की है कि शराब बदी के साथ-साथ वहा पर शराब के विरुद्ध प्रचार किया जाय और वहां चाय तथा दूध की खपत के लिये प्रोत्साहन दिया जावे। भिन्न-भिन्न औद्योगिक केन्द्रो मे जांच करने पर पता चला है कि सभी केन्द्रो में मद्यपान बढ रहा है। यह अत्यन्त अवाञ्छनीय स्थिति है। इसको जितना शीघ्र रोका जा सके, रोकना सरकार का कर्तव्य है। इसमें मिल-मालिको तथा ट्रेड यूनियनो का सहयोग अवश्य लेना चाहिए। मद्यपान के बढने से मजदूर की कार्यक्षमता घटती है और धंधे को हानि पहुचती है। यदि मिले मजदूरो को चाय अथवा दूध देने का प्रबंध कर सकें तो इससे शराब कम होगी, साथ ही मजदूर की कार्यक्षमता भी बढेगी। इस ओर सरकार, मिल-मालिको तथा मजदूर नेताओ सभी को शीघ्र ध्यान देना चाहिए। अभी तक इस महत्वपूर्ण समस्या की ओर लोगों का बहुत कम ध्यान गया है।

मद्यपान को केवल शराब बदी से समाप्त करना कठिन है। उस दशा मे गैर क़ानूनी ढंग से शराब खींची जाने लगती है। बात यह है कि मजदूर दिन भर अथक परिश्रम करने से अत्यधिक थक जाता है। उसका शरीर तो थका होता ही है, उसका मन भी थक जाता है। अस्तु, वह ताडी

या शराब की दूकान पर जाकर थोड़ी शराब पी लेता है और उससे स्फूर्ति का अनुभव करता है। उसके थके हुए शरीर और मन में उत्साह और स्फूर्ति उत्पन्न होती है। अस्तु, मजदूर को कुशल मजदूर बनाने के लिए स्वास्थ्यप्रद मनोरंजन के साधन उपलब्ध करना अत्यन्त आवश्यक है। सरकार को चाहिए कि जहां मजदूर अधिक संख्या में रहते हों, वहां कठोरता के साथ शराब बंदी कर दे और मिल मालिकों का तथा मजदूर सभाओं का यह कर्तव्य है कि उनको शराब की बुराइयां बता कर चाय अथवा दूध पीने के लिए प्रोत्साहित करें। मालिक कुछ व्यय करके मजदूरों को चाय और दूध पिलावें। इसके साथ ही मनोरंजन के साधन भी मिल-मालिकों तथा मजदूर सभाओं को उपलब्ध करना चाहिए। फुटबाल, और भारतीय खेल का प्रचार करना और उनके लिए सुविधा प्रदान करना मिल-मालिकों का कर्त्तव्य होना चाहिए। मजदूरों की चालों में रेडियो की व्यवस्था करना और ड्रामा, भजन-मंडली, कथा तथा सिनेमा का भी प्रबन्ध होना चाहिए। इससे यह लाभ होगा कि थका हुआ मजदूर शराब की भट्टी पर स्फूर्ति की खोज में नहीं जावेगा और वह अधिक कार्यशील बनेगा।

सच तो यह है कि भारतीय मजदूर के लिए मद्यपान एक ऐसा भयंकर रोग है, जो उसकी कार्यशीलता को तो नष्ट करता ही है, साथ ही उसको निर्धन और ऋणी भी बनाता है। अतएव इस समस्या की ओर शीघ्र ध्यान देना चाहिए।

मजदूर का ऋण

भारतवर्ष के कारखानों में जो मजदूर काम करते हैं, उनकी आर्थिक स्थिति बहुत अच्छी हो, ऐसी बात नहीं है। यद्यपि उनकी आर्थिक स्थिति के बारे में कोई प्रमाणिक आंकड़े प्राप्त नहीं है, परन्तु जो कुछ हमें ज्ञात है उससे इतना तो स्पष्ट ही है कि उनमें से बहुत संख्या में मजदूर कर्जदार हैं। मजदूर के ऋणी होने के बहुत से कारण है। मजदूर के

ऋणी होने का पहला कारण तो यह है कि जब किसान अथवा ग्रामीण गांव मे रह कर अपना निर्वाह नहीं कर पाता तो वह उस औद्योगिक केन्द्र की ओर भागता है, जहा उसके गांव के लोग काम करते हैं। जब वह गाव छोड कर औद्योगिक केन्द्र को जाता है, तब उसके पास किराये के अतिरिक्त कुछ नही होता। यह किराया भी वह महाजन से उधार लेकर, अपनी कोई वस्तु बेच कर या गिरवो रख कर अथवा अपने किसी सम्बन्धी से रुपया उधार लेकर जुटाता है। अतएव जब वह गांव छोडता है, तभी से कर्जदारी आरम्भ हो जाती है। औद्योगिक केन्द्रों में जा कर उसे तुरन्त ही किसी कारखाने मे काम मिल जावे ऐसा नहीं होता। वह अपने गांव वालो के पास जाकर ठहरता है और महीने पन्द्रह दिन और कभी-कभी इससे भी अधिक की दौड-धूप के बाद किसी सरदार को अच्छी रकम देकर नौकरी ठीक की जाती है। इतने दिनो औद्योगिक केन्द्र मे रहने और सरदार अथवा जाबर को जो रिश्वत देनी होती है, उसके लिए भी कर्ज लेना पडता है। नौकरी लग जाने पर भी मजदूर को पहली तनखाह लगभग सवा महीने बाद मिलती है। किंतु नौकरी लग जाने के बाद उसकी साख कुछ बढ जाती है। जिस चाल या बस्ती मे वह रहता है, उस बस्ती को सौदा बेचने वाला बनिया या दूकानदार उसे महीने भर सौदा उधार देता रहता है। अधिकतर तो ऐसा होता है कि मजदूर दूकानदार का क्रीत दास हो जाता है। बहुत से स्थानो पर तो दूकानदार मजदूर का बैंक होता है। मजदूर जो कुछ भी वेतन लाता है, वह दूकानदार को दे देता है और वह दूकानदार से चीजें लेता रहता है। जब उसे किसी विशेष कार्य के लिए अधिक रुपये की आवश्यकता होती है तो वह दूकानदार से उधार भी ले लेता है। इस प्रकार दूकानदार मजदूर का स्वामी बन जाता है और मजदूर उसका ऋणी बन जाता है। जहा जाबर या मिल का फोरमैन या चार्जमैन लेन-देन करता है, वहा मजदूरो की आर्थिक स्थिति और भी दयनीय होती है। क्योंकि वह मनमाना सूद वसूल करते है और उनका रुपया मारा

जाने का कोई भय नहीं होता। अस्तु, ऋणी होने का पहला कारण तो यह है कि मजदूर के पास नौकरी मिलने तक निर्वाह और आवश्यक व्यय करने के लिए रुपया ही नहीं होता।

ऋणी होने का दूसरा कारण वेतन की कमी और निर्वाह के लिए खर्चे की अधिकता है। आज जब कि सब चीजों का मूल्य बढ़ गया है, मजदूर का खर्चा भी बेहद बढ़ गया है। किन्तु मजदूरी उसी अनुपात में नहीं बढ़ी है। इसका परिणाम यह होता है कि मजदूर को ऋण लेकर काम चलाना पड़ता है।

किन्तु एक अत्यन्त महत्वपूर्ण कारण उसके ऋणी होने का उसकी फिजूलखर्ची भी है। वह सामाजिक कृत्यों तथा उत्सवों पर आवश्यकता से अधिक व्यय करता है। बम्बई में इस सम्बन्ध में कुछ जांच की गई तो पता चला कि एक मजदूर विवाह में, २५० रु. के लगभग युद्ध के पूर्व व्यय करता था। बहुत से मजदूर परिवारों की तो यह एक वर्ष की कमाई थी। मद्रास में विवाहों के कारण मजदूर को जो ऋण लेना पड़ा, उसका अनुपात कुल ऋण की तुलना में ४६ प्रतिशत है, कानपुर में ३६ प्रतिशत, जमशेदपुर में ३१ प्रतिशत और बिहार की कोयले की खानों में ३८ प्रतिशत है। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि मजदूर सामाजिक कृत्यों पर अत्यधिक व्यय करता है।

मजदूर की बेकारी भी उसको ऋणी बनाने का एक प्रमुख कारण है। जिन दिनों वह बेकार रहता है, उसे कोई काम नहीं मिलता। वह अपने महाजनों की दया पर ही निर्भर रहता है। वे भी इस आशा में कि नौकरी लग जाने पर इस आसामी से खूब लाभ कमाया जा सकेगा, उसको ऋण देते रहते है। १९३० में बम्बई के मजदूरों का ४८ प्रतिशत ऋण बेकारी के कारण था।

शराब भी मजदूर के ऋणी होने का एक मुख्य कारण है।

अतएव मजदूर के ऋण को दूर करने के लिए इस बात की आवश्यकता है कि मिलों में जो भर्ती करते समय रिश्वत लेने की परिपाटी

चल पड़ी है, वह कठोरतापूर्वक बन्द कर दी जावे। ऐसा प्रबन्ध किया जावे कि आवश्यकता से अधिक मजदूर औद्योगिक केन्द्रों में न आवें और कानून बनाकर मृत्यु, विवाह और जन्म इत्यादि सामाजिक कृत्यों पर व्यय को नियंत्रित कर दिया जावे, जिससे कि सामाजिक कृत्यों पर मज़दूर अंधाधुंध व्यय न कर सकें। साथ ही मजदूरों के क्षेत्र में शराब-बन्दी कर दी जावे। उनमें चाय और दूध पीने की प्रथा चलाई जावे और शराब के विरुद्ध प्रचार किया जावे।

१९३७ में बिहार लेबर इनक्वायरी कमेटी ने बिहार के मजदूरों के सम्बन्ध में जांच की थी, उसका परिणाम इस प्रकार था:—

बिहार के कोयले की खानों के मजदूरों का ऋण

आय समूह.	प्रतिशत ऋणी परिवार	ऋणी परिवार का औसत ऋण. रु आ. पा.
५ रु. से नीचे	२८%	१६— ०—६
५ से १० रु. तक	५०%	१६—१३—३
१० से १५ रु. तक	५०%	३४— ४—३
१५ से २० रु. तक	४७%	२८— २—७
२० से ३० रु. तक	३३%	३७—११—५
३० से ४० रु तक	३७%	४३— ८—४
४० से ५० रु. तक	३१%	१५५—१२—४
५० रु. से ऊपर	—	—

जमशेदपुर के कारखाने के मजदूरों का ऋण

आय समूह.	प्रतिशत ऋणी परिवार	ऋणी परिवार का औसत ऋण. रु. आ पा.
५ रु से नीचे	—	
५ रु. से १० रु तक	३५ ७%	७३—१२—१०
१० रु. से १५ रु. तक	६३·६%	५३—१४— ५
१५ रु. से २० रु. तक	६१·३%	७१— १— ७

२० रु. से ३० रु. तक	७१·१%	१०५—१२—१०
३० रु. से ४० रु. तक	७६·८%	१८७— ६— ५
४० रु. से ५० रु. तक	८२·९%	२६१— ९— ७
५० रु. से ऊपर	७९·६%	२०८— ८— ०

ऊपर दी हुई तालिकाओं से यह स्पष्ट हो जाता है कि मज़दूरों का बहुत बड़ा प्रतिशत ऋणी है। यद्यपि अन्य केन्द्रों के सम्बन्ध में इस प्रकार के आंकड़े हमें प्राप्त नहीं हैं, परन्तु वहां की भी दशा इससे भिन्न नहीं होगी।

किसी-किसी केन्द्र में मिलों ने अपने मजदूरों को ऋण देने, उनमें मितव्ययिता की भावना जागृत करने के लिए मजदूरों के लिए सहकारी साख समितियां स्थापित की है। यह समितियां उचित सूद पर ऋण देती है और अनावश्यक ऋण को रोकती है। यही नहीं, मजदूरों में यह समितियां मितव्ययिता की भावना जागृत करती है। किन्तु अभी तक कुछ ही मिलों ने इस ओर ध्यान दिया है। बर्ड और हिल्जर कम्पनी की मैनेजिंग एजेंसी से जो जूट के कारखाने है, उनके लिए एक बैंक खोल रक्खा है, जो दो महीने की तनख्वाह तक १२½ प्रतिशत सूद पर ऋण देता है। कुछ मिलें अपनी दूकानें भी खोलती है; जहां से मजदूरों को सस्ते मूल्य पर वस्तुएँ मिलती है। किन्तु अधिकांश मज़दूर बनिये के कर्जदार होते है और वह बनिया उन्हें सौदा उधार देता है। इस लिए मजदूर इन दूकानों का लाभ नहीं उठा पाते।

अनुसंधान से पता लगा है कि अधिकांश मज़दूर इन दुकानदारों के ही ऋणी होते हैं। यह दुकानदार आटा-दाल इत्यादि सभी आवश्यक वस्तुएं मजदूर को उधार देते है। इन बिहार की कोयले की खानों का मजदूर अधिकतर इनका ऋणी होता है और उसको ३७·५ प्रतिशत सूद देना पड़ता है। ये दुकानदार मजदूर की दयनीय दशा का खूब लाभ उठाते है। मनमाने ऊंचे दाम लेना तो साधारण सी बात है। हिसाब नकली बनाना और रकम को बढ़ा कर दिखाना साधारण सी बात है।

बहुत-सी मिलो ने सहकारी उपभोक्ता स्टोर खोल रक्खे है, जहां से मज़-दूर अपनी आवश्यकताओ की वस्तु सस्ते दामों पर ले सकते है। परन्तु मजदूर इन दूकानदारों से ही चीजें मोल लेना पसंद करता है, क्योंकि वह उधार दे देता है। इस प्रकार ये दूकानदार सहकारी स्टोरों की प्रतिद्वन्दिता मे सफल हो जाते है।

दूकानदार से भी अधिक भयंकर महाजन काबुली पठान है जो कि १५० से ३०० प्रतिशत तक सूद लेता है और अपने रुपये की वसूली के लिए बलप्रयोग और लाठी को काम मे लाता है। कारखानो के फाटको के पास और चाय के बागो के निकट तनखाह के दिन वह लाठी लेकर घूमता है और अपने आसामी को पकड कर उसकी तनख़ाह छीन लेता है। काबुली जिस प्रकार मजदूरो का शोषण करता है वह किसी से छिपा नही है परन्तु प्रान्तीय सरकारो ने मजदूर की रक्षा के लिए कोई कानून नही बनाया। मध्यप्रान्तीय सरकार ने १९३७ में जो ऋणी रक्षा कानून बनाया था वैसा कानून प्रत्येक प्रान्त में बन जाना चाहिए। उस कानून के अनुसार कर्जदार को मारना-धमकाना, कर्जदार का पीछा करना, अथवा उसके रहने के स्थान पर धरना देना या घूमना जुर्म बना दिया गया है। और इस कानून की अवहेलना करने वालों को ३ मास की सजा या ५०० रु. जुर्माने का दंड दिया जा सकता है। बम्बई इत्यादि अन्य प्रान्तो मे यह कानून तो बना दिया गया है कि वेतन मिलने वाले दिन कोई व्यक्ति यदि कारखाने के आस पास घूमता नजर आवेगा तो उसका चालान किया जा सकता है। किन्तु इस प्रकार के कानून से ही कुछ नही होगा। मध्य-प्रान्त के कानून के अनुसार एक कानून बनना आवश्यक है। देश मे जो भी ऋण अदायगी सम्बन्धी कानून बने है वे किसानो के लिए ही बने है। उनका लाभ कारखानो के मजदूरो को नही मिलता। आवश्यकता इस बात की है कि इस प्रकार के कानून कारखानों के मज़दूरो के लिए भी बनाये जावे। होना यह चाहिए कि मजदूरों के कर्जे की जांच की जावे और कीमतों के

अत्याधिक बढ़ जाने से जो उन पर कर्ज़े का भार बढ़ गया है उसको कम करने के लिए कानून बना कर कर्ज़े की रकम को कम से कम आधा कर दिया जावे और फिर उस बचे हुए ऋण को सहकारी साख समितियां महाजनों को चुका कर मजदूर को ऋण मुक्त कर दे। सरकार और मिल मालिक इन समितियों को पूंजी उधार दे दे और समितियां मज़दूरों से किश्तों मे रुपया वसूल कर ले। तभी मजदूर इस भयंकर शोषण से बच सकता है।

इस शोषण के कारण मज़दूर की कार्यक्षमता नष्ट होती है और वह मनोरंजन तथा अन्य हितकर कार्यों का लाभ भी नहीं उठा पाता। आवश्यकता इस बात की है कि प्रान्तीय सरकारें लेबर विभाग के द्वारा मज़दूरों के ऋण की जांच करवा कर यह मालूम कर ले कि उनका ऋण कितना है। कानून बना कर ऋण को कम से कम आधा कर दिया जावे। प्रत्येक ऋणी मजदूर को साख समिति का सदस्य बना दिया जावे और सरकार तथा मिल मालिक उस रकम को समिति को ३ प्रतिशत सूद पर दे दें। समिति मज़दूर के लेनदारों को कम की हुई रकम चुका दे और मजदूर की आर्थिक स्थिति को ध्यान में रख कर उस पर मासिक किश्त बांध दे। समिति की किश्त मिल मालिक वेतन में से काट कर समिति को दे दे। समिति मजदूर से ४ या ५ प्रतिशत सूद ले। इस प्रकार मजदूरों को ऋण मुक्त किया जा सकता है।

केवल एक बार मजदूरों के ऋण को अदा कर देने से उनकी स्थिति मे सुधार नहीं हो जावेगा। उनमे जो सामाजिक तथा धार्मिक कृत्यों पर अन्धाधुंध व्यय करने, शराब इत्यादि नशीली वस्तुओं पर धन फेंकने की प्रवृत्ति है, उसको रोकने के लिए उनमें मितव्ययिता की भावना जागृत करनी होगी, उनके विरुद्ध प्रचार करना होगा और फिर उनको कम से कम इतना वेतन दिलाने का प्रयत्न करना होगा कि जिससे वे अपने रहन सहन को सुधार सकें और मनुष्यों जैसा जीवन व्यतीत कर सकें। जब तक मजदूर इस प्रकार ऋण मुक्त नहीं किया जायेगा, तब

तक शिक्षा और अन्य हितकर कार्यों से उसकी स्थिति में सुधार होना सम्भव नहीं है। क्योंकि आज जो उसका महाजनों द्वारा अनवरत शोषण हो रहा है वह उसमें अपनी स्थिति को सुधारने की भावना ही जागृत होने नहीं देता। इसका परिणाम यह है कि उसमें कोई उत्साह नहीं रहता और उसकी कार्यक्षमता नष्ट हो जाती है। अतएव मजदूर की स्थिति को सुधारने के लिए उसको ऋण मुक्त करना आवश्यक है।

आठवां परिच्छेद

न्यूनतम मजदूरी (Minimum Wage)

मज़दूर और मिल-मालिकों के सम्बन्धों में न्यूनतम मजदूरी कानून द्वारा एक नवीन अध्याय जुड़ गया है। अभी तक यही माना जाता था कि मजदूर अपनी स्वेच्छा से मालिक से मजदूरी के सम्बन्ध में मोल भाव करता है और जिस मजदूरी पर वह काम करता है, उस पर उसे करने देना चाहिए। राज्य के इसमें हस्तक्षेप करने की कोई आवश्यकता नहीं है, क्योंकि मजदूर अपने हित को स्वयं देख सकता है। हां, विचारकों ने इस बात को अवश्य स्वीकार किया था कि मजदूर मालिकों से बहुत निर्बल है अतएव मोल-भाव ठीक ढंग से नहीं कर सकते। परन्तु मजदूरों का संगठन हो जाने पर उनकी यह निर्बलता भी कुछ सीमा तक दूर हो गई और अब वे सम्मिलित रूप से मोल-भाव करते हैं, और मालिक से उचित वेतन प्राप्त करने में कुछ हद तक सफल हो जाते हैं। यही कारण था कि मज़दूरों को अपना संगठन बनाने का अधिकार दिया गया। इतना होने से मजदूरों की दयनीय दशा में कुछ तो सुधार अवश्य हुआ। परन्तु मजदूर-संगठन से मजदूरों की सभी कठिनाइयां दूर नहीं हुई और न्यूनतम मजदूर कानून बनाने की आवश्यकता प्रतीत हुई। कारण यह है कि सभी देशों में ऐसे बहुत से धंधे हैं, जिनमें मजदूर संगठित नहीं हैं अथवा

कुछ विशेष परिस्थितियों के परिणाम-स्वरूप वहां मजदूरों का संगठन कठिन है। जिन धंधों मे मजदूरो के संगठन स्थापित हो गये है, वहां भी एक बहुत बड़ी संख्या मे मजदूर असंगठित ही है। यह तो ब्रिटेन, संयुक्त-राज्य अमेरिका, जर्मनी इत्यादि उन्नत राष्ट्रो की दशा है। पिछड़े हुए पूर्वी राष्ट्रो का तो कहना ही क्या है, वहां तो अभी मजदूरो के संगठन का श्रीगणेश ही हुआ है। अतएव उन लोगों का यह विचार गलत था कि केवल मजदूरो का संगठन उनके शोषण को रोकने के लिए पर्याप्त है और राज्य को उसमे हस्तक्षेप करने की आवश्यकता नहीं है। सच तो यह है कि न्यूनतम मजदूरी कानून बनाने से भी मजदूरों का शोषण नहीं रुकता, हाँ केवल इतना लाभ अवश्य हो जाता है कि मजदूरो की मजदूरी उससे कम नहीं की जा सकती।

कारखानो मे काम करने के घण्टे, न्यूनतम सुविधा तथा रक्षा का प्रबन्ध कानून बनाकर कर दिया गया है और सभी उन कानूनो से परिचित हो गए है। अस्तु, उनका अब कोई विरोध नहीं करता, किन्तु अभी तक न्यूनतम मजदूरी कानून का विरोध किया जाता है। विशेष कर भारत-वर्ष मे तो उसका मिल मालिकों की ओर से सतत विरोध होता रहा है। अस्तु, हम यहाँ सैद्धान्तिक रूप से इस प्रश्न पर विचार करेंगे।

क्या होगा। उसका स्वास्थ्य गिरेगा और देश मे रोग बढ़ेगे। अस्तु सरकार को स्वास्थ्य और चिकित्सा पर अधिक व्यय करना होगा। दूसरे शब्दो में जो व्यय धंधे को वहन करना चाहिए, वह मिल मालिक कर देने वालो पर डाल देता है। यदि सरकार उतना प्रबन्ध नहीं कर पाती तो मजदूर शीघ्र क्षीण होकर मर जाता है और अपने अशक्त जीवन के दिनो में राज्य अथवा समाज पर आर्थिक भार बनता है। राज्य को उसके लिए निर्धन गृह तथा अन्य संस्थाओ को चलाना पड़ता है। यही नहीं कि मिल मालिक इस प्रकार उचित व्यय को वहन नहीं करते, वरन उससे होने वाली राष्ट्रीय हानि की कोई कल्पना भी नहीं कर सकता।

हमे यह सिद्धान्त तो स्वीकार कर ही लेना होगा कि मज़दूर मनुष्य जैसा जीवन व्यतीत कर सके इतना वेतन देना मालिक के लिए अनिवार्य बना दिया जावे। कुछ लोग यह कहते हैं कि ऐसा करने से बहुत से धन्धे चल ही नही सकेंगे, उनमे लाभ कम होगा और फिर कोई भी व्यवसायी उनमें पूंजी न लगायेगा। पहले तो यह धोखा देने की बात है। फिर भी यदि यह तर्क के लिए मान भी लिया जावे कि कुछ धन्धे ऐसे हो सकते हैं कि जो उतना वेतन नही दे सकते तो उन धंधो को चलाने की कोई आवश्यकता नही है जिनमे काम करने से मनुष्य को पशुवत् जीवन व्यतीत करने पर विवश होना पड़े। और न यही उचित है कि लाभ तो मिले मिल मालिकों को और धन्धे का कुछ व्यय सरकार अपने ऊपर ले। अर्थात् दूसरे शब्दो में वह कर दाताओ पर पड़े। अतएव प्रत्येक व्यवसायी के लिए अनिवार्य कर देना चाहिए कि वह कम से कम इतनी मजदूरी दे कि मजदूर अपना जीवन-निर्वाह कर सके।

अब प्रश्न यह होता है कि न्यूनतम मजदूरी निर्धारित करने का आधार क्या होगा। क्या इतनी मजदूरी न्यूनतम-मज़दूरी निर्धारित कर दी जावे कि जो मनुष्य को जीवित रखने के लिए यथेष्ट हो अथवा इतनी मज़दूरी निर्धारित की जावे कि जिससे मज़दूर की क्षमता बढ़े और वह आवश्यक सुख-सुविधा प्राप्त कर सके। यहां यह भली भाँति समझ लेने

की बात है कि न्यूनतम मजदूरी कानून कोई ऐसा चमत्कार नहीं है कि उसके लगते ही मजदूर के जीवन मे काया-पलट हो जावेगी। यदि न्यूनतम मजदूरी इतनी कम निर्धारित की गई कि जिससे मजदूर केवल अपने प्राण को शरीर मे रखने में सफल हो सका तो उससे मजदूर की दशा में कोई परिवर्तन नही होने का जब तक मजदूरी का कानून उतनी मजदूरी निर्धारित नहीं कर देता कि जिससे मजदूर की कार्यक्षमता बढ सके और वह जीवन के लिये आवश्यक साधारण सुख सुविधायें प्राप्त कर सके, तब तक न्यूनतम मजदूरी निर्धारित करने से कोई लाभ नहीं। उदाहरण के लिए न्यूनतम मजदूरी इतनी होनी चाहिए कि मजदूर पौष्टिक भोजन कर सके, उसके रहने का मकान ऐसा हो जो स्वास्थ्य के लिए हानि पहुंचाने वाला न हो। उसको वस्त्र इत्यादि आवश्यक वस्तुओं को मिलने में कठिनाई न हो और शिक्षा, स्वास्थ्य, चिकित्सा, मनोरंजन के साधन उपलब्ध हों। अस्तु, प्रत्येक देश मे मजदूरों को इतना वेतन तो अवश्य ही मिलना चाहिए कि वह ऊपर की आवश्यक सुख-सुविधायें प्राप्त कर सके। अस्तु, कानून से न्यूनतम मजदूरी निर्धारित करते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि इससे कम वेतन निर्धारित न किया जाय, नही तो उससे कुछ भी लाभ न होगा।

न्यूनतम मजदूरी कानून का इतिहास

न्यूनतम मजदूरी कानून का जन्म-स्थान आस्ट्रेलिया है। यद्यपि आस्ट्रेलिया नया और एक अत्यन्त समृद्धिशाली देश है, परन्तु वहां भी मजदूरों का घोर शोषण होता था। कम वेतन, लंबे घंटे तथा गंदे स्थानों पर काम करने का वहां प्रचलन था। वहां के प्रमुख पत्र 'एज' ने इसके विरुद्ध तीव्र आन्दोलन किया और उसका फल यह हुआ कि १८८४ में वहां एक कमीशन बैठा। उस कमीशन ने अपनी रिपोर्ट में बतलाया कि मजदूरों से अत्यन्त लम्बे घंटे काम लिया जाता है और उनको बहुत कम वेतन दिया जाता है। इसका फल यह हुआ कि

देश में इसके विरुद्ध अत्यन्त क्षोभ उत्पन्न हुआ और कुछ समय उपरान्त वहां न्यूनतम मज़दूर कानून बना दिया गया।

१८६४ में न्यूज़ीलैंड में हड़तालों के लिये वांछित रूप से पंचायत कराने के सम्बंध में कानून बनाया गया। इस कानून का उद्देश्य हड़तालों को रोकना था। किन्तु उस कानून के अन्तर्गत जिला समझौता बोर्डों को यह अधिकार दे दिया गया कि वे उस जिले में न्यूनतम मजदूरी निर्धारित करदे। यदि किसी जिले के मज़दूर अपना वेतन बढ़वाना चाहे तो वे जिला समझौता बोर्ड को प्रार्थना-पत्र दे सकते हैं और बोर्ड उनका वेतन नियत कर देगा।

आस्ट्रेलिया में सर्व प्रथम विक्टोरिया में न्यूनतम मज़दूरी कानून १८६६ में पास हुआ था। उस समय कानून के विरोध करने वालों ने कहा था कि इसका परिणाम यह होगा कि सारा धंधा दूसरी रियासतों में चला जावेगा। केवल बहुत कुशल मज़दूरों को ही काम मिलेगा और सब बेकार हो जावेंगे। और इस प्रकार का कानून व्यवहार में लागू नहीं किया जा सकेगा। किन्तु फिर भी कानून पास हो गया और 'मज़दूरी बोर्ड' स्थापित हो गए। प्रारम्भ में केवल कुछ ही धंधों में मज़दूरी निर्धारित की गई थी, किन्तु अब सभी धंधों और पेशों में न्यूनतम मजदूरी निर्धारित कर दी गई है। १६०० और १६१० के बीच में आस्ट्रेलिया की अन्य रियासतों ने भी न्यूनतम मज़दूरी कानून पास कर दिये हैं और वहां भी सभी धंधों और पेशों में न्यूनतम मज़दूरी कानून प्रचलित कर दिये गए हैं।

ब्रिटेन में १६०६ में सर्व प्रथम विक्टोरिया के कानून के आधार पर पहली बार न्यूनतम मजदूरी क़ानून बनाया गया और वह भी केवल उन धंधों के लिए लगाया गया, जोकि असंगठित थे और जिन में मज़दूरी बहुत कम थी। किन्तु क्रमशः अन्य धंधों में भी जिन में मजदूरों का अत्यधिक शोषण होता था, न्यूनतम मजदूरी कानून लगा दिया गया।

क्रमश. न्यूनतम मजदूरी कानून सभी योरोपीय देशों मे पास हो गये और कनाडा तथा संयुक्त-राज्य अमेरिका मे भी न्यूनतम मजदूरी कानून बना दिये गए। अभी सब धंधों मे न्यूनतम मजदू ी कानून से निर्धारित नहीं की गई है, किन्तु क्रमशः सभी धंधों में न्यूनतम मजदूरी निर्धारित कर देने की प्रवृत्ति बढ रही है।

न्यूनतम मजदूरी की दर

यह तो हम पहले ही कह चुके है कि न्यूनतम मज़दूरी की दर निश्चित करते समय इस बात को ध्यान में रखना चाहिए कि मज़दूर को इतना वेतन मिल सके कि वह जीवन की सभी आवश्यक सुख-सुविधाये पा सके। किन्तु न्यूनतम मजदूरी निर्धारित करते समय यह भी विचार कर लेना चाहिए कि मजदूर को एक परिवार का भरण-पोषण करना पडना है। अस्तु, मजदूरी की दर निश्चित करते समय केवल उसकी व्यक्तिगत आवश्यकताओ को ही ध्यान में नहीं रखना चाहिए वरन उसके परिवार की आवश्यक्ताओं को ध्यान मे रख कर न्यूनतम मजदूरी निर्धारित करना चाहिए। साथ ही मजदूर कुछ समय बेकार भी रह सकता है, उसका भी ध्यान मजदूरी निर्धारित करते समय कर लेना चाहिए।

धधे की आर्थिक दशा

जब न्यूनतम मजदूरी निर्धारित की जावे, तो धन्धे की दशा को ध्यान मे रखा जावे या नहीं, यह एक महत्वपूर्ण प्रश्न है। बहुधा किसी धन्धे विशेष के व्यवसायी यह कहते हैं कि धन्धे की आर्थिक दशा इतनी खराब है कि यह जीवन निर्वाह योग्य मजदूरी नहीं दे सकता। यदि इस धन्धे में न्यूनतम मजदूरी निर्धारित कर दी जायेगी तो धन्धा मजदूरी न दे सकेगा और धन्धा नष्ट हो जावेगा। प्रश्न यह है कि ऐसे धन्धों के बारे में क्या किया जावे। यदि ऐसे धन्धों में मजदूरी कम निर्धारित की जावे, अथवा कोई मजदूरी न निर्धारित की जाय, तो उसका अर्थ यह हुआ कि व्यवसायियों को मजदूरों का शोषण करने की खुली छुट्टी दे

दी गई है और उससे मजदूरों का जो नैतिक और शारीरिक पतन होता है, उसका व्यय राज्य पर अस्पताल, निर्धन-गृह तथा सुधार-गृह स्थापित करने के कारण पड़ता है। लेखक का तो मत यह है कि प्रत्येक धन्धे को जीवन-निर्वाह योग्य मजदूरी तो देना ही चाहिए। किसी भी धन्धे को इस उत्तरदायित्व से मुक्त नहीं करना चाहिए, फिर चाहे वह धन्धा चले या न चले। कुछ देशों में न्यूनतम मजदूरी निर्धारित करते समय धन्धे की आर्थिक दशा का भी ध्यान रक्खा जाता है।

सुस्त और अकुशल मजदूर

जब न्यूनतम मजदूरी निर्धारित की जाती है तो बहुत सुस्त और अकुशल मजदूर नौकर नहीं रक्खे जावेंगे। ऐसी दशा में कुछ मजदूरों को नौकरी मिलना कठिन हो सकता है। मालिक ऐसे मजदूरों को क्यों नौकर रक्खे कि जो पूरा काम नहीं कर सकते और जिनको कानून द्वारा निर्धारित मजदूरी देनी होगी। कुछ देशों में इस प्रकार के मजदूरों को न्यूनतम मजदूरी से कम मजदूरी देने की आज्ञा कानून में दे दी गई है। किन्तु इससे यह भय रहता है कि मालिक इस सुविधा का लाभ उठा कर अधिकतर ऐसे मजदूर रख ले और जो कुशल मजदूर भी है उनको भी यह कह कर कि वे सुस्त और अकुशल मजदूर हैं, कम वेतन दे। इस सम्भावना को दूर करने के लिए कानूनों में इस बात का विधान कर दिया गया है कि प्रत्येक कारखाने में एक निश्चित प्रतिशत से सुस्त और अकुशल मजदूर जो न्यूनतम मजदूरी से कम पावेंगे, नहीं रक्खे जा सकते और उनको लायसैंस लेना होगा।

न्यूनतम मजदूरी निर्धारित करने का ढंग

न्यूनतम मजदूरी दो प्रकार से निर्धारित की जाती है। एक तो कानून में ही एक दर निश्चित कर दी जाती है और उसके अनुसार मज़दूरी देनी पड़ती है। परन्तु अधिकांश देशों में इस प्रकार मजदूरी

की दर निश्चित नहीं होती। वहां प्रत्येक धंधे के लिए प्रथम ट्रेड बोर्ड स्थापित कर दिये जाते हैं। ट्रेड बोर्ड उस धंधे की स्थिति को देख कर उस धंधे में एक निश्चित समय के लिए न्यूनतम मजदूरी निर्धारित कर देता है। जब स्थिति मे कोई परिवर्तन होता है तो फिर बोर्ड उस दर में परिवर्तन कर देता है।

जब कि न्यूनतम मजदूरी कानून बनाये गए थे, उस समय बहुत से विचारकों का कहना था कि मजदूरी आर्थिक नियमों के आधार पर निर्धारित होती है, न कि कानून द्वारा, और इस प्रकार कानून द्वारा मज्दूरी निर्धारित करने का प्रयत्न अवश्य ही असफल होगा। परन्तु जिन देशो में न्यूनतम मजदूरी कानून लगाये गए, उनका अनुभव हमे बतलाता है कि न्यूनतम मजदूरी कानून एक व्यावहारिक योजना है और वह सफलता-पूर्वक काम मे लाई जा सकती है।

मजदूरी पर प्रभाव

न्यूनतम मजदूरी कानून बनाने से अधिकतर मजदूरों की मजदूरी बढी है। जहां पहले बहुत कम वेतन मिलता था, वहां अब वेतन अधिक मिलता है। न्यूनतम मजदूरी के विरोध में यह बहुधा कहा जाता है कि न्यूनतम मजदूरी बन जाती है। मिल-मालिक उससे अधिक मजदूरी नहीं देगा। इससे उन मजदूरो को हानि पहुँचने की सम्भावना है कि जो साधारणत. अधिक मजदूरी पा सकते हैं। परन्तु जहां-जहां न्यूनतम मजदूरी कानून लागू किये गए, वहां ऐसी बात देखने मे नहीं आई। आस्ट्रेलिया में मजदूरी की साधारण दर न्यूनतम मजदूरी से बीस प्रतिशत अधिक है।

न्यूनतम मजदूरी के विरुद्ध यह तर्क भी उपस्थित किया जाता है कि इसका परिणाम यह होगा कि बहुत से मजदूर निकाल दिये जावेंगे। क्योंकि वे मालिक के लिए कानून द्वारा निर्धारित मजदूरी पर लाभ दायक न होंगे। दूसरे मिल-मालिक अपरेंटिस रख कर अपना काम

चलाने का प्रयत्न करेंगे अथवा सुस्त और अकुशल कहकर उनके लिए कम मजदूरी देने की सरकार से अनुमति लेकर उन मजदूरों से काम लेना चाहेंगे। ऊपर लिखी हुई आशंकायें कुछ सीमा तक सत्य है, परन्तु ठीक प्रबंध और निरीक्षण करने से यह दोप दूर हो सकते है।

कुछ लोगो का कथन है कि न्यूनतम मजदूरी कानून लगाने से धंधे उस देश या रियासतो में खडे नहीं किये जावेंगे, वरन पूंजी अन्य देशों मे चली जावेगी। भारतवर्ष में यह भय अवश्य ही हो सकता है कि आगे चलकर पूजी देशी राज्यो मे ही लगाई जावे और वहीं कारखाने स्थापित किये जावे। क्योंकि देशी रियासतों मे मजदूरो सम्बधी कानून बहुत पिछडे हुए है और यदि है भी तो उनको ठीक प्रकार से लागू नही किया जाता। परन्तु यह भय भी उचित नहीं है, क्योंकि जहां-जहां इस प्रकार के कानून बनाये गए, वहा से धंधे दूसरे स्थानों पर नहीं गए। फिर भविष्य में देशी राज्यो में इस कार का कानून शीघ्र ही लगाना पडेगा, इसमें कोई सदेह नहीं।

कुछ लोगो का विचार था कि न्यूनतम मजदूरी कानून बन जाने से मजदूर आन्दोलन को धक्का लगेगा और उसकी उन्नति रुक जावेगी। उनका कहना है कि जब मजदूरो को कानून के द्वारा ऊंची मजदूरी मिल जावेगी तो उन्हे फिर ट्रेड-यूनियन का सदस्य बनने की क्या आवश्यकता होगी। किन्तु अनुभव से यह ज्ञात हुआ है कि न्यूनतम मजदूरी कानून बन जाने से मजदूरो की यूनियने और भी बलवान बनी है। क्योंकि यूनियन 'मजदूरी बोर्ड' के सामने मजदूरो के मामले को ठीक प्रकार से रख कर न्यूनतम मजदूरी की दर ऊंची रखवाने में सफल होती है। इसके अतिरिक्त न्यूनतम मजदूरी कानून द्वारा निर्धारित हो जाने का तो यह अर्थ नहीं होता कि उससे अधिक मजदूरी नहीं मिलनी चाहिए। यूनियन अधिक मजदूरी और अन्य सुविधाओ के लिए प्रयत्न करती है।

कुछ व्यवसायियों का कहना है कि न्यूनतम मजदूरी कानून बन जाने का परिणाम यह होगा कि मजदूर काम कम से कम करेगा और उत्पादन घट जावेगा, क्योंकि मजदूरों को यह तो मालूम रहेगा कि उसको निर्धारित मजदूरी से कम तो मालिक दे ही नही सकता। इसका परिणाम यह होगा कि मजदूर की कार्यक्षमता कम हो जावेगी और उत्पादन कम होगा, धंधों की उन्नति रुक जावेगी। यद्यपि इसकी सम्भावना हो सकती है किन्तु व्यवहार में ऐसा नही हुआ है। एक तो मालिक इस प्रकार का कानून बन जाने के उपरान्त मजदूर के कार्य की देख भाल अधिक सतर्कता से करता है और उससे अधिक काम लेना चाहता है। दूसरे मजदूर भी अधिक वेतन मिलने के फलस्वरूप अधिक काम करते है। संक्षेप मे हम कह सकते है कि न्यूनतम मजदूरी कानून से धंधों और मजदूरों को लाभ अधिक हैं।

भारतवर्ष मे न्यूनतम मजदूरी

यदि किसी देश को न्यूनतम मजदूरी कानूनों की सबसे अधिक आवश्यकता है तो वह भारतवर्ष को है। इसके नीचे लिखे कारण हैं.—(१) भारतवर्ष के धन्धों में मजदूरी बहुत कम दी जाती है (२) मिल मालिकों को जब भी आर्थिक मन्दी का सामना करना पड़ता है अथवा कुप्रबन्ध के कारण हानि की सम्भावना होती है तो मजदूरी की दर को घटा कर वे उस हानि को पूरा कर लेते हैं। देश में जनसंख्या का भूमि पर इतना अधिक भार है कि मजदूर को जो भी मजदूरी दी जावे वह उस पर काम करने के लिए तैयार हो जाता है। (३) भिन्न-भिन्न धन्धों में और एक ही धन्धे मे मजदूरी की दर भिन्न होने के कारण जो हड़तालें होती हैं और बहुत कम मजदूरी होने के कारण धन्धों में जो आये दिन संघर्ष चलता है, वह देश की आर्थिक उन्नति के लिए हानिकर है तथा मजदूरों को विवश करता है कि वे हड़तालें करें। जब तक कि देश में न्यूनतम मजदूरी कानून नहीं बन जाता और न्यूनतम मजदूरी निर्धारित

नही करदी जाती तब तक यह दोष दूर नहीं होंगे। अस्तु देश की औद्योगिक उन्नति के लिए न्यूनतम मजदूरी कानून बनना नितान्त आवश्यक है। यह एक ऐसा आवश्यक सुधार है जो अविलम्ब हो जाना चाहिए।

सर्व प्रथम १६२८ मे अन्तर्राष्ट्रीय मजदूर सम्मेलन ने इस आशय का एक प्रस्ताव पास किया था कि जिन धन्धो मे सामूहिक मोल-भाव नही हो सकता, अर्थात मजदूरो का प्रबल संगठन न होने के कारण उचित मजदूरी नहीं मिल पाती और जिन धन्धो मे मजदूरी बहुत कम है, वहा न्यूनतम मजदूरी कानून द्वारा निर्धारित कर देनी चाहिए और उसके लिए आवश्यक प्रबन्ध कर देना चाहिए।

अन्तर्राष्ट्रीय मजदूर संघ ने जिन अवस्थाओ मे न्यूनतम मजदूरी कानून बनाये जाने का समर्थन किया था, वे सभी अवस्थायें भारत में उपलब्ध है। यहां मजदूरी बहुत कम है और मजदूरो का सबल सगठन न होने के कारण वे मालिको से उचित वेतन पाने में सर्वथा असमर्थ है। इसके अतिरिक्त खेती में बढती हुई जनसंख्या के काम न पा सकने के कारण वे सब धन्धो में एक दूसरे से होड करके मजदूरी को कम कर देते है। मिल मालिक इस स्थिति का खूब ही लाभ उठाते है। ऐसी दशा में भारतवर्ष मे अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन के इस प्रस्ताव को लागू करना नितान्त आवश्यक था।

ऐसी दशा मे जब भारतवर्ष मे शाही मजदूर कमीशन के सामने मजदूर प्रतिनिधियो ने न्यूनतम मजदूरी की माँग की तो उनका विश्वास था कि कमीशन उसको स्वीकार करेगा। किन्तु मजदूर कमीशन ने इस माँग को यह कह कर टाल दिया कि अन्तर्राष्ट्रीय मजदूर सम्मेलन ने जो यह प्रस्ताव किया था कि जहां मजदूरी कम हो, वहाँ न्यूनतम मजदूरी निर्धारित कर दी जावे उसका यह तात्पर्य कदापि नहीं था कि किसी देश की मजदूरी की तुलना पश्चिमीय देशो मे प्रचलित

मजदूरी को दर से की जावे, वरन् उसका अर्थ यह था कि उस देश मे प्रचलित मजदूरी की दर से यदि किसी धन्धे मे मजदूरी कम हो तो उसमें न्यूनतम मजदूरी निर्धारित करदी जावे। क्योंकि भारतवर्ष में अधिकांश जन-संख्या खेती के धन्धे मे लगी हुई है और खेती में काम करने वालों की मजदूरी कारखानो तथा अन्य धन्धों में काम करने वालों से बहुत कम है। अस्तु, जब तक खेती में काम करने वालो की मजदूरी इतनी कम है तब तक कारखानों में न्यूनतम मजदूरी निर्धारित करने का प्रश्न ही नही उठता और न कारखानों मे न्यूनतम मजदूरी निर्धारित करने का उस दशा मे कोई अर्थ ही है। खेती में आज की स्थिति में न्यूनतम मजदूरी निर्धारित करना सम्भव नहीं है। अस्तु, शाही कृषि कमीशन ने न्यूनतम मजदूरी की मांग को अस्वीकार कर दिया।

किन्तु यह विचार धारा शीघ्र ही बदल गई। १९३६ में आम चुनाव हुए और कांग्रेस ने अपनी चुनाव घोषणा में मजदूरों के लिए उचित वेतन की व्यवस्था का वचन दिया। इसका परिणाम यह हुआ कि जब कांग्रेस सरकारें प्रान्तो में स्थापित हो गईं तो प्रान्तीय सरकारो ने उस ओर ध्यान देना आरम्भ किया। सर्व प्रथम १९३७ में बम्बई सरकार ने निम्नलिखित आशय की घोषणा की।

प्रान्तीय सरकार उन धन्धो में जिनमे जीवन निर्वाह योग्य मजदूरी नहीं मिलती न्यूनतम मजदूरी निर्धारित करने के प्रश्न पर गम्भीरता पूर्वक विचार कर रही है। सरकार इस दृष्टि से सर्व प्रथम इस बात की जाँच करवाना चाहती है कि जीवन निर्वाह योग्य मजदूरी से प्रचलित मजदूरी कितनी कम है और उसके क्या कारण हैं तथा मजदूरी किस प्रकार ऊँची की जा सकती है।

संयुक्त प्रान्त की कांग्रेस सरकार ने १९३८ में एक मजदूर कमेटी बिठाई थी। उक्त कमेटी ने भी बम्बई-सरकार की उक्त घोषणा का समर्थन इन शब्दों में किया था। "न्यूनतम मजदूरी सिद्धान्त का अर्थ

मजदूर को जीवन-निर्वाह योग्य मजदूरी देना है और उस दृष्टि से भारतीय धन्धो मे मजदूरी बहुत कम है।" उक्त कमेटी ने कानपुर के मिल मजदूर और 'सी' श्रेणी के कैदी के भोजन के चार्टों की तुलना करते हुए यह बतलाया था कि कानपुर का मिल मजदूर कैदी से १-२ छटाँक भोजन कम पाता है और मजदूर का भोजन कैदी की तुलना में घटिया और कम पौष्टिक होता है। अन्य औद्योगिक केन्द्रों की दशा भी इससे भिन्न नहीं है। अतएव यह सिद्ध हो गया कि भारतीय मजदूरों की मजदूरी जीवन निर्वाह के लिए पर्याप्त नहीं है।

अब हम यहां कानपुर के मिल मालिको के मत को भी दे देना चाहते हैं। क्योकि मिल-मालिको के जो तर्क हैं, वे सभी प्रान्तो में एक-से हो है। कानपुर के मिल-मालिक संघ ने सिद्धान्तत न्यूनतम मजदूरी का तो विरोध नहीं किया, किन्तु उन्होने इस बात की माँग की कि वह उनकी केवल कुछ शर्तें पूरी होने पर ही लागू की जावे। वे शर्तें ऐसी थी कि यदि उनका पालन किया जाता तो न्यूनतम मजदूरी कभी भी निर्धारित ही नहीं की जा सकती थी। अपने आवेदन-पत्र में उन्होंने लिखा था कि संघ फैक्टरियो में काम करने वाले मजदूरो के लिए न्यूनतम मजदूरी निर्धारित करने का विरोधी नहीं है। परन्तु उस समय तक कानपुर मे न्यूनतम मजदूरी कभी भी निर्धारित नहीं की जानो चाहिए जब तक कि अन्य औद्योगिक केन्द्रों में भी न्यूनतम मजदूरी निर्धारित नहीं करदी जाती। क्योकि इससे कानपुर के सूती वस्त्र-व्यवसाय के धन्धे को गहरा धक्का लगेगा। साथ ही किसी एक धन्धे मे न्यूनतम मजदूरी निर्धारित कर देना भी उचित न होगा जब तक कि सरकार सभी धन्धो मे उसे लागू न करे। इसके अतिरिक्त न्यूनतम मजदूरी निर्धारित करते समय देश के उद्योग-धन्धो की स्थिति तथा सरकार की आयात-निर्यात कर नीति का फिर से अध्ययन करना और उसमें उचित संशोधन करना आवश्यक होगा।

संक्षेप में उन्होने कहा कि जब सभी प्रान्तों और देशी राज्यों में

न्यूनतम मजदूरी निर्धारित करदी जावे, तभी कानपूर में भी की जावे। यह बहुत सम्भव है कि कुछ प्रान्तों में जहाँ प्रतिक्रियावादी दल का बहुमत हो, इस प्रकार का कानून न बनाया जावे और कम से कम देशी राज्यों मे तो कुछ समय तक न्यूनतम मजदूरी कानून बनाये जाने की कोई सम्भावना नही है, उस दशा मे कहीं भी न्यूनतम मजदूरी कानून लागू नही किया जा सकता। इसी प्रकार उनका यह कहना कि जब तक सब धन्धों मे न्यूनतम मजदूरी लागू न की जावे किसी एक धन्धे में उसको प्रचलित करना उचित न होगा—एक ऐसा तर्क है जिसका अर्थ होगा कि न्यूनतम मजदूरी कभी भी प्रचलित न की जावे। क्योंकि अभी बहुत समय तक खेती में न्यूनतम मजदूरी लागू नहीं की जा सकती।

इसमे कोई भी संदेह नही कि धंधो की आर्थिक दशा और सरकार की औद्योगिक तथा कर-नीति पर धंधों की उन्नति बहुत कुछ निर्भर है। परन्तु केवल मज़दूरों को उचित वेतन देने के लिए यह शर्त लगाना कहाँ तक उचित है। यह कहना कि धन्धों की आर्थिक-दशा का ध्यान रख कर ही न्यूनतम मज़दूरी निर्धारित करना चाहिए, एक भयंकर तर्क को स्वीकार करना है। यदि कोई धंधा अधिक लाभ नहीं देता तो उसका यह भी कारण हो सकता है कि उसकी व्यवस्था ठीक नही हो रही है। ऐसी दशा में यदि व्यवसायी इस तर्क का सहारा लेना चाहते हे तो राज्य को उनके संगठन और व्यवस्था के सम्बन्ध मे जाँच करने का अधिकार होना चाहिये। फिर यदि कोई ऐसा धंधा है जो जीवन-निर्वाह योग्य वेतन मजदूरों को नहीं दे सकता तो ऐसा धंधा यदि नष्ट हो जावे तो कोई हानि नहीं है। संयुक्तप्रान्तीय कमेटी ने कानपुर के लिये उस समय १५ रु. न्यूनतम मज़दूरी निर्धारित करने की सिफारिश की थी।

सन् १६४० मे बम्बई टैक्सटाइल लेबर कमेटी ने भी प्रान्त में सूती वस्त्र-व्यवसाय मे न्यूनतम मजदूरी निर्धारित करने की सिफारिश की थी। कमेटी का कथन था कि बम्बई, अहमदाबाद और शोलापूर में क्रमशः

वहा की परिस्थिति को देखते हुए सूती वस्त्रों के कारख़ानों में भिन्न-भिन्न मजदूरी निर्धारित कर दी जावे।

विहार कमेटी ने जमशेदपुर में १८ रु., कोयले की खानो में २०रु., शक्कर के कारखानो मे १२ रु. तथा अन्य कारखानों में १२ रु. न्यूनतम मजदूरी निर्धारित करने की सिफारिश की थी।

१९३९ में सर्वप्रथम बम्बई कारपोरेशन ने एक प्रस्ताव पास करके अपने नौकरो को कम से कम २५ रु. (अलाउंस इत्यादि को छोड़ कर) वेतन देना स्वीकार किया और १९४० मे सयुक्तप्रान्तीय सरकार ने शक्कर के कारखानो मे ६ आना प्रतिदिन न्यूनतम मजदूरी निर्धारित कर दी।

किन्तु भारत-वर्ष मे सर्वप्रथम न्यूनतम मजदूरी लागू करने का श्रेय अखिल भारतीय चर्खा सघ को है, जिसने महात्मा गांधी के आदेश से बहुत पहले आठ आना प्रतिदिन के हिसाब से मजदूरो को मजदूरी देना प्रारम्भ कर दी थी।

कहने का तात्पर्य यह है कि क्रमशः देश में न्यूनतम मजदूरी कानून के सम्बन्ध में अनुकूल वातावरण बनता गया और सरकारी विचार भी बदल गया, उसी बीच मे महायुद्ध प्रारम्भ हो गया। महायुद्ध के काल मे इस विचार को और भी समर्थन मिला। यद्यपि संयुक्तप्रान्त, बिहार, और बम्बई की लेबर कमेटियो की सिफारिशे कार्यरूप में परिणत न हो सकीं, क्योकि प्रान्तों मे काग्रेस-मंत्रिमडलो ने त्यागपत्र दे दिया, फिर भी हर-एक विचारवान व्यक्ति को न्यूनतम मजदूरी कानून की आवश्यकता अनुभव होने लगी।

भारत सरकार और न्यूनतम मजदूरी कानून

१९४५ मे भारत सरकार के मजदूर सदस्य ने केन्द्रीय धारा-सभा में यह घोषणा कर दी कि भारत सरकार शीघ्र ही न्यूनतम मजदूरी कानून बना कर धधों में न्यूनतम मजदूरी निर्धारित कर देगी। उक्त घोषणा के अनुसार सरकार ने एक बिल तैयार करके ट्रेड-यूनियनो तथा मिल

मालिकों के संघों के पास सम्मति के लिए भेजा। इस बिल के अन्तर्गत सभी उद्योग धंधों, व्यापार तथा कृषि में भी काम करने वाले मजदूरों का न्यूनतम वेतन निर्धारित करने की व्यवस्था है। इस बिल में इस बात का भी विधान है कि भारत सरकार द्वारा कानून पास होने के उपरान्त दो वर्षों के अन्दर प्रान्तीय सरकारे धंधों तथा खेती में काम करने वाले मजदूरों के लिए न्यूनतम मजदूरी निर्धारित कर दे। कितनी मजदूरी निर्धारित की जावे, इसका निर्णय करने के लिए प्रान्तीय सरकारें कमेटियां बिठावेगी, जिनम आधे सदस्य मिल-मालिकों के तथा आधे सदस्य मजदूरों के प्रतिनिधि होगे।

यह बिल एसेम्बली मे पेश कर दिया गया, किन्तु अभी इस पर विचार नहीं हो सका है। आशा है कि शीघ्र ही भारत में सभी धंधों में न्यूनतम मजदूरी कानून लागू हो जावेगा।

किन्तु मजदूरी कानून बनाते समय इस बात का ध्यान रक्खा जावे की मजदूरी इतनी निर्धारित की जावे कि जो मजदूर की सुख-सुविधा के लिए आवश्यक हो। अच्छा तो यह है कि प्रत्येक धंधे के लिए ट्रेड बोर्ड स्थापित किया जावे, जो उस धंधे मे न्यूनतम मजदूरी कितनी हो, यह निर्धारित करे और उससे सम्बंधित समस्याओं का निर्णय करे।

नवां परिच्छेद

मजदूरों का संगठन

जब कारीगर अपने घरों में सामान तैयार करते थे, तब आधुनिक ढंग के मजदूर संघो का सर्वथा अभाव था। सच तो यह हे कि उस समय मजदूर संघों की आवश्यकता ही नही थी। कारण यह था कि

कारीगर स्वयं कोई पूंजीपति नहीं था। वह छोटी मात्रा में उत्पादन-कार्य करता था। अधिकतर वह स्वयं अपने श्रम तथा अपने परिवार वालो की सहायता से सामान तैयार करता था और व्यापारियों को अथवा समीपवर्ती बाजार में ग्राहकों को बेच देता था। पहले तो वह मजदूर रखता ही नही था और यदि कोई युवक उस धन्धे को सीखने के उद्देश्य से उसके यहाँ काम करता भी था तो कारीगर उसका शोषण करने की कल्पना भी नहीं कर सकता था। कारण यह था कि वह मजदूर शिष्य उसी के गाँव का होता था तथा सम्भवत. उसके मित्र अथवा पडोसी का होता था। अस्तु सामाजिक प्रभाव के कारण मालिक अपने शिष्य मजदूर के साथ दुर्व्यवहार नहीं कर सकता था। इसके अतिरिक्त कारीगर स्वय मजदूर शिष्यो के साथ काम करता था, अतएव वह मजदूर के जीवन से, उसकी कठिनाइयो से अनभिज्ञ नहीं होता था। उसका दृष्टिकोण सहानुभूति का होता था। केवल इन्ही कारणों से कारीगर मजदूर शिष्यो के साथ अच्छा व्यवहार नहीं करता था, वरन उसका स्वार्थ भी इसी में निहित था। जहां कारीगर मजदूर शिष्य को अपनी नौकरी से हटा कर उसे बेकार कर सकता था, वहा उसके कठोर व्यवहार के कारण यदि मजदूर शिष्य (जो अधिक नहीं होते थे) उसका कार्य छोड देते, तो उसका व्यवसाय ठप्प हो सकता था। दूसरे शब्दो मे मालिक मजदूरो के लिए जितना आवश्यक था, मजदूर भी मालिक के लिए उतने ही आवश्यक थे। उन दिनो मालिक मजदूरो से बहुत लम्बे समय तक काम ले सके यह भी सम्भव नहीं था, क्योंकि बिजली का आविष्कार नहीं हुआ था। इसलिये रात्रि को कार्य नहीं हो सकता था। कार्य के घंटे केवल दिन में ही निर्धारित होते थे। सूर्य का यथेष्ट प्रकाश जब तक रहे तभी तक कार्य हो सकता था। उस समय में से भोजन तथा विश्राम का समय निकाल कर जो समय बचता था, उसी में कार्य होता था। एक प्रकार से प्रकृति ने कार्य के उचित घन्टों को स्वयं निर्धारित कर दिया था। कारीगर मजदूरों से अधिक घन्टे काम लेना भी चाहे तो नहीं

ले सकता था। मजदूरों को एक सुविधा और भी थी कि सारा कार्य तो हाथों से होता था। मजदूर कार्य की गति को स्वयं निर्धारित कर सकते थे। कार्य की गति को निर्धारित करना कारीगर के हाथ में नही था।

अस्तु उन दिनों मजदूर की स्थिति ऐसी दयनीय नहीं थी, उसका शोषण इतना सरल नही था। इसके अतिरिक्त कारीगर भी कोई पूंजीवाला नहीं था। धन्धे में पूंजी की इतनी कम आवश्यकता होती थी कि मजदूर शिष्य कुछ दिनों बाद स्वयं स्वतंत्र कारीगर बन कर अपना धन्धा अलग चलाता था। अतएव मजदूर शिष्य को थोडे दिनों ही मजदूरी करनी पडती थी। वास्तव मे उस समय कारीगरों और उनके मजदूर शिष्यों के स्वार्थों में इतना संघर्ष नहीं था, जितना कि कारीगरो और उन व्यापारियों के स्वार्थों मे जिनको कारीगर माल बेंचता था। अधिकतर तो कारीगर स्वयं अपने माल को गांव या कस्बे मे बेंच देता था, किन्तु जो कारीगर बहुत बहुमूल्य वस्तुये तैयार करते थे, उन्हे व्यापारियों के हाथ अपना माल बेचना पडता था। परन्तु उन व्यापारियों के विरुद्ध कारीगर कोई संगठन कर ही नही सकते थे। क्योंकि कारीगर तो भिन्न भिन्न स्थानों पर बिखरे होते थे, वे कभी सगठित हो ही नही सकते थे। उनके संगठित न हो सकने का दूसरा कारण यह भी था कि कारीगर व्यापारी का नौकर नही था। व्यापारी उसे आर्डर देता और माल तैयार करवाता था। अस्तु, व्यापारी से आर्डर प्राप्त करने के लिए कारीगर स्वयं आपस में प्रतिस्पर्द्धा करते थे। यही कारण था कि उन दिनो मजदूरों का कोई व्यापक सगठन नहीं बन सका।

किन्तु औद्योगिक क्रांति के उपरान्त जब बडी मात्रा में उत्पादन काय होने लगा, बडे-बडे कारखाने खोले गये तो स्थिति बदल गई। कारीगर को अपना घर छोड कर कारखानों मे काम करने के लिए जाना पडा शक्ति संचालित यंत्रों पर कार्य करने के कारण कार्य की गति का निर्धारित करना उसके हाथ मे नही रहा, वरन मिल मालिक के हाथ में चला गया। बिजली के प्रकाश मे कारखानों में रात्रि को भी काम करवा

सम्भव हो गया। फिर मालिक हजारों मजदूरों को नौकर रखता है अतः उसके लिए एक या दो मजदूरों का कोई महत्त्व नहीं रहता। यदि एक या दो मजदूर इस विचार से कि मालिक का व्यवहार कठोर है, वह वेतन कम देता है, उसकी नौकरी छोड देते हैं तो मालिक का काम नहीं रुक सकता। अतएव आज की अवस्था में मिल मालिक के हाथ में शोषण की अनन्त शक्ति आ गई है।

जहां फैक्टरी पद्धति के प्रादुर्भाव से मजदूरों की तुलना मे मिल-मालिक बहुत ही शक्तिवान हो गया है, वहां उसी पद्धति मे भावी मजदूर आन्दोलन और मजदूर संगठन के बीज मौजूद थे। जब प्रातःकाल कारखाने का भोपू बोलता है और दूर-दूर से मजदूर झुंड के झुंड एक साथ सब दिशाओ से आकर कारखाने के फाटक पर इकट्ठे होते हैं, उस समय वे आपस में कारखाने के सम्बन्ध में ही बात-चीत करते है। उनके क्या दुख-दर्द है, उनके लिए किन सुविधाओ की आवश्यकता है, इत्यादि प्रश्नों पर वे आपस मे बात-चीत करते है। दिन भर कारखाने मे साथ साथ काम करते और सायकाल को कारखाने की छुट्टी की सीटी बजने पर जब थके हुए मजदूर धीरे-धीरे अपने घरों की ओर हजारों की संख्या मे लौटते है तो स्वभावतः वे अपनी स्थिति, कारखाने मे होने वाले दुर्व्यवहार, कम वेतन और मालिकों के शोषण के सम्बन्ध में बात-चीत करते है। यही से आधुनिक मजदूर-आन्दोलन और मजदूर-संगठन का जन्म हुआ है।

आरम्भ मे मजदूर-आन्दोलन ब्रिटेन मे हुआ। क्योंकि सर्वप्रथम औद्योगिक क्रान्ति उसी देश में हुई थी और वहीं फैक्टरियां स्थापित हुई थीं। किन्तु उस समय व्यवसायी पूंजीपतियों का शासन मे बोल-बाला था, अतएव राज्य ने कानून बना कर मजदूरो के क्लबो और संघों को गैर कानूनी घोषित कर दिया। उनके विरुद्ध षडयंत्र का दोष लगाया गया और उनके नेताओं को कठोर दंड दिया गया। इसका परिणाम यह हुआ कि मजदूरों ने गुप्त संगठन खडे किये। नेता लोग गुप्त रहते, साधारण

मजदूर उनको जानता भी नहीं था, किन्तु उसकी आज्ञा का पालन होता था। प्रत्येक सदस्य को सदस्य बनते समय शपथ लेनी पडती थी। इस प्रकार जहां-जहां आरम्भ में मजदूर-आन्दोलन के विरुद्ध कानून बनाये गए वहां-वहां उसी प्रकार के गुप्त संगठन खडे हो गये।

जर्मनी में जब मजदूर-संगठन के विरुद्ध कानून बनाया गया तो वहां भी मजदूरों के गुप्त संगठन खडे हो गये, गुप्त रूप से वहां प्रबल आन्दोलन चलाया गया। मजदूर कार्यकर्ता लगातार अपने सिद्धान्तों और विचारों का प्रचार करते थे। इसका परिणाम यह हुआ है कि वहां दो क्रान्तिकारी संगठन स्थापित हुये "कानून विरोधियों का संघ (Federation of out laws) तथा कम्यूनिस्ट संघ। इसी संघ ने प्रसिद्ध कम्यूनिस्ट मेनीफेस्टो (घोषणा पत्र) प्रकाशित किया था।"

क्रमश इंग्लैन्ड मे मजदूरो के संगठन के विरुद्ध जो कानून बने थे वे तोड दिये गए। यद्यपि बहुत दिनों तक फिर भी मजदूरों पर कुछ न कुछ कानूनी प्रतिबंध लगे रहे उनको संगठन करने की सुविधा मिल गई। इस समय कार्ल मार्क्स के विचारों के कारण मजदूर आन्दोलन में बहुत उग्रता आ चुकी थी। क्रमशः मजदूर आन्दोलन सबल होने लगा और वह राजनैतिक दृष्टि से भी महत्वपूर्ण हो गया। इंग्लैंड में तो मजदूर दल आज शासन की बागडोर संभाले हुए है।

सन १९०१ मे टैफवेल रेलवे मे एक हडताल हुई और कम्पनी ने मजदूरों के विरुद्ध क्षति पूर्ति का दावा कर दिया। न्यायालय से यूनियन के विरुद्ध फैसला हो गया। हाऊस आफ लार्डस ने यह निर्णय किया कि सदस्यो के कार्यों के लिए यूनियन उत्तरदायी है। यह स्थिति मजदूर संगठन की दृष्टि से भयावह थी, अस्तु इस बात के लिए प्रयत्न किया गया कि ट्रेड यूनियनों को इस उत्तरदायित्व से मुक्त कर दिया जावे। १९०६ में हडतालों के संबंध मे एक कानून बन जाने से मजदूर संघो की यह कठिनाई भी जाती रही।

मजदूर सगठन का ढॉचा

मजदूर सघो का रूप भिन्न-भिन्न होता है किन्तु मोटे रूप में दो प्रकार के मजदूर संघ (ट्रेड यूनियन) होते हे। एक क्रैफ्ट के अनुसार (दूसरे धंधे के अनुसार आरम्भ मे क्रैफ्ट अथवा क्रिया के अनुसार) मजदूर संघो की स्थापना हुई थी। अर्थात् एक क्रिया में काम करने वालो की एक यूनियन हो। उदाहरण के लिए यदि वस्त्र तैयार करने के धधे में बुनकरो की एक यूनियन हो, कत्तियो का दूसरा यूनियन हो तो उसको हम क्रैफ्ट यूनियन अर्थात क्रिया के अनुसार यूनियन कहेंगे। क्रिया के आधार पर जो यूनियन बनाई जाती है उनकी विशेषता यह होती है कि जो भी मजदूर एक क्रिया को करते हैं फिर वे चाहे जिस धंधे में लगे हो और चाहे जिस मालिक के यहां काम करते हों एक यूनियन मे सगठित किये जाते हैं। उदाहरण के लिये भारतवर्ष में अहमदाबाद का मजदूर सघ क्रैफ्ट यूनियनों का एक संघ है।

क्रिया के आधार पर संगठित यूनियन अर्थात क्रैफ्ट यूनियन के विपरीत धंधो के आधार पर संगठित यूनियन होती हैं। इस यूनियन की विशेषता यह होती है कि जो भी मजदूर उस धंधे विशेष में काम करता है फिर वह चाहे किसी भी विभाग या क्रिया मे क्यों न काम करता हो उस यूनियन का सदस्य हो सकता है। उदाहरण के लिए रेलवेमैन यूनियन, वस्त्र व्यवसाय की यूनियन इत्यादि इस प्रकार की यूनियने हैं।

यूनियन संगठित करने का एक तीसरा सिद्धान्त भी हो सकता है अर्थात एक ही मालिक की अधीनता मे जो लोग काम करते हैं उनकी यूनियन संगठित की जावे। उदाहरण के लिए एक म्यूनिसीपैलिटी के सभी विभागो के कर्मचारी फिर वे चाहे स्वास्थ्य, निर्माण, शिक्षा, सफाई किसी भी विभाग के क्यो न हों एक यूनियन में संगठित हों, इस प्रकार की यूनियन बहुत कम देखने मे आती है।

स्त्रियाँ और मजदूर संगठन

आरम्भ मे स्त्री मजदूरों का कोई संगठन नहीं था। मजदूरों की यूनियने उन्हे संगठित करने का विशेष प्रयत्न नहीं करती थी। किन्तु प्रथम महायुद्ध मे जब धधों मे बहुत बडी संख्या मे मजदूर स्त्रियाँ काम करने लगीं तो मजदूर नेताओं का उनको संगठित करने की ओर ध्यान गया। क्योंकि उनके असगठित रहने से पुरुषों की मजदूरी पर बुरा प्रभाव पड सकता था।

आज सभी औद्योगिक देशों मे स्त्रियां भी यूनियनों की सदस्य है और ट्रेड यूनियन की कार्य-कारिणी समिति मे उन्हे विशेष प्रतिनिधित्व दिया जाता है। यद्यपि भारतवर्ष मे वे अभी तक संगठित नही हो पाई है। परन्तु इतना सब होने पर भी सभी देशों मे अधिकतर स्त्रियां मजदूर असगठित ही हैं। इसका मुख्य कारण यह है कि मजदूर स्त्रियां बहुत थोडे समय के लिए कारखानों मे काम करने आती है। विवाह करने के उपरान्त वे काम नहीं करतीं। अस्तु, वे यूनियन की सदस्य होने के लिए उतनी उत्सुक नहीं होती। जिन धंधों मे विवाह के उपरान्त भी काम करती है, उनमे उनका संगठन शक्तिवान है।

यूनियनों का संघ

प्रत्येक धन्धे में जो भिन्न-भिन्न औद्योगिक केन्द्रों की यूनियन है, वे अपना एक संघ बना लेती है। उदाहरण के लिए बम्बई, अहमदाबाद, शोलापुर, कानपुर, इत्यादि केन्द्रों की यूनियन मिल कर अखिल भारतीय टैक्सटाइल लेबर फैडरेशन बनाते। इस प्रकार उस धन्धे में काम करने वाले सभी मजदूर एक भारतीय संघ की अधीनता मे काम करेगे।

किन्तु केवल भिन्न-भिन्न धन्धों के राष्ट्रीय संघों से ही समस्या हल नहीं हो जावेगी। बहुत सी मजदूरों की समस्यायें और प्रश्न ऐसे होते है, जो कि सभी धन्धों में काम करने वाले मजदूरों के लिए एक

समान महत्वपूर्ण होते है। इसके अतिरिक्त मजदूरो के राजनीतिक अधिकारों को प्राप्त करने के लिए तथा उनके हितो की रक्षा करने के लिए एक मच आवश्यक होता है। अतएव प्रत्येक देश मे मजदूरों की कांग्रेस (ट्रेड यूनियन काग्रेस) होती है, जिससे सभी मजदूर-सघ और ट्रेड-यूनियन सम्बन्धित रहती हैं।

मजदूर सघो का कार्य

मजदूर संघो की स्थापना का मुख्य उद्देश्य श्रम-जीवियो की सर्वांगीण उन्नति है। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए मजदूर सभायें और मजदूर सघ बहुत से उपाय काम में लाते है, उनके कार्यो की तालिका बहुत लम्बी है। किन्तु वे सब कार्य तीन श्रेणियों मे बांटे जा सकते है। १. रचनात्मक कार्यक्रम २. पूँजीपति से अधिक से अधिक सुख सुविधायें मजदूरों के लिए प्राप्त करना और उसके साथ निरन्तर संघर्ष करना। ३. राजनैतिक कार्यक्रम जिसका उद्देश्य मजदूरों का शासन-यन्त्र पर आधिपत्य स्थापित करके समाजवादी व्यवस्था स्थापित करना होता है।

१. रचनात्मक कार्यक्रम के अन्तर्गत मजदूरों की सुख-सुविधा के लिए शिक्षा, स्वास्थ्य, मनोरजन, बेकारी तथा बीमारी मे आर्थिक सहायता, रहने की सुविधा, सहकारी उपभोक्ता स्टोर तथा नौकरी दिलाने के लिए ब्यूरो स्थापित करना, इत्यादि सभी कार्य ट्रेड-यूनियन करती है।

२. पूंजीपतियो से बात-चीत करके मजदूरों के लिए उचित वेतन, अच्छा व्यवहार, कारखाने मे अन्य सुविधाये प्राप्त करना और आवश्यकता पडने पर अपनी मांगो को स्वीकार कराने के लिए पूजीपतियों से सघर्ष करना।

३. राजनैतिक कार्यक्रम के अन्तर्गत अपने प्रतिनिधियो को व्यवस्थापिका सभाओं में भेज कर मजदूरों के हितों को कानून बनाकर सुरक्षित करना तो मजदूर आन्दोलन का तात्कालिक उद्देश्य होता है। परन्तु अपने उद्देश्यों का प्रचार करके तथा शासन की बागडोर अपने

हाथ में लेकर देश में समाजवादी व्यवस्था स्थापित करना उसका अन्तिम लक्ष्य होता है।

प्रत्येक देश में मजदूर आन्दोलन अपनी शक्ति के अनुसार अपने अंतिम लक्ष्य की ओर बढ रहा है। जिस देशमें आन्दोलन अधिक सबल है, वह लक्ष्य के उतने ही अधिक समीप पहुँच गया है। भारतवर्ष मे अभी हम बहुत दूर हैं। आगे हम भारतवर्ष के मजदूर आन्दोलन का अध्ययन करेंगे।

भारतीय मज़दूर संगठन

बम्बई में पहली सूती कपडे की मिल १८६३ मे स्थापित हुई और १८७० तक केवल थोडी सी ही मिलें स्थापित हो सकीं। किन्तु १८७० के उपरान्त बम्बई नगर तथा प्रान्त में तेजी से मिलें स्थापित होने लगीं और उनमें अधिकाधिक मजदूर काम करने लगे। मजदूरो मे स्त्रियां और बच्चे भी यथेष्ट संख्या में भर्ती किये गये। स्त्रियां और बच्चे भी इन कारखानों में लगभग उतने ही घण्टे काम करते थे, जितने कि प्रौढ पुरुष। उनमे से कुछ बच्चे बहुत छोटी उमर के थे। स्त्रियों और बच्चो की उपस्थिति के कारण फैक्टरियों के नियंत्रण का प्रश्न उठा और यही प्रश्न मजदूर आन्दोलन का कारण बना।

किन्तु तत्कालीन मजदूर आन्दोलन को लंकाशायर के मिल-मालिकों से बहुत बल मिला। लंकाशायर के सूती कपडे के मिल मालिको ने भारतीय मिलों की प्रगति को रोकने के उद्देश्य से भारत मन्त्री के द्वारा भारत सरकार तथा बम्बई सरकार पर फैक्टरी-कानून बनाने के लिए दबाव डालना आरम्भ किया। विवश होकर २५ मार्च १८७५ को बम्बई सरकार ने एक कमीशन मजदूरों की दशा की जांच के लिये बिठाया, किन्तु कमीशन ने फैक्टरी कानून बनाने की कोई आवश्यकता नहीं समझी। कमीशन की ऐसी रिपोर्ट ने मैंचेस्टर के मिल-मालिकों को फिर सतर्क कर दिया। वे भारत में फैक्टरी-कानून बनाये जाने के लिए फिर आन्दोलन

करने लगी और इधर भारत मे मिल-मालिकों ने फैक्टरी-क़ानून के विरुद्ध आन्दोलन आरम्भ कर दिया। इसी समय श्री सोराबजी सापुरजी बंगाली के नेतृत्व मे मजदूरो के हितैषियो ने मजदूरों के हितो के लिए आन्दोलन आरम्भ कर दिया। और यहां से ही भारतीय मजदूर आन्दोलन का आरम्भ होता है।

श्रीयुत सोराबजी सापुरजी बगाली ने मजदूरो के प्रश्न को बम्बई धारा-सभा के सामने लाने के उद्देश्य से एक बिल तैयार किया, किन्तु कमीशन की रिपोर्ट के आधार पर बम्बई सरकार ने उस बिल को धारा-सभा के सामने उपस्थित करने की मनाई करदी। श्री बंगाली ने मैंचेस्टर के मिल-मालिकों से सहायता की प्रार्थना की और अपने बिल के मसविदे की प्रतिया उन्हे भेज दीं। ब्रिटेन के पत्रो मे श्री बंगाली की प्रार्थना प्रकाशित होने पर वहां फिर आन्दोलन प्रारम्भ हुआ और कामन्स-सभा में ४ एप्रिल १८७६ को एक प्रस्ताव भारत मे फैक्टरी-कानून बनाने के लिए पास हो गया।

उस आन्दोलन का फल यह हुआ कि भारत सरकार ने १८८१ मे पहला फैक्टरी-क़ानून पास किया, जिसके अनुसार ७ वर्ष से कम की आयु का बच्चा कारखानो मे काम नहीं कर सकता था और १२ वर्ष तक के बालक दिन मे केवल ८ घण्टे काम कर सकते थे।

किन्तु इस ऐक्ट से कोई भी संतुष्ट नहीं हुआ। मजदूरो के हितैषी चाहते थे कि कानून मे स्त्री मजदूरो पर भी नियन्त्रण किया जाता और बालक मजदूरों को और अधिक संरक्षण प्रदान किया जाता। अस्तु, कानून के बनने के साथ-साथ भारतवर्ष और ब्रिटेन दोनो ही देशो मे उसके विरुद्ध आन्दोलन होने लगा।

इसके फलस्वरूप बम्बई सरकार ने १८८४ मे एक मजदूर कमीशन मजदूरो की दशा की जांच करने के लिए बिठाया। इधर भारतीय मिल मालिको ने भी नये मजदूर पक्षीय आन्दोलन का विरोध करना आरम्भ

कर दिया । मिल मालिकों के प्रचार की असत्यता प्रमाणित करने के लिए मजदूरों के हितैषियों तथा मजदूरों को यह आवश्यक प्रतीत हुआ कि मजदूरो का भी संगठन किया जावे और उनकी आवाज भी सरकार तक पहुँचाई जावे। इस आवश्यकता के फलस्वरुप भारत को उसका प्रथम मजदूर नेता नारायण मेघजी लोखांडे प्राप्त हुआ।

श्री लोखांडे ने पहला काम यह किया कि बम्बई में मजदूरों का एक सम्मेलन किया। सम्मेलन का मुख्य उद्देश्य मजदूरों की मांगों को कमीशन के सामने रखना था। सम्मेलन २३ और २६ सितम्बर १८८४ को हुआ और मजदूरों की ओर से एक आवेदन पत्र तैयार किया गया जिस पर ५५०० मजदूरों ने हस्ताक्षर किये थे ।

उस आवेदन पत्र में नीचे लिखी मुख्य मांगे रक्खी गईं थीं:— १. रविवार को छुट्टी रहे २. प्रतिदिन दोपहर को आधे घंटे का विश्राम दिया जाय, ३ मिलों मे ६½ बजे प्रात काल काम शुरु हो और सूर्य डूबने पर समाप्त कर दिया जाय ४. पिछले महीने का वेतन अगले महीने की १५ तारीख तक अवश्य मिल जाय। ५. यदि किसी मजदूर को गहरी चोट लग जावे तो उसके अच्छे होने तक पूरा वेतन दिया जाय और यदि मजदूर जीवन भर के लिए बेकार हो जावे तो उसे उचित हर्जाना दिया जावे।

कमीशन ने मजदूरों की इन मांगों पर विचार किया और अपनी रिपोर्ट दे दी, किन्तु भारत सरकार ने उस पर कोई कार्यवाही करना अस्वीकार कर दिया।

मैंचेस्टर के व्यवसायियो का प्रस्ताव

भारत सरकार के फैक्टरी कानून मे सशोधन न करने का परिणाम यह हुआ कि विलायत में फिर आन्दोलन आरम्भ हुआ। लंकाशायर के फैक्टरी इंस्पैक्टर जोन्स महोदय, जो बम्बई के सूती कपडे के कारखानों

को देखने के लिए आये थे, इग्लैंड लौटने पर उन्होंने बम्बई मिलों के विरुद्ध बहुत से लेख वहां के पत्रो में लिखे और भारतीय मजदूरों की दीन-दशा का वर्णन खूब अतिशयोक्तिपूर्ण भाषा में किया। भारत मत्री ने भारत सरकार का उन आरोपो की ओर ध्यान आकर्षित किया। इधर भारत मे सूती कपडे की मिलो की निरन्तर वृद्धि से शंकित होकर मैंचेस्टर के व्यवसायियो ने एक प्रस्ताव पास करके भारत में ब्रिटिश कानून लागू करने की मांग की। इसका परिणाम यह हुआ कि भारतीय जनमत और विशेपकर मिल मालिक क्षुब्ध हो उठे और भारत मे मजदूर कानून के विरुद्ध आन्दोलन आरम्भ हुआ।

भारतवर्ष मे नये फैक्टरी कानून के विरुद्ध जो आन्दोलन हो रहा था, उसमें मजदूर की आवश्यकताओ की घोर उपेक्षा की जाती थी। मिल मालिक यह कहते नही थकते थे कि स्वयं मजदूर मिल मालिक के विरुद्ध कोई संरक्षण नही चाहते हैं। अतएव अपनी कठिनाइयो को सरकार के समक्ष उपस्थित करने के उद्देश्य से बम्बई के मजदूरों ने २४ अक्टूम्बर १८८९ को गवर्नर जनरल के पास एक आवेदन-पत्र भेजा जिसमें उन्हीं मांगो को दोहराया गया था कि जो १८८४ के मजदूर सम्मेलन ने स्वीकार की थी।

यह तो हम पहले ही कह आये हैं कि जोन्स ने भारतीय कारखानों के सम्बन्ध मे जो दोपारोपण किये थे, उनकी ओर भारतमन्त्री ने भारत सरकार का ध्यान आकर्षित किया था। किन्तु भारत सरकार ने उन दोषो को अस्वीकार कर दिया। किन्तु साथ ही १८८१ के फैक्टरी कानून का संशोधन करना स्वीकार कर लिया। परन्तु भारत-सरकार बम्बई फैक्टरी कमीशन की सिफारिशो के आधार पर नया फेक्टरी कानून बनाना चाहती थी; परन्तु मैंचेस्टर के व्यवसायी अधिक कडा फैक्टरी कानून चाहते थे। अस्तु, भारत सरकार ने जो बिल बनाया, वह रोक दिया गया।

मिल मजदूरों की सभा

उस समय एक अत्यन्त महत्वपूर्ण घटना हुई। २४ एप्रिल १८९० को १०,००० मिल मजदूरों की एक बडी सभा हुई, जिसमें दो स्त्री मजदूरों ने भी भाषण दिये और रविवार को छुट्टी की माँग की। उसी सभा में रविवार की साप्ताहिक छुट्टी के लिए एक मैमोरियल तैयार किया गया और बम्बई मिल-मालिक संघ के पास भेजा गया। मिल मालिक संघ ने अपनी १० जून १८९० की साधारण बैठक में मजदूरों की इस मांग को स्वीकार कर लिया। मजदूरों की यह पहली विजय थी।

इसी बीच मे मजदूर आन्दोलन भी जड पकडता जा रहा था। श्रीयुत लोखांडे मजदूर आन्दोलन के जनक और उसकी आत्मा थे। उन्होंने १८९० मे बम्बई के मजदूरों का एक संघ स्थापित किया, जिसका नाम "बम्बई मजदूर संघ" था। उस संघ के सभापति श्री लोखांडे स्वयं थे और उसके मंत्री श्री डी. सी. अथेड थे। यह भारत का प्रथम मजदूर संघ था।

मजदूर-पत्र

श्री लोखाडे ने बम्बई मजदूर-संघ की स्थापना के साथ ही एक पत्र भी प्रकाशित किया, जिसका मुख्य उद्देश्य मजदूरों के प्रश्न को उपस्थित करना और उनकी मांगों का प्रचार करना था। इस पत्र का नाम "दीनबंधु" था। भारत का यह पहला मजदूर पत्र था। अभी तक मजदूर आन्दोलन केवल मजदूरों की कष्ट-गाथा को सरकार तथा मिल-मालिको तक पहुँचा कर उनसे कुछ सुविधाओं की भिक्षा मांगना भर था। अभी तक मजदूर आन्दोलन मे वह उग्रता दिखलाई नहीं देती थी कि जो भारतीय मजदूर आन्दोलन मे बाद में दिखलाई दी।

मजदूरो की नवीन मांगे

इसी समय भारत मंत्री के आदेश पर भारत सरकार ने एक मजदूर कमीशन बिठाया जिसके एक सदस्य मजदूरों के परम हितैषी श्री मोरायजी

सापुरजी बंगाली थे। कमीशन की सहायता के लिए तीन स्थानीय सदस्य और नियुक्त किये गए जिनको रिपोर्ट पर हस्ताक्षर करने का अधिकार नही था। बंगाल तथा संयुक्तप्रान्त का प्रतिनिधित्व इस कमीशन मे श्री बाबू रसिकलाल घोष (कलकत्ता) तथा कानपुर की लाल इमली मिल के फोरमैन श्री रामजी मानिक जी ने किया था और बम्बई के स्थानीय सदस्य लोखांडे थे। इन स्थानीय सदस्यों ने कलकत्ता कानपुर तथा बम्बई से मजदूरो की गवाहियां कराई और कष्टो को सुनाने का प्रयत्न किया।

रिपोर्ट तैयार होने के पूर्व बम्बई मिल मजदूर संघ ने नीचे लिखी मांगे कमीशन के सामने उपस्थित की। १. मजदूरो को रविवार की छुट्टी मिलनी चाहिए। २. काम के घंटे ६ बजे प्रात काल और ५.३० सायंकाल के बीच मे होना चाहिए। ३. यदि सम्भव हो तो दिन मे एक घन्टे का पूरा विश्राम दिया जाय नही तो आध घन्टे का विश्राम अवश्य दिया जावे। ४ महीने की १५ तारीख को तनख्वाह अवश्य मिलनी चाहिए। ५ ६ से १४ वर्ष की आयु के बालक आधा दिन काम करें। ६. स्त्रियां केवल ७ बजे प्रातः काल से लेकर ५ बजे सायंकाल तक काम करे। ७. बीमार होने तथा चोट लगने पर मजदूरो को आर्थिक सहायता देने का प्रबन्ध होना चाहिए। ८. प्रत्येक कारखाने मे एक अस्पताल होना चाहिए। ९. प्रत्येक मिल मे बालक मजदूरो की शिक्षा के लिए एक स्कूल होना चाहिए। श्री लोखाडे ने कहा कि यदि मजदूरों की ऊपर लिखी मांगों को नये फैक्टरी ऐक्ट मे समावेश कर लिया जावे तो मजदूरों को फिर कोई शिकायत नहीं रहेगी।

कमीशन ने अपनी रिपोर्ट १२ नवम्बर १८९० को दी और उसके आधार पर भारत सरकार ने एक बिल लैजिस्लेटिव कौंसिल में उपस्थित किया और १९ मार्च १८९१ को नया फैक्टरी कानून बन गया, जिसकी तीन बातें उल्लेखनीय थी। पहले स्त्रियो के लिए दिन में ११ घंन्टे काम करने का समय निर्धारित किया गया। दिन मे १½ घन्टा विश्राम

का दिया गया और तीसरी मुख्य बात यह थी कि बालक मजदूरों की आयु ७-१२ से बढा कर ९-१४ कर दी गई।

१९०४ और १९०५ मे सयुक्तराज्य अमेरिका के गृह-युद्ध के कारण वहाँ कपास की फसल उत्पन्न नही की गई और भारतीय सूती वस्त्र व्यवसाय को दैवी प्रोत्साहन मिल गया। बहुत सी नई मिलें स्थापित हुईं और मिलों में अधिक समय तक काम होने लगा। भारत में अंग्रेजी पत्रों ने इसके विरुद्ध फिर आन्दोलन किया, क्योंकि वे पत्र अंग्रेजों के थे और वे मैंचेस्टर के व्यवसायियों के समर्थक थे। बम्बई के मिल मजदूरों ने भी एक प्रार्थना पत्र भारत सरकार को इस आशय का भेजा कि पुरुषों के काम के घन्टे भी निर्धारित कर दिये जावे।

इसी समय बंग भंग आंदोलन आरम्भ हुआ और बंगाल के कुछ नेताओं ने मजदूरों का पक्ष लिया और उन्हे अपनी हडतालों मे सहायता दी। १९०६ में लंकाशायर के कारखानों के मजदूरों के संघ ने भारत मत्री के पास एक शिष्ट मंडल भेजकर भारत मे पुरुषों के काम के घंटों को नियन्त्रित करने की प्रार्थना की। इसका परिणाम यह हुआ कि भारत सरकार ने फिर एक मजदूर कमीशन बिठाया। उस जांच कमीशन ने सूती कारखानो मे पुरुषों के काम के घन्टों को १२ निश्चित कर देने की सिफारिश की। अस्तु, भारत सरकार ने १९११ मे तीसरा फैक्टरी कानून पास कर के सूती कपडे के कारखानों मे पुरुषों के काम करने के घन्टे १२ तथा बालकों के ६ निर्धारित कर दिये।

इसी समय मजदूरों के प्रथम नेता श्री लोखाडे तथा मजदूरो के परम हितैषी श्री बंगाली की मृत्यु हो गई। किन्तु उन्होंने जिस मजदूर आन्दोलन की देश मे जड जमाई थी, वह मरा नही। मजदूरो ने उस आन्दोलन को जीवित रक्खा, यद्यपि नेतृत्व न होने के कारण आन्दोलन की प्रगति रुक गई। १९०९ मे बम्बई के मजदूरों ने फिर एक बहुत बडी सभा कर के मिल मालिकों की कुछ अनुचित कार्यवाहियों की

निन्दा की और कानून द्वारा पुरुषों के काम के घन्टों को निश्चित कर देने की मांग का समर्थन किया।

१९१९ में बम्बई के मजदूरों का दूसरा संगठन स्थापित हुआ। इस संघ का नाम "कामगार हितवर्धक सभा" था। इस सभा ने भारत सरकार को एक मैमोरियल भेज कर पुरुषों के लिए १२ घन्टे का दिन, चोट लगने या मर जाने पर क्षति पूर्ति, बालको के लिए शिक्षा का प्रबन्ध और रहने के लिए अच्छे मकानो की मांग रक्खी, इस सभा ने "कामगार समाचार' नाम से एक साप्ताहिक पत्र भी निकाला। यह सभा आज भी सफलता पूर्वक कार्य कर रही है।

शर्तबन्द कुली प्रथा का समाप्त होना

१८३४ में हब्शियो को दास बना कर ब्रिटिश उपनिवेशो में काम लेने की प्रथा का अन्त हो गया और निग्रो जाति के लोग दासता से मुक्त कर दिये गए। अस्तु, उन उपनिवेशो की उन्नति के लिए कुलियों की आवश्यकता हुई और भारत मे शर्तबन्द कुलियों को भरती करके वहा ले जाया जाने लगा। मारिशस, ट्रिनीडाड, जमैका, नैटाल, दक्षिणी अफ्रीका, ब्रिटिश गायना, डच गायना, फिजी, स्ट्रेट सैटिलमेंट और मलाया में भारतीय शर्तबंद कुली भेजे जाने लगे।

शर्तबंद कुली प्रथा के अन्तर्गत जहा किसी अपढ और निर्धन भारतीय ने अपने को भरती करवाया, उसको विदेशों में जाने के लिए विवश होना पडता था। भरती करने वाले उन्हे धोखा देकर अंगूठा लगवा लेते थे, फिर उन्हे ज्ञात होता था कि पांच वर्षों के लिए उन्हे विदेशों में काम करने के लिए जाना होगा। विदेशों में इन शर्तबंद मजदूरो की दशा अत्यन्त शोचनीय होती थी। उनके साथ ऐसा बुरा व्यवहार किया जाता था कि जिससे अपमान भी अपमानित होता और लज्जा को भी लज्जा लगती थी। उनका जीवन दासो से भी गया-बीता था। मालिक दासो के साथ अच्छा व्यवहार करता था, क्योंकि वह उसकी सम्पत्ति होता था और मर

जाने से उसकी हानि होती थी, किन्तु शर्तबंद कुलियों के शीघ्र मर जाने से उनकी कोई आर्थिक हानि तो होती नहीं थी, अस्तु, उन्हें रहने के लिए अत्यन्त गंदे स्थान दिये जाते थे। उनका वेतन इतना कम होता था कि वे कभी कुछ बचा ही नही सकते थे। उन्हें कोड़ों से मारा जाता और बिना किसी विशेष कारण के मालिक की इच्छा पर जेल मे भेज दिया जाता था। कुलियों का सामाजिक जीवन भी अत्यन्त पतित होता था। कुली प्रथा के नियम के अनुसार १०० पुरुषों के पीछे केवल ४० स्त्रियां भरती की जाती थीं, अस्तु, उनका नैतिक पतन होना अवश्यम्भावी था। इन उपनिवेशों में कुलियों का जीवन ऐसा दुखी रहता था कि बहुत से उस से छुटकारा पाने के लिए आत्महत्या कर लेते थे

यों तो सभी उपनिवेशों मे भारतीयों की दशा दयनीय थी, किन्तु दक्षिण अफ्रीका मे कुछ ऐसी समस्याये उठ खड़ी हुई, जिनसे भारत में बहुत असंतोप और क्षोभ उत्पन्न हुआ और उपनिवेशों मे भारतीयों की गिरी हुई दशा प्रकाश में आगई। जब भारतीयों के परिश्रम से दक्षिण अफ्रीका का उपनिवेश गोरों के रहने योग्य हो गया तो गोरों ने भारतीयों को वहां से हटा देने का निश्चय किया और क्रमशः भारतीयों के विरुद्ध नये-नये कानून बनना आरम्भ हो गए। महात्मा गांधी के नेतृत्व में वहां सत्याग्रह आन्दोलन छिड़ा। इस आन्दोलन के फलस्वरुप उपनिवेशों में रहने वाले भारतीयों के प्रति भारत की जनता मे गहरी सहानुभूति उत्पन्न हुई और शर्तबंद कुली प्रथा को समाप्त कर देने के लिए यहां आन्दोलन होने लगा। अन्त मे १९१७ मे यह प्रथा समाप्त हो गई।

योरोपीय महायुद्ध और मजदूर संगठन

यह तो हम पहले ही कह चुके है कि मज़दूरों का पहला संघ १८९० मे स्थापित हुआ और १९१० में कामगार हितवर्धक सभा बनी। इसी समय कुछ भारतीयों ने जो इंग्लैंड मे रहते थे और उनके अंग्रेज मित्रों ने जो कि भारतीय मज़दूरों की समस्या में रुचि रखते थे, भारतीय

मजदूर हितैषिणी लीग (Indian workers welfare league)१९११ मे स्थापित की। किन्तु इन मजदूर सभाओ का मजदूरों पर विशेष प्रभाव नही पडा, क्योकि भारतीय मजदूर अपनी छिपी हुई शक्ति और अपने वास्तविक हितो से अनभिज्ञ थे. मिल-मालिको की ओर उनकी भावना "माँ बाप" की थी।

किन्तु योरोपीय महायुद्ध (१९१४–१९१९) ने इस भावना मे क्रान्तिकारी परिवर्तन ला दिया। महायुद्ध के फलस्वरूप रहन-सहन बहुत खर्चीला हो गया, किन्तु मजदूरी उस अनुपात में नही बढी। युद्ध के समय भारतीय मिलो को कल्पनातीत लाभ हुआ और औद्योगिक उन्नति तेजी से हुई। मिल मालिकों मे बहुत एकता और संगठन था, इस कारण मजदूरो की दशा और भी दयनीय हो गई। परन्तु युद्ध के कारण देश में औद्योगिक, राजनैतिक तथा सामाजिक उथल-पुथल हुई और भारतीय मजदूर जाग पडा। जीवन की आवश्यक वस्तुओ के अत्यन्त मंहगे हो जाने और मजदूरी के अधिक न बढने से मजदूर क्षुब्ध हो उठा। ऊपर से गरीब मजदूर और किसानो से लडाई के लिए जबरदस्ती चंदा लिया जाता था, फौजो मे भरती भी दबाव के कारण होती थी, इससे भारतीय जनता क्षुब्ध थी ही। उधर महात्मा गांधी के नेतृत्व में कांग्रेस ने असहयोग आन्दोलन छेड दिया। ब्रिटिश सरकार का दमन, जलियावाला बाग का गोली-काण्ड इत्यादि कुछ घटनायें ऐसी हुई कि भारतीय लोग अत्यन्त क्षुब्ध हो गये। उधर ब्रिटिश उपनिवेशो में भारतीय मजदूरो के साथ जैसा बुरा व्यवहार किया जा रहा था, उससे भारतवासी बहुत रुष्ट थे ही। अस्तु, भारत का मजदूर उग्र होता जा रहा था। उधर रूस की बोलशैविक क्रान्ति ने तो संसार भर के मजदूरो मे नवीन उत्साह का संचार कर दिया। युद्ध के समाप्त होने पर जो सैनिक हटाये गए, वे कारखानो इत्यादि मे काम करने गये। वहा की दशा और पश्चिमी देशो के मजदूरो की दशा की तुलना करने पर उन्हे आकाश-पाताल का अन्तर दिखा। वे अपने साथ जो विदेशों से नया ज्ञान और नये विचार लाये थे, उन्होने अन्य साथी मजदूरों में भर दिये।

इसके अतिरिक्त योरोपीय महायुद्ध के उपरान्त भारतवर्ष मे राष्ट्रीय आन्दोलन के साथ-साथ राजनैतिक कार्यकर्त्ताओं का ध्यान मजदूरों की ओर भी गया और उन्हे शिक्षित-वर्ग का नेतृत्व प्राप्त हो गया। विशेषकर कम्युनिस्ट पार्टी जो कि बाद को भारत मे भी काम करने लगी और संगठित हुई उसने मजदूरों को सगठित करने का विशेष रूप मे कार्य किया।

इन सब कारणों से युद्ध के उपरान्त देश में ऐसी परिस्थिति उत्पन्न हो गई कि मजदूरों का संगठन किया जा सके। यही नहीं, जिन कठिनाइयों का भारतीय मजदूर उस समय सामना कर रहे थे, उसका केवल एक ही उपाय था और वह था– उनका संगठन। अस्तु १९१८ के उपरांत देश मे मजदूर सभाओं का तेजी से संगठन हुआ।

सबसे पहली औद्योगिक ट्रेड यूनियन (मजदूर-सभा) २७ एप्रिल १९१८ में मद्रास के सूती कपडे के कारखानो के मजदूरों की स्थापित हुई। इसकी स्थापना श्री बी. पी. वाडिया ने की। १९१९ में मदरास प्रांत में चार ट्रेड यूनियनें काम कर रहीं थी, जिनके सदस्यो की संख्या २० हजार थी।

मद्रास से यह संगठन की लहर अन्य प्रान्तों में फैली और देखते-देखते बम्बई, कलकत्ता, अहमदाबाद तथा अन्य औद्योगिक केन्द्रों मे मजदूर सभायें तेजी से स्थापित हो गई। कुछ ही दिनों मे देश के प्रत्येक धंधे मे मजदूरों का सगठन हो गया।

इस नव चैतन्य का एक दूसरा फल यह हुआ कि भारतीय मजदूर विद्रोही हो उठा और सारे देश मे मालिक और मजदूरो का संघर्ष छिड़ गया। मजदूर उग्र हो गया और उसकी मालिक के प्रति 'मां-बाप' की भावना तिरोहित हो गई।

जहां हड़तालों के रूप मे मजदूरों का मालिकों से संघर्ष चल रहा था, वहां कुछ रचनात्मक कार्य भी हुआ। दिसम्बर १९१९ में बम्बई में मजदूरों का एक सम्मेलन हुआ, जिसमें बम्बई की ७५ मिलो के मजदूर

उपस्थित थे। उस सम्मेलन ने एक मैमोरेंडम तैयार किया, जिसमे काम के घंटो को घटाने, विश्राम के समय को बढाने और मजदूरों के बच्चों के लिए अनिवार्य शिक्षा की मांग की गई थी।

इससे भी अधिक महत्वपूर्ण कार्य अहमदाबाद में हुआ। २५ और २६ फरवरी १६२० को महात्मा गांधी ने क्रमश कत्तियों और बुनकरों की यूनियन स्थापित की। आगे चल कर महात्मा गांधी ने अन्य सभी विभागो मे काम करने वाले मजदूरों की प्रथम यूनियन स्थापित कर दी और अहमदाबाद के सूती कपडे के कारखानो के मजदूरो का एक बहुत सबल संगठन खडा हो गया।

मजदूर सभाओं का संघ

जब कि भारत मे औद्योगिक ट्रेड यूनियनें स्थापित हो रही थीं उसी समय उनमे एक केन्द्रीय संगठन मे सम्बद्ध होने की प्रवृत्ति आरम्भ हो गई। इसका कारण यह था कि सभी यूनियनों के नेतृत्व करने वाले एक ही व्यक्ति थे। इसके अतिरिक्त मजदूरो के नेताओं ने यह भी समझ लिया था कि जब मजदूरो में एकता न होगी, उनका लक्ष्य पूरा नही हो सकता। अस्तु, आरम्भ मे जिन औद्योगिक केन्द्रो मे एक से अधिक यूनियन स्थापित हुई थीं, वहाँ स्थानीय संघ स्थापित हो गए। उदाहरण के लिए मद्रास मे सेंट्रल लेबर बोर्ड, तथा बम्बई मे बम्बई सेंट्रल लेबर बोर्ड, तथा बम्बई सेंट्रल लेबर फेडरेशन स्थापित हुए। आगे चल कर प्रांतीय तथा अखिल भारतीय संघ की भी स्थापना हुई।

भारतीय अदालतें और ट्रेड यूनियन

यह तो हम पहले ही कह चुके है कि योरोपीय महायुद्ध के उपरान्त भारतीय मजदूर की मनोवृत्ति अत्यन्त उग्र हो गई और आये दिन मिल मालिकों तथा मजदूरों में संघर्ष होने लगे। शिक्षित वर्ग का नेतृत्व और सहयोग पाने के कारण मजदूरो का संगठन दृढ़ होता जा रहा था। मिल मालिक इसको सहन नहीं कर सकते थे। वे मजदूरों के इस संगठन और

आन्दोलन को धक्का देकर नष्ट कर देना चाहते थे और उन्हे अवसर भी शीघ्र मिल गया। मद्रास की बकिंघम मिल्स के मजदूरों और मालिकों में झगड़ा उठ खड़ा हुआ, जिसके फलस्वरूप हड़ताल और द्वारावरोध (Lock out) हुआ। कम्पनी ने श्री बी. पी. वाडिया तथा अन्य मजदूर सभा के नेताओं के विरुद्ध हाई कोर्ट मे हर्जाने का दावा कर दिया। मद्रास की हाई कोर्ट ने मजदूर नेताओं पर ७००० पौंड और मुकदमें के खर्चे की डिगरी करदी और मजदूर नेताओं को भविष्य मे इस प्रकार की हड़ताल इत्यादि न कराने की आज्ञा दे दी। कम्पनी मजदूर नेताओं से इस शर्त पर हर्जाना वसूल न करने पर तैयार हुई कि श्री वाडिया भविष्य मे मजदूर आन्दोलन से कोई भी सम्बन्ध न रक्खेगे। श्री वाडिया ने इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया और मालिकों के हाथ में ट्रेड यूनियन के विरुद्ध एक अत्यन्त कारगर अस्त्र आ गया।

इस अदालती आदेश का भारतीय मजदूर नेताओ और विशेष कर ब्रिटेन की लेबर पार्टी ने विरोध किया। ब्रिटेन की ट्रेड यूनियन कांग्रेस की पार्लियामेटरी कमेटी का एक शिष्ट-मंडल तत्कालीन भारत-मंत्री से मिला और उन्हे भारतीय मजदूर आन्दोलन की इस कानूनी कठिनाई से अवगत कराया। भारत-मंत्री ने आश्वासन दिया कि भारत-सरकार शीघ्र ही मजदूर-आन्दोलन की इस कठिनाई को दूर कर देगी। इन्ही पयत्नों के फलस्वरूप १९२६ में ट्रेड यूनियन एक्ट पास हुआ (देखो परिच्छेद पांचवाॅ) जिसके अन्तर्गत रजिस्टर होने पर मजदूर सभाओं को हडताल कराने का अधिकार मिल गया।

अखिल भारतीय ट्रेड यूनियन कांग्रेस

इन सब कठिनाइयों के रहते हुए भी मजदूर आन्दोलन लगातार आगे बढता चला जा रहा था। १९२० मे उसका स्वरूप अखिल भारतीय हो गया और उस वर्ष बम्बई मे स्वर्गीय लाला लाजपतराय की

अध्यक्षता में प्रथम अखिल भारतीय ट्रेड यूनियन कांग्रेस का अधिवेशन हुआ। उस अधिवेशन में एक स्थायी समिति बना दी गई जो कि कांग्रेस का उस समय तक काम सभाले जब तक कि कांग्रेस का विधान न तैयार हो जाय। अधिवेशन में घंटो को कम करने, मजदूरी में वृद्धि करने, अच्छे मकानो, औषधि तथा चिकित्सा की सुविधा देने तथा बुढापे और बच्चा पैदा होने पर कुछ अलाउन्स देने के सम्बन्ध में विचार हुआ और प्रस्ताव पास हुए। इस कांग्रेस मे इंगलैंड की ट्रेड यूनियन और ब्रिटिश लेबर पार्टी की ओर से श्री वेजवुड महोदय प्रतिनिधि हो कर आये थे। वास्तव मे भारतीय मजदूर आन्दोलन १९२० में उस स्थिति मे नही था कि उसको एक अखिल भारतीय रूप दिया जाता, किन्तु मजदूर आन्दोलन को एक मच चाहिए था और अन्तर्राष्ट्रीय मजदूर सघ मे मजदूरो के प्रतिनिधियो को भेजने के लिए भी एक केन्द्रीय सस्था की आवश्यकता थी।

ट्रेड यूनियन कांग्रेस का दूसरा अधिवेशन झरिया मे ३० नवम्बर १९२१ से २ दिसम्बर १९२१ तक हुआ। उस अधिवेशन में १०,००० प्रतिनिधि आये थे, जो १०० ट्रेड यूनियनों का प्रतिनिधित्व करते थे। प्रतिनिधि सभी प्रान्तो से आये थे। श्री जोसेफ बैपटिस्टा इस अधिवेशन के सभापति थे। अधिकतर वाद-विवाद काम के घन्टों, मजदूरी, हडतालो तथा मालिक और मजदूरो के संघर्ष के समझौते के तरीको पर हुआ। एक प्रस्ताव रूस के दुर्भिक्ष के सम्बन्ध मे रूस से सहानुभूति प्रदर्शित करने का भी पास हुआ। एक दूसरे प्रस्ताव से ट्रेड यूनियन कांग्रेस ने संसार के मजदूरों से यह आशा प्रकट की कि भविष्य में वह युध्द नही होने देगे। इस अधिवेशन मे कांग्रेस का विधान स्वीकृत हुआ।

कांग्रेस की एक कार्यकारिणी कौंसिल (एक्जीक्यूटिव कौन्सिल) है। इसके अतिरिक्त उनके कार्य को सगठित रूप से आगे बढाने के लिए प्रान्तीय कौन्सिले हैं। एक्जीक्यूटिव कौन्सिल मे सभापति, उप

सभापति, कोषाध्यक्ष, प्रधान मंत्री तथा सहायक मन्त्री पदेन एक्जीक्यूटिव कौन्सिल के सदस्य होते है। इनके अतिरिक्त दस और सदस्य हो सकते है । जिसमें ट्रेड यूनियन कांग्रेस का भूतपूर्व सभापति जो वार्षिक अधिवेशन पर चुना जावे और सम्बन्धित यूनियनों के प्रतिनिधि जो निम्न लिखित आधारों पर चुने जाते है ।

एक प्रतिनिधि उन यूनियनों का होता है जिनके १००० सदस्य होते है ।

दो सदस्य उन यूनियनों के होते है जिनके सदस्य १००० से ३००० तक होते है ।

तीन सदस्य उन यूनियनों के होते है जिनके सदस्य ४००० से ५००० के बीच मे होते है ।

४ प्रतिनिधि उन यूनियनों के होते है जिनके सदस्य ५००० से ऊपर होते है।

जो यूनियन कांग्रेस से सम्बन्धित होती है उन्हे अपने नियमों के अनुसार अपने कार्य को करने की पूरी स्वतंत्रता होती है। प्रत्येक यूनियन को कांग्रेस से सम्बन्धित होने के लिए फीस देनी पडती है । छोटी यूनियनों को १० रुपये और बडी यूनियनों को ५० रु फीस देनी पडती है। जब कोई यूनियन आवश्यक फीस दे और कांग्रेस का विधान और नियम इत्यादि स्वीकार कर ले तब वह कांग्रेस से सम्बधित हो सकती है। कांग्रेस का उद्देश्य भारत के सभी धन्धों और पेशों तथा सभी प्रान्तों के मजदूरों के कामों को एक सूत्र मे बांधना है और संसार के किसी भी ऐसे संगठन से वह अपना सम्बन्ध जोड सकती है जिसका उद्देश्य मजदूरों का हितवर्धन हो। यह तो हम पहले ही कह चुके हैं कि प्रत्येक यूनियन को अपने कार्य मे स्वतंत्रता प्रदान कर दी गई, किन्तु यदि कोई यूनियन हडताल करे और कांग्रेस से आर्थिक सहायता चाहे तो वह उसी दशा में दी जा सकती है जब कि हड़ताल कांग्रेस के लिये

एक्जीक्यूटिव कौन्सिल की आज्ञा प्राप्त कर ली गई हो। किन्तु व्यवहार मे इस नियम को लागू नहीं किया जाता है। कुछ प्रांतो में कांग्रेस की प्रान्तीय कमेटियां स्थापित की गई जो कि कांग्रेस की कार्य-कारिणी समिति की देख-रेख में कांग्रेस के उद्देश्यों का प्रचार करती है।

ट्रेड यूनियन कांग्रेस के अतिरिक्त रेलवे यूनियनो ने मिल कर अपना एक केन्द्रीय संगठन "अखिल भारतीय रेलवे मैंनस् फैडरेशन" स्थापित किया। १६२५ मे इस केन्द्रीय संगठन की स्थापना हुई और लगभग सभी रेलवे यूनियने उससे सम्बन्धित हो गईं। रेलवे मैन्स फेडरेशन भारत का एक प्रबल और प्रमुख मजदूर संघ है। रेलवे बोर्ड ने भी उसको स्वीकार कर लिया है और प्रत्येक ६ महीने के उपरान्त रेलवे बोर्ड फैडरेशन के प्रतिनिधियो को बुला कर मजदूरो से सम्बन्धित प्रश्नो पर बातचीत करता है और रेलवे मे काम करने वाले मजदूरो की मजदूरी तथा अन्य समस्याओ पर निर्णय किये जाते हैं।

१६२४ के उपरान्त भारत मे मजदूर आन्दोलन के अन्तर्गत कम्युनिस्टो का प्रभाव बढने लगा। कम्युनिस्टों के प्रभाव का परिणाम यह हुआ कि भारतीय मजदूर में तीव्र वर्ग चैतन्य उदय हुआ और मजदूर आन्दोलन मे उग्रता आ गई। क्रमश लम्बी हडताले होने लगी। सरकार की ओर से दमन होने लगा और मजदूरों में कटुता उत्पन्न हो गई। सरकार के दमन का प्रभाव यह हुआ कि कम्युनिस्टो का मजदूरो पर प्रभाव बढता गया। सरकार ने सर्व प्रथम कम्युनिस्ट आन्दोलन की ओर १६२४ मे ध्यान दिया और उनके प्रभाव को नष्ट करने के लिए कानपुर मे वाम पक्षीय मजदूर कार्य कर्त्ताओ को पकड कर सरकार ने उन पर एक षडयंत्र का मुकदमा चलाया। इसका परिणाम यह हुआ कि थोडे समय के लिए कम्युनिस्ट पार्टी को इससे धक्का लगा किन्तु उनका प्रभाव बढता ही गया। बात यह थी कि बहुत से मिल मालिक साधारण मजदूर सभाओं के कार्यकर्त्ताओ की बात नही सुनते थे

किन्तु जब कम्युनिस्ट लोग अपने प्रचार के द्वारा मजदूरों मे कटुता उत्पन्न करते और उन्हें अत्यन्त उग्र बना देते तब जाकर वे झुक जाते थे। इसका परिणाम यह हुआ कि बम्बई इत्यादि स्थानों में कम्युनिस्टो का मजदूरों पर बहुत प्रभाव बढ गया।

१९२५ मे योरोप से और विशेष कर इगलैंड की कम्युनिस्ट पार्टी के कुछ कार्यकर्त्ता भारत मे आये और उन्होंने यहाँ के औद्योगिक केन्द्रो से अपना सम्बंध स्थापित किया। इसका परिणाम यह हुआ कि भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी को और अधिक बल मिला। यही नहीं प्रान्तीय सरकारों ने जब १९२४ के उपरान्त कम्युनिस्टो के विरुद्ध दमन नीति को अपनाया और कम्युनिस्टो को कम्युनिस्ट पार्टी के रूप मे कार्य करना कठिन हो गया तो उन्होंने ट्रेड यूनियनों मे घुस कर उनके द्वारा कार्य करना आरम्भ कर दिया। १९२७ मे उन्होंने एक मजदूर किसान पार्टी स्थापित की। इस पार्टी का उद्देश्य नये मजदूर संघो को स्थापित करना और जो मजदूर सभाये सुधारवादी मजदूर नेताओं के हाथ में थी उन्हे उनके प्रभाव से निकालना था। कम्युनिस्टो ने इसी वर्ष बम्बई मे "गिरनी कामगार यूनियन" नामक ट्रेड यूनियन स्थापित की और देखते-देखते वह एक प्रबल संगठन बन गया। इसमें सदेह नहीं कि उस समय बम्बई के मजदूरों पर कम्युनिस्टों का विशेष प्रभाव था। जब वहां ६ महीने की लम्बी हड़ताल हुई, तो उसका नेतृत्व कम्युनिस्टो ने ही किया था। कम्युनिस्टो के पास यथेष्ट धन भी था क्योंकि उन्हे विदेशों से भी सहायता मिलती थी।

दल के सुधारवादी मजदूर नेताओ की प्रवृत्ति सरकार से भिक्षा मान कर मजदूरों के लिये कुछ सुविधाएं प्राप्त करने की थी। वे संघर्ष से बचते थे। इस कारण कम्युनिस्टों के लिए मजदूरो पर अपना प्रभाव स्थापित कर लेना बहुत सरल था।

बम्बई के उपरान्त उन्होंने अपना ध्यान बगाल की ओर फेरा और कलकत्ते मे एक प्रचार केन्द्र स्थापित किया। उनका प्रभाव क्रमश बढ रहा था। मजदूर उस समय बहुत ही क्षुब्ध थे, प्रत्येक केन्द्र में मजदूरो और मालिको के बीच संघर्ष था। उन्होने इस परिस्थिति का लाभ उठा कर लम्बी हडतालें करवाई और उसके फल स्वरूप उनका प्रभाव और भी बढा। अब उन्होने ट्रेड यूनियन कांग्रेस को हथियाने की योजना तैयार की। स्वर्गीय श्री सकलतवाला इंगलैंड की कम्युनिस्ट पार्टी के प्रमुख कार्यकर्त्ता १९२७ की मार्च मे देहली के ट्रेड यूनियन कांग्रेस अधिवेशन मे सम्मिलित हुए। उनकी उपस्थिति का लाभ उठा कर कम्युनिस्टो ने अपने को अधिक सुसंगठित तथा बलशाली बना लिया। इसके उपरान्त १९२८ के मार्च से देहली के ट्रेड यूनियन कांग्रेस मे वे एक प्रथक समूह के रूप मे प्रकट हुए। अब उन्होने अपने सिद्धांतों, कार्यक्रम तथा नीति को कॉंग्रेस द्वारा स्वीकार कराने का प्रयत्न आरम्भ कर दिया।

इस समय भारतवर्ष मे घोर राजनैतिक अशान्ति थी। सायमन कमीशन का बहिष्कार किया जा रहा था। स्वर्गीय श्री मोतीलाल नेहरू की अध्यक्षता में एक सर्व दल सम्मेलन किया गया था जिसमे भारत का भावी शासन विधान तैयार किया गया जो सभी दलो को मान्य था। कम्युनिस्ट भी उस सम्मेलन मे एक दल के रूप में सम्मिलित हुए थे और उन्होंने अपने कार्यक्रम तथा नीति के समर्थन मे खूब ही प्रचार किया। प. जवाहरलाल नेहरू इस समय योरोप से लौट कर आये थे। उनकी विचारधारा समाजवादी थी। वे राष्ट्रीय महासभा के केवल

प्रधान मंत्री ही नहीं थे वरन भारत में समाजवादी विचार धारा के पोषक भी थे। अस्तु, उनके प्रभाव का भी कम्युनिस्टों ने लाभ उठाया। दिसम्बर १६२८ में जब ट्रेड यूनियन कांग्रेस का झरिया में अधिवेशन हुआ तो पं जवाहरलाल नेहरू भी कुछ समय के लिए अधिवेशन में गए। अगले वर्ष के लिए पं जवाहरलालजी को ट्रेड यूनियन कांग्रेस का सभापति चुन लिया गया।

कम्युनिस्टो के बढते हुए प्रभाव को देख कर भारत सरकार चौकन्नी हुई और प्रसिद्ध मेरठ षडयंत्र केस में प्रमुख कम्युनिस्ट कार्यकर्ताओं पर मुकदमें चलाये गए। १६२६ मे बम्बई में फिर आम हड़ताल हुई। गिरनी कामगार यूनियन के नेताओ ने मजदूरो को अपने जोशीले भाषणों से उभार दिया। मज़दूरों को दमन का सामना करना पडा और क्रमशः मज़दूरो का उत्साह मंद पड गया।

१६२६ के दिसम्बर मे नागपुर में ट्रेड यूनियन कांग्रेस का अधिवेशन पं. जवाहरलाल नेहरू के सभापतित्व में हुआ। इस अधिवेशन में ट्रेड यूनियन कांग्रेस के दक्षिण पक्ष तथा वाम पक्ष मे तीव्र मतभेद और संघर्ष उपस्थित हो गया।

उसी समय भारत सरकार ने मजदूरों की दशा की जाच कराने के लिए लेबर कमीशन की नियुक्ति की थी। ट्रेड यूनियन कांग्रेस के अधिवेशन में इस बात को लेकर घोर मतभेद था कि ट्रेड यूनियन कांग्रेस लेबर कमीशन का बहिष्कार करे या नहीं। दक्षिण पक्षीय नेता मज़दूर कमीशन के साथ सहयोग करने के पक्ष में थे और वाम पक्षीय कार्यकर्त्ता उसका बहिष्कार करना चाहते थे। कम्युनिस्टों ने ट्रेड यूनियन कांग्रेस की कार्यकारिणी के सामने लेबर कमीशन का बहिष्कार करने, जिनेवा के वार्षिक अन्तर्राष्ट्रीय श्रमजीवी सम्मेलन का बहिष्कार करने तथा ट्रेड यूनियन कांग्रेस का पैन पैसिफिक सैक्टरियेट सानफ्रेंसिस्को तथा मास्को के तृतीय इंटरनेशनल से सम्बंध जोडने और अन्तर्राष्ट्रीय ट्रेड-

यूनियन फैडरेशन का सदस्य बनने के प्रस्ताव रक्खे। कार्यकारिणी ने बहुमत से इन प्रस्तावो को स्वीकार कर लिया। कांग्रेस के खुले हुए अधिवेशन मे इन प्रस्तावो का पास हो जाना निश्चित था, अस्तु, सुधारवादी दक्षिण पक्षीय मजदूर प्रतिनिधियों ने कांग्रेस से प्रथक होकर एक नये अखिल भारतीय सघ को जन्म दिया जिसका नाम "आल इन्डिया फेडरेशन" रक्खा गया। अस्तु, नागपुर अधिवेशन के उपरान्त भारतीय मज़दूर आन्दोलन में फूट और दरार पड गई। इस मतभेद का प्रभाव यह हुआ कि मजदूर आन्दोलन कुछ शक्तिहीन और शिथिल हो गया।

जब मजदूर आन्दोलन में फूट पड गई तो रेलवे फेडरेशन ने दो में से किसी भी अखिल भारतीय संगठन ट्रेड-यूनियन कांग्रेस या लेबर फेडरेशन से अपना सम्बन्ध नहीं रक्खा। अस्तु, रेलवे यूनियने भारतीय सगठन से प्रथक होकर अपनी केन्द्रीय संस्था रेलवे मैनस् फेडरेशन के नेतृत्व में कार्य करने लगी। अगले वर्ष के लिए ट्रेड यूनियन कांग्रेस के सभापति श्री सुभाषचन्द्र बोस चुने गए। किन्तु ट्रेड यूनियन काग्रेस मे फिर भी एकता स्थापित न हो सकी।

श्री दीवान चमनलाल, एन. एम. जोशी, गिरी शिवाराव, एम. सी. जोशी और नायडू के नेतृत्व में इन्डियन लेबर फेडरेशन की स्थापना हुई और १ दिसम्बर १९२९ को नागपुर में दीवान चमनलाल के सभापतित्व में फेडरेशन का अधिवेशन हुआ और उसमे इन सुधारवादी मजदूर नेताओ ने लेबर कमीशन और राऊंड टेबिल सम्मेलन से सहयोग करने का प्रस्ताव स्वीकार किया।

इधर आल इण्डिया ट्रेड यूनियन कांग्रेस मे भी मतभेद उग्र रूप धारण कर रहा था। बात यह थी कि वामपक्षीय मजदूर कार्यकर्त्ताओं मे भी दो दल थे। एक दल तो शुद्ध कम्युनिस्टो का था, जो उन उपायो को काम मे लाना चाहता था कि जो तृतीय इण्टरनेशनल के बतलाये हुए तरीकों से काम करना चाहता था।

किन्तु एक दल उन कार्यकर्त्ताओं का भी था जो श्री एम. एन. राय के नेतृत्व मे उनकी नीति का समर्थन करता था। श्री एम. एन. राय उस समय गुप्त रूप से भारत मे आगए थे और सरकार की दृष्टि से छिप कर रह रहे थे। उनके नेतृत्व मे एक दल ट्रेड-यूनियन कांग्रेस पर अपना आधिपत्य जमाना चाहता था। किन्तु शीघ्र ही श्री एम. एन. राय गिरफ्तार हो गए और उन्हे लम्बे समय के लिए कैद कर दिया गया। अस्तु, एम. एन. राय. के अनुयायियों को अपने नेता के नेतृत्व से वंचित होना पडा। यद्यपि वे छिप कर ही कार्य कर रहे थे फिर भी उनकी गिरफ्तारी से उनके दल को क्षति पहुँची। उधर १९३० में कांग्रेस का आन्दोलन आरम्भ हुआ और उसके परिणाम स्वरूप सारे सार्वजनिक कार्य अस्त-व्यस्त हो गए। और जब १९३१ मे कलकत्ते मे ट्रेड यूनियन कांग्रेस का अधिवेशन हुआ तो वहां कम्यूनिस्ट और रायवादियों मे टक्कर हुई और ट्रेड यूनियन कांग्रेस के फिर दो भाग हो गए और उसमे फिर फूट हो गई।

कलकत्ता के ट्रेड यूनियन कांग्रेस के अधिवेशन मे इस प्रश्न को लेकर झगडा उठ खडा हुआ कि बम्बई की गिरनी कामगार यूनियन के वास्तविक प्रतिनिधि कौन है। दो प्रतिद्वन्दी दल अपने को गिरनी कामगार यूनियन का प्रतिनिधि घोषित करते थे। एक दल के नेता श्री एस. वी. देशपांडे ट्रेड यूनियन कांग्रेस के प्रधान मंत्री थे और दूसरे दल के कांग्रेस के उप प्रधान जी. एल. कन्डालकर थे। उनमे से प्रत्येक दल कांग्रेस की कार्यकारिणी मे बैठने का दावा करता था। अन्त मे इस प्रश्न को एक कमेटी (Credentials Committee) को सौंप दिया गया, जिसने श्री कन्डालकर दल के पक्ष में अपना मत दिया। जब खुले अधिवेशन के पूर्व कांग्रेस की कार्यकारिणी की बैठक हुई तो श्री देशपांडे के दल ने खूब ही शोर मचाना आरम्भ किया और भयंकर लडाई उठ खडी हुई। अस्तु, सभापति महोदय को कार्यकारिणी की मीटिंग तथा खुले अधिवेशन को भी स्थगित करना पडा।

इसके उपरान्त ट्रेड यूनियन कांग्रेस का अधिवेशन ७ जुलाई १९३१ को कलकत्ते मे श्री सुभाषचन्द्र बोस की अध्यक्षता मे हुआ। अधिवेशन मे लगभग ३० प्रस्ताव स्वीकृत हुए उनमें सकलतवाला, तथा गैलाचर को ट्रेड यूनियन कांग्रेस के अधिवेशन मे सम्मिलित होने के लिए भारत सरकार द्वारा पासपोर्ट न दिये जाने की निन्दा की गई, एक प्रस्ताव द्वारा रूस की सरकार को वहां के मजदूरो की दशा को सुधारने के उपलक्ष्य में बधाई दी गई। एक तीसरे प्रस्ताव मे मेरठ षडयंत्र के कैदियो को छोडने की मांग की गई और एक प्रस्ताव के द्वारा मजदूरो से अपने शोषण को रोकने के लिए नीचे लिखी मांगो पर दृढता पूर्वक डटे रहने की अपील की —

(अ) जनता को सारी सत्ता सौंप दी जावे।

(क) भारत के देशी राज्यों और शोषणकर्त्ता जमीदारो को नष्ट कर दिया जावे।

(ख) किसानों को सब प्रकार के शोषण से मुक्त कर दिया जावे, जिससे कि वे सुखी जीवन व्यतीत कर सकें।

(ग) भूमि, खानों, बैंको तथा बिजली–पानी इत्यादि के धन्धो का राष्ट्रीयकरण किया जावे।

(घ) विदेशी सरकार के द्वारा लिया हुआ ऋण अस्वीकार कर दिया जावे।

(ङ) प्रत्येक कुशल मजदूर को ५० रु. न्यूनतम मजदूरी और अकुशल मजदूर को ४० रु. मजदूरी दी जावे। काम के घंटों को घटा कर ४४ प्रति सप्ताह कर दिया जावे। मजदूरो के लिए स्वास्थ्यप्रद परिस्थिति उपस्थित की जावे। बीमारी, बुढापे और बेकारी का बीमा किया जावे।

(च) देश के आर्थिक जीवन का नियन्त्रण मजदूर और किसान करे, जिससे कि देश की स्वतंत्रता का लाभ पूंजीपतियो को न मिल कर मजदूर और किसानों को मिले।

श्री देशपांडे के दल ने जो कांग्रेस से प्रथक हो गया था, अपना एक अलग अधिवेशन कलकत्ते में मटियाबुर्ज में किया। उसमें १० या १२ यूनियनों के प्रतिनिधि सम्मिलित हुए थे। उस अधिवेशन में लेबर कमीशन की रिपोर्ट और गांधी इरविन समझौते का बहिष्कार करने, जैनेवा के अन्तर्राष्ट्रीय मजदूर सघ का बहिष्कार करने तथा देश के किसानों के प्रति सहानुभूति प्रदर्शित करने के प्रस्ताव पास किये गये।

जब कि मजदूर आन्दोलन में इस प्रकार फूट पडी हुई थी उस समय कुछ लोग मजदूरों में फिर से एकता स्थापित करने का प्रयत्न कर रहे थे। रेलवे मैनस् फैडरेशन ने एक एकता सम्मेलन बुलाया और उसके सामने एक कार्यक्रम रक्खा जिसको वास्तव मे श्री एम. एन. राय ने बताया था। यह एकता सम्मेलन बम्बई मे मई १९३१ में हुआ। इस सम्मेलन में ट्रेड यूनियन कांग्रेस के प्रतिनिधि भी बुलाये गये, किन्तु कम्युनिस्ट लोग इसके विरुद्ध थे। उन्होंने एकता सम्मेलन मे सुधारवादी मजदूर नेताओ तथा रायवादी कार्यकर्त्ताओं का घोर विरोध किया। इस एकता सम्मेलन मे एक दल दूसरे दल को गाली देता रहा फिर भी एक उप समिति इस कार्य को आगे बढाने के लिए बना दी गई। बहुत बार प्रयत्न होने पर एकता सम्मेलन का एक अधिवेशन १९३२ की जुलाई मे हुआ जिसमे ट्रेड यूनियन फैडरेशन, रेलवे मैनस् फैडरेशन के प्रतिनिधि तथा कुछ कम्युनिस्ट जो कि बाहर बच गए थे, सम्मिलित हुए थे। उस समय कम्युनिस्ट दल के प्रमुख नेता मेरठ षड्यंत्र केस के फल स्वरुप कैदखाने में थे। इस सम्मेलन मे कुछ ऐसे निर्णय किए गए जिन पर दक्षिण पक्ष तथा वाम पक्ष दोनो ही मिल सकते थे। सम्मेलन ने नीचे लिखे निर्णय किये जिसके आधार पर मजदूरों की एकता स्थापित की जा सकती थी।

(१) ट्रेड यूनियन वर्ग संघर्ष का एक साधन है; अस्तु, उसका मुख्य कार्य उनके अधिकारों और हितों को प्राप्त करना और उसकी रक्षा

करना है। और यद्यपि पूंजीवादी पद्धति में पूंजीपतियों और मजदूरों का समन्वय नहीं किया जा सकता फिर भी इस परिवर्तन काल में पूंजीपतियों से बात-चीत करके मजदूरों के हितों की रक्षा करने का कार्य ट्रेड यूनियन करेगी।

(२) यदि मालिकों से सहयोग करने से लाभ होता हो, तो उसको छोड़ा नहीं जावेगा।

(३) ट्रेड यूनियन आन्दोलन भारत की राजनीतिक स्वतन्त्रता के आन्दोलन में भाग लेगा किन्तु उसका उद्देश्य देश में समाजवादी सरकार स्थापित करना होगा।

(४) ट्रेड यूनियन कांग्रेस समाचार पत्रों की स्वतंत्रता, भाषण की स्वतंत्रता, सभा की स्वतंत्रता तथा संगठन करने की स्वतंत्रता में विश्वास रखती है और उसका समर्थन करती है।

(५) ट्रेड यूनियन कांग्रेस जैनेवा के अन्तर्राष्ट्रीय श्रमजीवी सम्मेलनों में प्रतिनिधि भेजेगी।

(६) मजदूर आन्दोलन के लक्ष्य की प्राप्ति के लिए कांग्रेस शान्तिमय, न्यायपूर्ण तथा प्रजातान्त्रिक ढंग से काम करेगी।

ऊपर दिये हुए निर्णय के आधार पर एक विधान बनाया गया और देहली में ट्रेड यूनियन कांग्रेस तथा ट्रेड यूनियन फैडरेशन का सम्मिलित अधिवेशन हुआ, किन्तु कोई भी दल एकता सम्मेलन के बनाये हुए विधान को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं था। इसका परिणाम यह हुआ कि एप्रिल १९३३ में नेशनल फैडरेशन आफ लेबर नामक संस्था को जन्म दिया गया। ट्रेड यूनियन फैडरेशन ने अपने कलकत्ता अधिवेशन में एकता सम्मेलन के निर्णय को स्वीकार कर लिया और नेशनल ट्रेड यूनियन फैडरेशन के नाम से नेशनल फैडरेशन आफ लेबर में सम्मिलित हो गई। परन्तु यह प्रयत्न सफल नहीं हुआ और

नेशनल-फैडरेशन आफ लेबर अधिक दिनों नही चल सका । अन्त में दोनों ओर के प्रयत्न सफल हुए और १९३८ मे दोनों पक्षों मे समझौता हो गया और नागपुर मे नेशनल ट्रेड यूनियन फैडरेशन ट्रेड यूनियन कांग्रेस मे सम्मिलित हो गई ।

एक बार फिर ट्रेड यूनियन कांग्रेस के नेतृत्व मे मजदूर एकता स्थापित हो गई । केवल अहमदाबाद लेबर असोसिएशन उससे सबंधित नहीं हुई । समझौते की एक शर्त यह थी कि ट्रेड यूनियन कांग्रेस किसी भी अन्तर्राष्ट्रीय या विदेशी श्रमजीवी सगठन से अपना सम्बन्ध स्थापित नहीं करेगी । किन्तु व्यक्तिगत यूनियनो को विदेशी श्रमजीवी संघों से सम्बन्ध स्थापित करने की स्वतंत्रता दे दी गई है । जहां तक राजनैतिक प्रश्नों तथा हडताल का प्रश्न है यह निश्चय हुआ कि तीन चौथियाई बहुमत होने पर ही कोई निर्णय किया जा सकेगा । परन्तु व्यक्तिगत यूनियने कांग्रस के आदेश को मानने या न मानने के लिये स्वतंत्र है ।

ट्रेड यूनियन कांग्रेस की जनरल कौन्सिल मे प्रत्येक के बराबर प्रतिनिधि (अर्थात ४४) रहेगे । कांग्रेस का विधान नेशनल ट्रेड यूनियन फैडरेशन का ही रहेगा । कांग्रेस का झण्डा लाल होगा किन्तु उसमें हंसिये और हथौडे का चिन्ह नहीं रहेगा ।

बात यह थी कि इस समय मजदूर आन्दोलन मे एकता न होने के कारण मजदूरो की स्थिति अत्यन्त दयनीय थी । मिल मालिक और सरकार का सम्मिलित बल उनके विरुद्ध था और मजदूर अशक्त और असहाय हो रहे थे । ऐसी परिस्थिति मे मजदूर नेताओं को एकता की आवश्यकता प्रतीत हुई । परिस्थितियों ने उन्हे एकता के लिये विवश कर दिया ।

जब मजदूर आन्दोलन मे एकता स्थापित करने के प्रयत्न चल रहे थे, उस समय भारतीय राजनैतिक गगन मे एक और राजनैतिक दल

का उदय हुआ जो कांग्रेस का अंग होते हुए भी देश में समाजवादी व्यवस्था स्थापित करना चाहता था। वह कांग्रेस समाजवादी दल के नाम से प्रसिद्ध हुआ। १६३१ के राष्ट्रीय आन्दोलन मे जब कांग्रेस के कार्यकर्त्ता जेलों मे थे, तो उनमें से बहुत से कांग्रेस की तत्कालीन नीति के खोखलेपन को समझ गए, किन्तु साथ ही उन्होने देखा कि ब्रिटिश साम्राज्यवाद से मोर्चा लेने के लिए कांग्रेस के नेतृत्व मे ही सयुक्त मोर्चा बनाना आवश्यक है। किन्तु ब्रिटिश सरकार के हाथ से सत्ता छीन लेने के उपरान्त देश में समाजवादी व्यवस्था स्थापित करने के लिए जनता को तैयार करना भी आवश्यक था। अस्तु, पटना मे आचार्य नरेन्द्र देव के सभापतित्व में प्रथम कांग्रेस समाजवादी दल का अधिवेशन हुआ और तब से कांग्रेस में कांग्रेस समाजवादी दल एक शक्तिवान वाम पक्षीय दल के रूप में कार्य करने लगा। स्वभावत' कांग्रेस समाजवादी दल का ध्यान मजदूरो की ओर गया और उन्होने मजदूर आन्दोलन में भाग लेना आरम्भ किया। अभी तक कांग्रेस मजदूरो की ओर अधिक ध्यान नहीं देती थी परन्तु कांग्रेस समाजवादियो ने मजदूरो के संगठन के कार्य को हाथ मे लिया और शीघ्र ही बहुत सी यूनियने उनके अधिकार में आगईं। मजदूर आन्दोलन मे एकता स्थापित करने मे कांग्रेस समाजवादी दल का भी विशेष हाथ था।

मजदूर आन्दोलन मे एकता स्थापित होने ही पाई थी कि १६३६ में द्वितीय विश्व व्यापी युद्ध छिड गया और कांग्रेस के नेतृत्व मे फिर राष्ट्रीय आन्दोलन छिडा। कांग्रेस मंत्रिमंडलो ने त्याग पत्र दे दिये और व्यक्तिगत सत्याग्रह आरम्भ हुआ। उस समय भारतीय कम्युनिस्ट इस युद्ध को साम्राज्यवादी युद्ध के नाम से पुकारते थे और प्रत्येक प्रगतिशील व्यक्ति को इसका विरोध करना कर्त्तव्य बतलाते थे। कांग्रेस समाजवादी तो आरम्भ से ही इस युद्ध से भारत का कोई सम्बंध नहीं मानते थे और उन्होने कांग्रेस पर प्रभाव डालना आरम्भ किया कि

वह भारत की स्वतंत्रता का संग्राम छेड़दे। परन्तु श्री एम. एन. राय को इस युद्ध मे अपने और अपने दल (रेडिकल पार्टी) के लिए एक स्वर्ण अवसर दिखलाई दिया। कम्युनिस्ट पार्टी अभी तक गैर कानूनी थी। अधिकांश कम्युनिस्ट कार्यकर्त्ता जेलों में बंद थे, जो बाहर थे वे छिपे हुए कार्य कर रहे थे, कांग्रेस जन भी जेलों मे बंद हो गए और कांग्रेस पर सरकार का दमन अस्त्र काम करने लगा। श्री, एम. एन. राय ने देखा कि राजनैतिक शक्ति अपने हाथ रखने और देश मे अपने दल का प्रभाव बढाने का अवसर उपस्थित हो गया है, अस्तु, उन्होंने ब्रिटिश सरकार से गठ बंधन कर लिया और वे विश्व व्यापी युद्ध को फासिस्ट विरोधी युद्ध कह कर उसका समर्थन करने और देश के प्रति देश-द्रोह करने लगे। ट्रेड यूनियन कांग्रेस मे उनका कोई विशेष प्रभाव न था। अस्तु, उन्होंने इंडियन लेबर फैडरेशन नामक अखिल भारतीय संस्था को जन्म दिया और जो यूनियनें उनके प्रभाव मे थी, उससे संगठित हो गई। सरकार ने लेबर फैडरेशन तथा प्रचार सम्बंधी कार्यों के लिए श्री राय को कल्पनातीत मोटी रकमें देना आरम्भ कर दिया। बात यह थी कि देश के अन्दर ब्रिटिश—साम्राजयवाद के विरुद्ध तीव्र क्षोभ उत्पन्न हो गया था। सरकार को ऐसे व्यक्तियों और समूहो की आवश्यकता थी जो देश द्रोह करके ब्रिटिश साम्राज्यवाद की जड को देश मे जमाये रखने के लिए ब्रिटिश साम्राज्यवाद के एजन्ट का काम कर सकें। कुछ समय उपरान्त जब हिटलर ने सोवियत रूस पर भी आक्रमण कर दिया तो भारतीय कम्युनिस्टों के लिए यह युद्ध एक रात मे ही साम्राज्यवादी युद्ध से बदल कर जनता का युद्ध वन गया और वे सब प्रकार से युद्ध मे सहायता और उसका समर्थन करने लगे। अब रायवादी तथा कम्युनिस्ट कार्यकर्त्ता मजदूरों से हड़ताल न करने और उत्पादन को बढाने के लिए कहते। मजदूरों की दशा इस समय अच्छी न थी परन्तु फिर भी कम्युनिस्ट तथा राय-वादी कार्यकर्त्ता उनको धोखे में रख कर उन्हे युध्द में सहयोग करने के लिए कहते

रहे। केवल अहमदाबाद तथा उन स्थानों पर जहाँ कांग्रस समाजवादी दल का प्रभाव था मजदूर राष्ट्रीय भावना से ओत प्रोत था। इसी समय कांग्रेस ने ९ अगस्त १९४२ का स्वतन्त्रता संग्राम छेड दिया। इस जन क्रान्ति से देश का कोना-कोना भड़क उठा। देश अपनी दासता की बेडियो को काटने का अन्तिम प्रयास कर रहा था किन्तु अहमदाबाद, मदरास, जमशेदपुर इत्यादि स्थानो को छोड कर जहा कांग्रेस या कांग्रेस समाजवादी कार्यकर्त्ताओ का प्रभाव था मजदूरो का इस जन क्रान्ति मे विशेष गौरव पूर्ण भाग नही रहा। कांग्रेस समाजवादी कार्यकर्त्ता जेलो मे ठूंस दिये गए। अस्तु, ट्रेड-यूनियन कांग्रेस का नेतृत्व सर्वथा कम्युनिस्टो के हाथ मे चला गया। एक प्रकार से मजदूर नेताओ ने सरकार से गठबंधन कर लिया और हडताल इत्यादि न करने के लिए प्रयत्न करते रहे।

जब युद्ध के उपरान्त कांग्रेस पर से पाबंदी उठा ली गई और कांग्रेस समाजवादी कार्यकर्त्ता फिर बाहर निकले तो अनायास ही बहुत-सी मजदूर सभाओ पर उनका प्रभाव होगया, क्योकि रायवादी तथा कम्युनिस्ट कार्यकर्त्ता बहुत कुछ मज़दूरो का भी विश्वास खो चुके थे। प्रान्तीय चुनावो मे मज़दूरो की सीटो के लिए कम्युनिस्ट, रायवादी और कांग्रेस उम्मीदवारो में अधिकाश कांग्रेस उम्मीदवार ही चुने गए। पोस्टल हड़ताल, तथा रेलवे हडताल की तैयारी मे कांग्रेस समाजवादियो का विशेष हाथ था। परन्तु प्रान्तो में उत्तरदायी सरकारो की स्थापना के उपरान्त मज़दूरो पर अपना प्रभाव जमाये रखने के लिए सभी दल भरसक प्रयत्न करने लगे। प्रत्येक दल मज़दूरो पर अपना प्रभाव रखना चाहता था।

इसी समय श्री गुलजारीलाल नन्दा ने महात्माजी के आदर्श पर हिन्दुस्तान मजदूर सघ की स्थापना की। बम्बई मे हिन्दुस्तान मज़दूर संघ की स्थापना का उद्देश्य अहमदाबाद मजदूर संघ के आदर्श पर मज़दूरो का संगठन करना है। संघ यह मानता है कि मालिक और मज़-

दूर के हित अन्वत. एक हैं अतः उनके संबन्धों को अधिक अच्छा बनाना और मज़दूरों के हितों की वृद्धि और उनकी रक्षा करना उसका मुख्य कार्य है। हिन्दुस्तान मजदूर संघ के सम्बन्ध में अभी कुछ कह सकना कठिन है परन्तु उसे महात्मा गांधी की सहानुभूति तथा आशीर्वाद प्राप्त है, इससे यह तो स्पष्ट ही है कि वह शीघ्र ही एक शक्तिवान संस्था बन जावेगी।

अहमदाबाद मज़दूर सघ

भारतवर्ष मे अहमदाबाद मज़दूर संघ अपने ढंग की अनोखी और सबसे अधिक महत्वपूर्ण ट्रेड यूनियन है। अतः उसके सम्बन्ध मे यहां विस्तार पूर्वक कुछ लिखना आवश्यक है। मज़दूर कमीशन ने भी अहमदाबाद मज़दूर संघ की मुक्त कंठ से प्रशंसा की है। इस सस्था को जनवरी १९२० मे महात्मा गांधी ने स्थापित किया और बहुत समय कत मज़दूर संघ को महात्माजी का सीधा नेतृत्व प्राप्त था। मज़दूर संघ के अन्तर्गत सात ट्रेड यूनियन हैः—थ्रासल वर्कर्स, फ्रेम कार्ड ब्लो वर्कर्स, बुनकर, ऐंजिन मशीन चलाने वाले, जाबर और मुकद्दम, वाइन्डर और रेपरर्स। प्रत्येक यूनियन की अपनी कार्य कारिणी है। इसके अतिरिक्त एक केन्द्रीय कार्य कारिणी समिति है और साथ ही एक सलाहकार समिति भी है। इन समितियों के अतिरिक्त प्रतिनिधियों की स्थायी समितियां है जो कि संघ के भिन्न-भिन्न कार्यों की देख भाल करती हे और एक प्रतिनिधियों का सम्मिलित बोर्ड है जो कि समस्त धंधों में मजदूरों के हितो की देख भाल करता है। वेतन अदायगी कानून (Payment of wages act) पास होने के पूर्व मजदूर सघ का मिल मालिको से यह समझौता था कि वे मजदूरों के वेतन मे से मजदूर संघ का चंदा काट कर संघ को दे देगे। अहमदाबाद की मिलो के लगभग आधे मजदूर संघ के सदस्य हैं। संघ के मुख्य उद्देश्य नीचे लिखे हैं:-(१) अहमदाबाद की मिलो में काम करने वाले मजदूरों का संगठन करना,

(२) मजदूरो मे संगठन और भाईचारे की भावना भरना, (३) आन्तरिक प्रयत्न से मजदूरो के जीवन और उनके दर्जे को उन्नत करना, (४) उनके लिए उचित मजदूरी काम के घन्टे और अन्य प्रकार की सहायता करना, (५) सदस्यो की कठिनाइयो को दूर कराने का प्रयत्न करना और मालिको और मजदूरों मे झगडा उठ खडा होने पर मजदूरो और मालिकों से बातचीत करके झगडे को निबटाने का प्रयत्न करना और समझौता न होने पर अन्त मे पचो से फैसला करवाना जिससे हडताल करने की आवश्यकता न पडे । (६) यदि हडताल करनी ही पडे, तो उसे शीघ्र ही मजदूरों के हितों की रक्षा करने के उपरान्त समाप्त कर देना और मालिकों के द्वारा द्वारावरोध (Lock-out) न होने देना । (६) मजदूरो के हित की वृद्धि के लिए कानूनो का उपयोग करना । (१०) और अन्त मे सूती वस्त्र व्यवसाय का राष्ट्रीयकरण करना ।

मजदूर संघ के दफ्तर में मजदूरों की शिकायतो को लिखने का प्रबंध है। जिस मिल के सम्बन्ध मे शिकायत होती है उसके अधिकारियो को लिखा जाता है । यदि वे उस शिकायत को दूर नही करते है, तो प्रतिनिधि बोर्ड निर्णय देता है या मंत्री चाहता है तो मिल मालिक ऐसोसियेशन को लिखता है और यदि मिल मालिक ऐसोसियेशन से वह झगडा नही निपटता तो, फिर वह मामला पंचों को दे दिया जाता है ।

महात्मा गाधी स्थायी रूप से पंच बोर्ड मे थे । महात्मा गाधी के महान् व्यक्तित्व के फल स्वरुप बहुत से झगडे तो यो ही निपट जाते थे । महात्मा गाधी के अतिरिक्त कुमारी अनसूया ताराबाई तथा श्री बैंकर महोदय ने अहमदाबाद मजदूर संघ को सबल बनाने तथा अहमदाबाद मे मजदूरो का संगठन करने का प्रशंसनीय कार्य किया है। यह उन्ही दोनो के त्याग और तपस्या का परिणाम है कि अहमदाबाद मे मजदूर इतने अधिक सुसंगठित है ।

यदि पंचायत के फैसले को भी कोई पक्ष नहीं मानता अथवा मिल मालिक किसी झगड़े को पंचों के भी सुपुर्द नहीं करना चाहते तो अन्त में संघ हड़ताल का भी आयोजन करता है। हड़ताल के सम्बंध में मजदूर संघ का नीचे लिखा हुआ नियम है:—

"यदि मालिक किसी झगड़े का पंचों से फैसला करवाने के लिए तैयार नहीं होते अथवा पंच फैसले को मानने से इनकार करते हैं, तो मजदूर संघ का प्रतिनिधि-मंडल (बोर्ड ऑफ रिप्रजैंटेटिवज़) दो तिहाई बहुमत से उस मिल मे हड़ताल करवाने का निश्चय कर सकता है"

यदि प्रतिनिधि मंडल यह अनुभव करे कि स्थिति ऐसी है कि साधारण हड़ताल (General Strike) की जावे तो प्रत्येक मजदूर को मत पत्र (Ballot) दे दिया जावेगा और यदि मत देने वालों के तीन चौथियाई और सारे मजदूरों का दो तिहाई बहुमत हड़ताल के पक्ष मे हो तभी साधारण हड़ताल की जावेगी।

इसके अतिरिक्त मजदूर संघ एक ऐसा कोष भी रखता है (Victimisation fund) जिससे उन मजदूरों को आर्थिक सहायता दी जाती है जो कि संघ का कार्य करने के कारण मिलो मे से निकाल बाहर किये जाते हैं। इस कोष के अतिरिक्त संघ मजदूरो की ओर से उनके चोट इत्यादि लगने अथवा किसी मजदूर के मर जाने पर क्षति पूर्ति कानून के अन्तरगत मालिकों से क्षतिपूर्ति की रकम वसूल करने की सारी जिम्मेदारी अपने ऊपर लेता है और उस रकम को वसूल करके मजदूरों के बैंक में जमा कर देता है। इस बैंक को मजदूर संघ ने मजदूरो मे रुपया बचा कर रखने की भावना को जागृत करने के उद्देश्य से स्थापित किया है। आवश्यकता पडने पर यह बैंक मजदूरों को उचित सूद पर ऋण भी देता है।

मजदूरों की चिकित्सा के लिए एक अच्छा हास्पिटल भी स्थापित किया गया है, जिसमें रोगियों के रहने के लिए वार्ड भी है और स्त्रियों के लिए भी अलग वार्ड हैं जहां जच्चा खाना भी है।

संघ मजदूरो की शिक्षा के लिए दिन के तथा रात्रि के कई स्कूल चलाता है। इसके अतिरिक्त लड़कों के लिए आश्रम और लडकियो के लिए कन्या गृह भी है, जहां लडके और लडकियां रह कर अध्ययन करती है। सब मिला कर संघ २५ से अधिक शिक्षण संस्थाओं को चलाता है।

मजदूर संघ ने मजदूरो के स्वास्थ्य की उन्नति करने के लिए अखाड़ों का प्रबध किया है, इसके अतिरिक्त अन्य खेलों तथा ड्रिल का भी प्रबंध है। साथ ही संघ ने चलते-फिरते पुस्तकालय भी स्थापित कर रक्खे हैं जिनसे मजदूरों का ज्ञान वर्धन होता है।

पिछले दिनो से संघ ने मादक द्रव्यो के विरुद्ध मजदूरो में खूब प्रचार किया और मजदूरों मे शराव तथा ताडी इत्यादि मादक द्रव्यो का सेवन न करने की भावना जागृत की। शराव पीने वालो से इस प्रकार की प्रतिज्ञा कराई जाती है कि वे भविष्य में कभी भी शराब न पियेंगे। जो एक बार शराब अथवा ताडी पीना छोड़ देते है उनकी देख भाल रक्खी जाती है जिससे फिर वे दुर्व्यसन मे न फंस जावे। ताडी और शराब की दूकानो पर स्वयसेवक नियुक्त किये जाते है जो वहाँ जाने वालो के नाम सूची में लिख लेते है। शराब पीने के प्रति रुचि कम उत्पन्न हो उसके लिए भजन मडली इत्यादि का प्रबध किया जाता हे जिससे कि मजदूरो का मनोरजन हो और मजदूरो के लिए शरबत इत्यादि का प्रबध किया जाता है। इस शराव बंदी के आन्दोलन के फल स्वरूप अहमदाबाद के मजदूरो मे शराव की खपत बहुत कम हो गई। सघ के अधिकारियों का कहना है कि मजदूरो मे शराब की खपत पहले से एक चौथियाई रह गई है।

मजदूर संघ ने मजदूरो के रहने के मकानो की एक जाच करवाई जिसके परिणाम स्वरूप यह ज्ञात हुआ कि मजदूर ऐसे गंदे मकानो मे रहते हैं कि जो मनुष्यो के रहने के योग्य नहीं है। अस्तु, सघ ने अहमदाबाद म्युनिसिपैलटी से एक ऋण लेकर कल्याण गाव नामक एक छोटा

सा सुन्दर उपनिवेश बसाया है। प्रत्येक मजदूर को २५ वर्ष तक प्रति मास दस रुपये देना पड़ेंगे और अन्त में वह उस मकान का मालिक हो जावेगा। प्रत्येक क्वार्टर मे तीन कमरे, एक बरांडा और पीछे छोटा-सा उद्यान है और इस उपनिवेश मे पुस्तकालय, स्कूल तथा अस्पताल सभी सुविधायें उपस्थित करदी गई है।

संघ मजदूर संदेश नामक साप्ताहिक पत्र निकालता है जो सदस्यों को बिना मूल्य दिया जाता है।

किन्तु संघ का कार्य केवल आर्थिक ही नहीं रहा है। जब जब महात्मा गांधी के नेतृत्व मे आन्दोलन हुआ है तब-तब संघ ने उस आन्दोलन में सहयोग दिया है।

परन्तु पिछले दिनों से अहमदाबाद मे कम्युनिस्ट कार्यकर्ता संघ की शक्ति कम करने का प्रयत्न करते रहे हैं। यद्यपि वहां कम्युनिस्टो का अधिक प्रभाव नही है फिर भी वे संघ के विरुद्ध प्रचार करते रहते है।

अहमदाबाद मजदूर संघ ने किसी अखिल भारतीय मजदूर संगठन (ट्रेड यूनियन कांग्रेस इत्यादि) से अपना सम्बन्ध स्थापित नहीं किया। दूसरे अभी कुछ समय पूर्व तक (१९३८ के पूर्व) अहमदाबाद मजदूर संघ ने ट्रेड यूनियन एक्ट के अन्तर्गत अपने को रजिस्टर भी नहीं करवाया था। एक बात और भी जिससे कि कम्युनिस्टों को संघ के विरुद्ध प्रचार करने का अवसर मिल गया था। संघ ने मिल मालिकों से यह व्यवस्था करली थी कि जो मजदूर संघ के सदस्य थे उनका मासिक चन्दा मिल मालिक उनकी मजदूरी में से काट कर संघ को दे देते थे। किन्तु वेतन अदायगी कानून के बन जाने के उपरान्त यह प्रथा बन्द कर दी गई। संघ की ये विशेष बातें महात्मा गांधी के आदर्शवाद के कारण हैं। अतएव यह कहना कि संघ वास्तविक अर्थों में ट्रेड यूनियन नहीं है गलत है।

मजदूर सभाओं के संगठन में कठिनाइयाँ

आज देश में भिन्न भिन्न आदर्शों वाले राजनैतिक दल मजदूरों का संगठन करने का प्रयत्न कर रहे हैं। फिर भी अधिकतर मजदूर सभाओं की स्थापना हड़ताल के समय अथवा हड़ताल के पूर्व होती हैं। जब किसी मिल या केन्द्र के मजदूर अपनी दयनीय स्थिति से ऊब कर राजनैतिक कार्यकर्त्ताओं की सहायता मांगते हैं तो मजदूर सभा का जन्म होता है। विधान इत्यादि बनाने में कोई भी कठिनाई नहीं होती। राजनैतिक कार्यकर्त्ता अन्य मजदूर सभाओं के विधान की नकल कर लेते हैं और मजदूर सभा की रजिस्टरी ट्रेड यूनियन रजिस्ट्रार से करवा ली जाती है। कार्यकारिणी समिति में आधे सदस्य वे लोग हो सकते हैं कि जो मजदूर नहीं हैं। अच्छा तो यह हो कि मजदूर सभाओं का संचालन स्वयं मजदूर ही करें, परन्तु भारतवर्ष में अभी बहुत दिनों तक यह स्थिति नहीं आ सकती। क्योंकि एक तो कारखानों में शिक्षित मजदूरों का नितान्त अभाव है, दूसरे यदि कोई मजदूर शिक्षित हो भी तथा मजदूर सभा को संगठित करना चाहे तो किसी न किसी अपराध में वह निकाल दिया जाता है। यदि मजदूर मंत्री तेज, उत्साही और उग्र हुआ तब तो

वह निकाल दिया जाता है और यदि वह स्वभाव से समझौते की प्रवृत्ति वाला हुआ तो क्रमशः वह अपने साथी मजदूरो के विश्वास को खो देता है और उसको यूनियन में अपने पद को त्याग देना पड़ता है, यदि वह चाहता है कि फैक्टरी मे उसकी उन्नति हो। यह परिस्थिति सभी औद्योगिक केन्द्रो में है। मिल मैनेजर यूनियन के मजदूर कार्य-कर्त्ताओं को पदोन्नति का लोभ देते है और इस प्रकार या तो मजदूरों के नेतृत्व को शिथिल कर देते है अथवा उग्र मजदूर नेताओं को निकाल देते है।

मजदूर सभाओं के सामने दूसरी कठिनाई मासिक चन्दा इकट्ठा करने की उपस्थित होती है। दो या चार आना जो भी यूनियन का चन्दा होता हे उसको जमा कराने में बहुत कठिनाई होती है। यदि यूनियन के कार्यालय में चन्दा जमा करने की व्यवस्था की जाती है तब तो मजदूर सदस्य चन्दा नही देते और यदि कुछ सदस्यो को चन्दा जमा करने के लिए नियुक्त किया जाता है, तो कभी-कभी वह कार्यकर्त्ता समय पर रुपया नही देता और पूरा चन्दा कोषाध्यक्ष के पास नही पहुंचता। यदि यूनियन के कार्यकर्त्ता फेक्टरी के अन्दर यूनियन का चदा जमा करते हे, तो बहुधा मिल मालिक उन कार्यकर्त्ताओ के विरुद्ध कार्य-वाही करते हे। केवल अहमदाबाद के मजदूर सघ तथा जमशेदपुर के लोहे तथा स्टील के कारखाने की यूनियन का चन्दा मिल-मालिक मज-दूरो के वेतन में से काट कर यूनियन को दे देते हैं। किन्तु साधारणत· न तो मिल मालिक ही ऐसा करना पसंद करते है और न यूनियन ही इसे पसंद करती हे। मिल-मालिक यह कार्य करके मजदूरों को सगठित होने देना नहीं चाहते और न इसे वे अपना कार्य ही मानते हैं। अस्तु, वे इस झंझट को उठाना नहीं चाहते। यूनियन मिल-मालिकों पर अपने चंदे को इकट्ठा करने का कार्य सौंप कर उनके आश्रित हो जाना पसंद नहीं करती।

परन्तु मजदूरों को संगठित करने में केवल यही कठिनाइयां नहीं हैं। भारतीय मजदूर अशिक्षित है. अतएव उसको संगठित करना बहुत सरल नहीं है। परन्तु यह स्वीकार करना होगा कि भारतीय मजदूर में

नितान्त अशिक्षित होते हुए भी उसने संगठन के महत्व को समझा है और यदि कार्य-कर्त्ता सच्चा और लगन वाला हो तो वह उसके नेतृत्व में संगठित हो जाते है। सबसे बडी कठिनाई जो कि मजदूर कार्य-कर्त्ताओं को यूनियन बनाने के समय करनी पडती है वह है मिल-मालिकों का विरोध। चाहे यूनियन रजिस्टर्ड हो अथवा गैर रजिस्टर्ड मालिक उसको स्वीकार नही करते। कभी-कभी तो यूनियन मे कार्य करने वालो को कारखाने से निकाल दिया जाता है। कुछ कारखानो के मालिक अधिक कूटनीतिज्ञ होते हैं वे यनियन को कुछ शर्तों पर स्वीकार करते है। पहली शर्त तो यह होती है कि यूनियन रजिस्टर करवाली जावे। यह मालिक केवल अपने मजदूरो से ही बात करना स्वीकार करते है बाहर वालो से नही। इसके उपरान्त वे क्रमशः और नये-नये बधनो से यूनियन को बॉधते है। उदाहरण के लिए वे बाहर वालो की सख्या को बहुत कम कर देना चाहते है कभी-कभी यूनियन को स्वीकार करने मे उनकी यह भी शर्त होती है कि यूनियन का कोई विशेष कार्य-कर्त्ता जो कि अत्यन्त उत्साही और उग्र हो उसको कोई पद न दिया जावे और न वह कार्यकारिणी समिति मे ही रक्खा जावे। कभी-कभी तो कारखानो के मालिक यूनियन को स्वीकार करने के लिए यह भी शर्त रखते है कि मीटिंग मे मालिको की आलोचना नही की जावेगी और जब कि किसी बात को लेकर यूनियन और मालिकों की बातचीत चल रही हो तब तक मजदूरो की कठिनाई का सार्वजनिक ढंग से प्रचार नहीं किया जावेगा। इस प्रकार यूनियन यदि मालिको द्वारा स्वीकृत होती है तो वह बहुत कुछ अपनी स्वतंत्रता को खो देती है।

भारतवर्ष मे एक और भी बडी कठिनाई है जिसका सामना आये दिन मजदूर कार्य-कर्त्ताओं को करना पड़ता है। जहा कारखानो के मालिकों ने देखा कि यूनियन सबल होती जा रही है और कार्य-कर्त्ता पर मजदूरो का विश्वास जम रहा है वह उस कार्य-कर्त्ता या यूनियन के प्रमुख कार्यकर्त्ताओं को अच्छी रकम देकर खरीद लेने का प्रयत्न करते

है। यदि कार्य-कर्त्ता सच्चे और ईमानदार हुए और नीचे नहीं गिरे तो मिल-मालिक कुछ चरित्रहीन व्यक्तियों को वेतन देकर अथवा परोक्ष-रूप से आर्थिक सहायता देकर एक दूसरी यूनियन खड़ी करवा देते हैं। इस प्रकार मजदूरों में फूट डलवा कर उन्हे शक्तिहीन बना देना उनका बांये हाथ का खेल है। अधिकतर ऐसा देखने मे आता है कि यह खडे किये हुए मजदूर नेता बहुत अधिक गालियां मिल-मालिकों को देते हैं किन्तु समय पर कभी भी मजदूरो का नेतृत्व नहीं करते।

प्रान्तों में कांग्रेस मन्त्रि मण्डलो की स्थापना के पूव मजदूरो का संगठन करने मे एक कठिनाई यह थी कि मिल-मालिक पुलिस की सहायता से कार्य-कर्त्ताओं को परेशान करते थे और कभी-कभी तो पुलिस उन पर कोई भीषण आरोप लगा कर कैद कर लेती थी। यद्यपि प्रान्तों में कांग्रेस मन्त्री मण्डलों की स्थापना से यह कठिनाई दूर हो गई है परन्तु जिन प्रान्तो मे कॉंग्रेस मंत्रि-मंडल नही है, वहाँ यह कठिनाई अब भी है।

देशी राज्यो मे तो मजदूरों का संगठन करना आज भी कठिनाई और जोखिम का काम है। अधिकतर राज्य के प्रमुख अधिकारी और कहीं-कही तो स्वय महाराजा कारखाने के लाभ में साझीदार होते हैं। वहां मजदूरो मे कार्य करना या मजदूर सभा का संगठन करना, महाराजा के विरुद्ध विद्रोह फैलाने जैसा भयंकर अपराध माना जाता है और कार्य-कर्त्ता शीघ्र ही जेल भेज दिया जाता है।

इतनी कठिनाइयाँ होते हुए भी भारत में मजदूर आन्दोलन प्रबल होता जा रहा है यह सतोप की बात है। यद्यपि आज देश मे मजदूर आन्दोलन यथेष्ट बलशाली हो गया है परन्तु फिर भी वह अन्य औद्योगिक देशो की भाँति प्रबल नही हो पाया है।

मजदूर आन्दोलन की निर्बलता के कारण

यद्यपि आज भारतीय मजदूर आन्दोलन पहले से अधिक सबल

और उग्र है, परन्तु फिर भी वह अभी निर्बल ही है। मजदूर आन्दोलन की निर्बलता के मुख्य कारण नीचे लिखे है —

१. मजदूरों का अशिक्षित होना

अधिकांश मजदूर अशिक्षित है। संगठन के लाभों को वे शीघ्र नहीं समझ पाते और न वे ट्रेड यूनियनों मे पूरा भाग ही ले पाते हैं। अस्तु, मजदूरो मे वर्ग चैतन्य उदय करना और उनमें अनुशासन की भावना भरना सरल नहीं है। कभी-कभी ऐसा होता है कि मजदूर कार्यकर्त्ता उनके हितो को दृष्टि मे रख कर मिल मालिकों से कोई सम्मानजनक समझौता कर लेता है और उसका कोई विरोधी मजदूरो में यह प्रचार करता है कि वह मालिकों से मिल गया है। निर्बोध मजदूर उसके विरोधी की बातों मे आ जाता है।

२. औद्योगिक केन्द्रो मे मजदूरो का एक भाषा-भाषी न होना

भारतीय औद्योगिक केन्द्रो मे जो मजदूर काम करते है, वे एक ही भाषा नहीं बोलते। वे भिन्न-भिन्न भाषाएँ बोलते है और उनका रहन-सहन भिन्न होता है, अतएव उनमें वह एकता उत्पन्न नही हो पाती, जो एक ही भाषा-भाषी जन समूह मे उत्पन्न हो सकती है। यह देखा गया है कि बम्बई अथवा कलकत्ता मे प्रत्येक भाषा के बोलने वाले एक समूह में रहते हैं।

३. औद्योगिक केन्द्रो का बिखरा होना

भारत में औद्योगिक केन्द्र बहुत दूर दूर पर है। इस कारण मजदूर आन्दोलन अधिक सबल नहीं हो पाता। यदि मजदूर बस्तियां पास-पास ही हो, औद्योगिक केन्द्र किसी विशेष क्षेत्र मे हो तो मजदूर आन्दोलन अधिक सुसंगठित हो सकता हे।

४. मजदूरों की निर्धनता

भारतीय मजदूर अत्यन्त निर्धन है। उसके पास इतना भी नहीं

होता कि वह यूनियन का मासिक चंदा दे सके। बिना आर्थिक सहायता के यूनियन सफलता पूर्वक कार्य नहीं कर सकती।

५. मजदूरों का स्थायी रूप से औद्योगिक केन्द्रों में न रहना

यह तो हम पहले ही कह चुके हैं कि भारतीय मजदूर आर्थिक विवशता के कारण औद्योगिक केन्द्र में कार्य करने आता है, किन्तु वह औद्योगिक केन्द्र में स्थायी रूप से रहने की भावना अपने मन में कभी भी पोषित नहीं करता। यद्यपि यह बहुत संभव है कि कोई मजदूर जीवन का अधिकांश समय औद्योगिक केन्द्र में ही व्यतीत कर दे, किन्तु वह मन में उस दिन की उत्कंठा से प्रतीक्षा करता है कि जब वह अपनी चिर पोषित अभिलाषा को पूरा करेगा अर्थात् वह गांव को स्थायी रूप से लौट जावेगा। जब भारतीय मजदूर में यह भावना बराबर बनी रहती है कि उसे औद्योगिक केन्द्र में नहीं रहना है तो फिर वह अपनी यूनियन के कार्यों में उतनी रुचि नहीं दिखलाता जितना कि ब्रिटेन का मजदूर। क्योंकि वह जानता है कि उसे अपना समस्त जीवन और उसकी संतानों का जीवन उसी केन्द्र में व्यतीत करना है। भारतीय मजदूर कारखानों की असुविधाओं और कष्टों को दूर कराने, अपने हितों की रक्षा करने में उतना जागरूक और सतर्क नहीं रहता, जितना कि अन्य देशों का मजदूर होता है।

६. मजदूर आन्दोलन का नेतृत्व योग्य हाथों में न होना

भारतीय मजदूर-आन्दोलन इस कारण भी निर्बल है क्योंकि उसका नेतृत्व योग्य व्यक्तियों के हाथों में नहीं है। लेखक का यह मत कदापि नहीं है कि मजदूर नेता सच्चे और ईमानदार नहीं हैं। उनमें से बहुतों ने मजदूरों के लिए बहुत त्याग किया है। परन्तु फिर भी ऐसे व्यक्तियों की कमी नहीं है, जो अवसरवादी हैं और जो मजदूरों पर अपना प्रभाव जमा कर भारतीय राजनीति में अपना प्रभाव जमाना

चाहते हैं और समय आने पर देश और मजदूरो के प्रति विश्वासघात करते है। उदाहरण के लिए पिछले महायुद्ध (१९३९-४५) में सारा देश ब्रिटिश साम्राज्यवाद के विरुद्ध खडा हो गया। अगस्त १९४२ की क्रांति हुई थी। परन्तु रेडिकल डेमाक्रेटिक पार्टी तथा कम्युनिस्टो ने ब्रिटिश साम्राज्यवाद से समझौता करके मजदूरो को उस क्रांति से अलग ही रखा। मजदूर आन्दोलन मे जो दरार पडी हुई है, उसमे एकता दृष्टिगोचर नहीं होती। वह भी मजदूर आन्दोलन की निर्बलता का कारण है।

मजदूर आन्दोलन के प्रति मालिको का कड़ा रुख

मिल मालिक मजदूर सभाओ को सहन नही करना चाहते। चाय के बागो मे तो मजदूरो की लाइनो पर चाय के बागों के अधिकारी पहरा रखते हैं। कोई भी ऐसा व्यक्ति जो कि बाग़ में नौकर है वहां उनकी अनुमति के बिना रात्रि या दिन में नहीं जा सकता। यही कारण है कि चाय के बागो का मजदूर आज भी बिलकुल असंगठित और शक्तिहीन है। जिन कारखानो ने अपने मजदूरो को रहने के लिए मकान दिये है वे भी 'चालो' और मजदूरो को बस्तियो में चौकीदार नियुक्त कर देते हैं और मजदूरो की चौकसी रक्खी जाती है। यदि मजदूरो मे कार्य करने वाले कार्यकर्त्ता वहां आते है तो उनकी रोक थाम होती है। यही नही जो भी मजदूर यूनियन के कार्य मे उत्साह प्रगट करता है, उसको किसी न किसी वहाने निकाल दिया जाता है। अहमदाबाद मजदूर संघ को भी इस दुर्व्यवहार की बहुत शिकायत है। जो कारखाने कस्बों में हैं वहां तो मालिक का और भी अधिक आतंक रहता है।

सरकार का कठोर व्यवहार

अभी तक प्रान्तीय सरकारो का व्यवहार मजदूर कार्यकर्त्ताओ तथा मजदूरो के विरुद्ध अत्यन्त कठोर था। तनिक-सी बात होने पर मिल

मैनेजर के फ़ोन करते ही पुलिस आ धमकती थी और मजदूरों को आतंकित करने के लिए गिरफ्तारियां, लाठी चार्ज और कभी-कभी गोलियां चलाई जाती थी। ऐसा कभी नहीं हुआ कि पुलिस ने मजदूरों का पक्ष लिया हो। मजदूर कार्यकर्त्ताओं के पीछे जासूस लगे रहते, उनकी डाक सेन्सर होती, उनको आतंकित किया जाता और मजदूरों पर भी इसका बुरा प्रभाव पड़ता था। किन्तु प्रान्तों में उत्तरदायी शासन स्थापित होने पर और बहुत से प्रान्तों में कांग्रेस मंत्रीमंडल स्थापित हो जाने से इस दिशा में यथेष्ट परिवर्तन हुआ। सरकार अब मजदूरों के प्रति सहानुभूति रखती है। किन्तु जिन प्रान्तों में अभी भी प्रतिगामी दलों की सरकार है, वहां मजदूरों की दशा दयनीय है।

मजदूर आन्दोलन में जाति भेद

यद्यपि अभी तक मजदूरों में जाति द्वेष ने पूरी तरह से घर नहीं किया है, परन्तु मिल मालिक, जातीय संगठन इस विष को मजदूरों में फैलाने का प्रयत्न कर रहे हैं। कहीं-कहीं मुस्लिम मजदूर यूनियन स्थापित करने का प्रयत्न किया जाता है और हड़तालों के समय मिल मालिक सवर्ण हिन्दुओं और अछूतों तथा हिन्दू-मुसलमानों में भेद उत्पन्न करने का भरसक प्रयत्न करते हैं। अवश्य ही यदि मजदूर आन्दोलन में यह विष घर कर गया तो आन्दोलन की नींव ही हिल जावेगी। यदि मजदूर कार्य-कर्त्ता मजदूरों को आर्थिक आधार पर संगठित करें तो यह विष मजदूरों में फैल नहीं सकता।

भारतीय ट्रेड यूनियन केवल हड़ताल कमेटी हैं

भारत में मजदूर आन्दोलन की एक निर्बलता यह है कि ट्रेड यूनियन का केवल एक ही कार्य है। वह अधिकांश में हड़ताल कमेटी का काम करती है। बहुधा ट्रेड यूनियन का निर्माण ही हड़ताल चलाने के उद्देश्य से होता है, जब किसी मिल में मजदूरों में मालिकों के कठोर व्यवहार से अथवा मजदूरी की कमी के कारण वातावरण क्षुब्ध हो

उठता है, तो उत्साही कार्यकर्त्ता उनकी यूनियन स्थापित करके मालिकों को नोटिस दे देते हैं और यदि कोई सम्मानपूर्ण समझौता न हुआ तो हड़ताल करदी जाती है। हड़ताल के दिनो में यूनियन क सदस्य बहुत बड़ी सख्या में होते हैं और यूनियन का प्रभाव भी बहुत होता है। यदि हड़ताल सफल हुई तो यूनियन स्थायी बन जाती है, यद्यपि लोगों का उत्साह फिर कम हो जाता है और वह अर्ध सुप्त अवस्था में पहुँच जाती है। यदि दुर्भाग्यवश हड़ताल असफल हो गई तो यूनियन भी समाप्त हो जाती है।

अभी तक जो पुरानी यूनियन हैं वे भी अधिकतर हड़तालों का आयोजन करने तक ही अपने कर्तव्य की इति श्री मानती हैं। अहमदाबाद, बम्बई इत्यादि स्थानो की पुरानी यूनियनो को छोड कर देश मे बहुत कम यूनियने ऐसी हैं, जो मजदूरो की दैनिक समस्याओं को हल करने के लिए रचनात्मक कार्य करती है। हड़ताल तो मजदूर का अन्तिम शस्त्र है। इसके अतिरिक्त मजदूर की शिक्षा, स्वास्थ्य, रहने की समस्या, मनोरंजन, बेकारी, तथा बीमारी में अलाऊंस मिलने की व्यवस्था इत्यादि ऐसी बहुत सी समस्याये है जिनकी ओर ट्रेड यूनियनों को ध्यान देने की आवश्यकता है। जैसे-जैसे मजदूर आन्दोलन मे योग्य नेतृत्व का प्रादुर्भाव हो रहा है; वैसे ही वैसे उनका इन आवश्यक प्रश्नों की ओर ध्यान जा रहा है। आशा है कि भविष्य में ट्रेड-यूनियन रचनात्मक पक्ष को भी उतना ही महत्व देगी जितना महत्व संघर्ष को देती है।

राष्ट्रीय ट्रेड यूनियन कांग्रेस

यह तो हम पहले ही कह चुके है कि मजदूरों के दो अखिल भारतीय संगठन काम कर रहे थे। एक ट्रेड यूनियन कांग्रेस और दूसरा श्री एम. एन राय के अनुयायियों द्वारा संगठित लेबर फैडरेशन, यद्यपि लेबर फैडरेशन का मजदूरो पर कोई विशेष प्रभाव नहीं है। ट्रेड यूनियन कांग्रेस में तीन प्रकार के कार्यकर्त्ता थे कम्युनिस्ट, कांग्रेस समाजवादी, और

गांधी विचारधारा को मानने वाले मजदूर कार्यकर्त्ता जो हिन्दुस्तान मजदूर सेवक संघ की नीति के अनुसार मजदूरों मे कार्य करते थे। युद्ध काल मे कांग्रेस कार्यकर्त्ताओं के जेल में बन्द होने के कारण ट्रेड यूनियन कांग्रेस पर कम्युनिस्टों का प्रभाव बढ गया था। केन्द्रीय कार्यालय उनके हाथ मे होने के कारण कांग्रेस कार्यकर्त्ताओं का उसमें प्रभावशाली होना कठिन था। उनका कम्युनिस्टों पर दोषारोपण यह था कि वे अवास्तविक मजदूर सभाओं को रजिस्टर्ड करके ट्रेड यूनियन कांग्रेस मे अपना बहुमत बनाये रखते है। अस्तु, मई १९४७ में जब सरदार वल्लभभाई पटेल की अध्यक्षता मे हिन्दुस्तान मज़दूर सेवक संघ का वार्षिक अधिवेशन देहली मे हुआ, तो वहां पर ही राष्ट्रीय ट्रेड यूनियन कांग्रेस की स्थापना कर दी गई और हिन्दुस्तान मजदूर सेवक संघ के प्रभाव में जो मजदूर सभायें थीं वे उससे सम्बन्धित हो गईं।

समाजवादी मजदूर कार्यकर्त्ताओं के सामने राष्ट्रीय ट्रेड यूनियन कांग्रेस की स्थापना से एक समस्या खडी हो गई। वे कम्युनिस्टों द्वारा प्रभावित ट्रेड यूनियन कांग्रेस मे तो रह नहीं सकते थे, साथ ही राष्ट्रीय-ट्रेड यूनियन कांग्रेस मे भी उनके लिए रह सकना कठिन था। क्योंकि उनका विचार था कि वल्लभभाई पटेल, श्री गुलजारीलाल नंदा के नेतृत्व में राष्ट्रीय ट्रेड यूनियन वास्तव में मजदूरों के स्वार्थों की रक्षक नहीं बन सकती और न उनके हितों की पूरी रूप से रक्षा ही कर सकती है क्योंकि उस पर सरकार का बहुत प्रभाव रहेगा। सरकारी मंत्रियों के प्रभाव मे पलने वाली राष्ट्रीय ट्रेड यूनियन कांग्रेस देश मे मजदूर और किसान राज्य के लिए युद्ध नहीं कर सकती। अस्तु, समाजवादी दल ने यह निश्चय किया कि वह इन दोनों संगठनों से स्वतंत्र रह कर स्वतंत्र रूप से मजदूर संगठन का कार्य करेगा। उनकी योजना यह है कि पहले प्रत्येक धंधे के संगठित मजदूरों की अखिल भारतीय फैडरेशन स्थापित कर दी जावे और फिर एक स्वतंत्र अखिल भारतीय मजदूर

सगठन अपने नेतृत्व में स्थापित किया जावे।

आज भारतवर्ष के मजदूर आन्दोलन की वाग डोर चार भिन्न राजनैतिक आदर्श वाले दलो के हाथ मे है– कम्युनिस्ट, ट्रेड यूनियन काग्रेस के द्वारा, हिन्दुस्तान मजदूर सेवक सघ, राष्ट्रीय ट्रेड यूनियन काग्रेस के द्वारा, रायवादी, लेबर फेडरेशन के द्वारा और समाजवादी अपने स्वतन्त्र सगठन के द्वारा मजदूरो का संगठन कर रहे है।

दसवां परिच्छेद

मजदूरों और पूंजीपतियों का सम्बन्ध

यह तो हम पहले ही कह चुके है कि भारतवर्ष में आधुनिक ढंग के कारखानो तथा खानो की स्थापना १८६० के उपरान्त हुई थी और अधिकाश मजदूर गावो से आये थे। उस समय तक भारतीय मजदूरों मे वर्ग चैतन्य का उदय नही हुआ था। मालिक को वे मां-बाप समझते थे और उसी भावना से प्रेरित होकर वे अपने कष्टो की पुकार मालिक के सामने करते, प्रार्थना पत्र देते और मालिक जो कुछ भी उन्हे देता उससे संतोष करके उसे धन्यवाद देते थे। कारण यह था कि उन्हे यह पता ही नही था कि उनके कुछ अधिकार भी है और मालिक जो उनके श्रम का लाभ उठा कर अपनी तिजोरिया भर रहा है उससे कुछ प्राप्त करने के लिए प्रार्थना पत्र ही यथेष्ट नही हैं वरन मजदूरों के संगठन की आवश्यकता भी है। संक्षेप में हम कह सकते है कि भारतीय मजदूरो में वर्ग चैतन्य और वर्ग भावना का सर्वथा अभाव था। यही कारण है कि यद्यपि मजदूरो को कारखानो, खानो, और चाय के बागो

में पशुवत् जीवन व्यतीत करना पड़ता था परन्तु फिर भी हड़तालों की हम कोई चर्चा नहीं सुनते। इसका यह अर्थ नहीं है कि भारतीय उद्योग-धंधों के प्रारम्भिक दिनों में मालिकों और मजदूरों में कोई संघर्ष ही नहीं हुआ। कुछ छुट-पुट संघर्ष हुए किन्तु उनका कहीं ठीक विवरण उपलब्ध नहीं है।

सबसे पहली हड़ताल जिसके संबंध में हमें लिखित विवरण प्राप्त होता है गोलाम बाबा स्पिनिंग और वीविंग मिल में १८८२ में हुई। हड़ताल दो दिन तक रही—एक महीने के उपरान्त १६ दिसम्बर से २४ दिसम्बर तक फिर उस मिल में मजदूरों ने हड़ताल करदी। १८८२ और १८६० के बीच में २५ महत्वपूर्ण हड़तालें बम्बई और मद्रास की मिलों में हुईं जिनका लिखित विवरण हमें प्राप्त है। परन्तु छोटी-छोटी हड़तालें बहुधा हुआ करती थीं जिनमें एक या दो दिन कारखाने बन्द रहते और थोड़े से मजदूर भाग लेते थे। बीसवीं शताब्दी के आरम्भ में हड़तालों की संख्या बढ़ गई। १६०५ में उदाहरण के लिये बम्बई के कारखानों में बिजली लगने और काम के घंटों के बढ़ जाने की सम्भावना से मजदूरों ने हड़तालें कीं। १६०७ में बम्बई कारखानों में मजदूरी के प्रश्न को लेकर कई हड़तालें हुईं जो कि एक सप्ताह से भी अधिक चलीं। १६०७ में जो फैक्टरी कमीशन बैठा था उसने अपनी रिपोर्ट में लिखा है कि मजदूर हड़ताल के अस्त्र का उपयोग करना भली-भाँति जानते हैं और उन्होंने कई बार सफलतापूर्वक हड़तालों का उपयोग मिल मालिकों से अपनी मांगों को मनवाने के लिए किया है। किन्तु अभी वे अपना विस्तृत संगठन करने में सफल नहीं हुए हैं।

सबसे प्रथम महत्वपूर्ण हड़ताल जिसमें बम्बई के लगभग सभी मजदूरों ने भाग लिया, स्वर्गीय लोकमान्य तिलक को पकड़ने के लिए कैद करने के अवसर पर हुई।

मजदूरो को थोडी सुविधायें प्राप्त होगईं। १६१८ मे अधिकांश हडतालें मजदूरी को बढ़वाने के उद्देश्य से हुई थीं। परन्तु उनमें से अधिकांश हडतालों को अधिक दिन नहीं चलाना पडा क्योकि मालिको ने मजदूरों की मांग को स्वीकार करके उनकी मजदूरी - बढा दी। दिसम्बर १६१८ में बम्बई मे एक बहुत बडी हडताल हुई। क्रमश यह हडताल बम्बई के सभी कारख़ानो मे फैल गई और ६ जनवरी १६१६ को लगभग एक लाख पच्चीस हजार मजदूर हडताल में सम्मिलित हो गए।

परन्तु १६१६ के पूर्व मोटे रूप से मालिको और मजदूरों के आपसी सम्बंध अधिक खराब नहीं हुए थे। १६१६ के अन्त तथा १६२० मे मजदूरो मे क्षोभ की एक तीव्र लहर जागृत हुई और मिल मालिको तथा मजदूरों में घोर संघर्ष आरम्भ होगया। यह तो हम पहले ही कह चुके हैं कि १६१८ के उपरान्त भारत में मजदूर सगठित होने लगे और मजदूर आन्दोलन बल पकडने लगा। मजदूरो मे वर्ग चैतन्य उदय हुआ और वे अपने कष्टो को दूर करने के लिए मालिकों को संगठित रूप से चुनौती देने लगे। इसका फल यह हुआ कि १६१६ के उपरान्त हडतालों का देश मे ताँता लग गया। देखते-देखते हडतालों का रोग सारे देश में छूत की बीमारी की भाँति फैल गया। १६२० के पहिले दो महीनो [जनवरी-फरवरी] मे १२४ हडताले हुईं, उनमे ६६ केवल बम्बई मे हुई थी जिनमे तीन लाख मजदूरो ने भाग लिया था। जून १६२० तक देश में २०० हडताले हुईं जिनमें १५ लाख मजदूरो ने भाग लिया था। जुलाई से दिसम्बर १६२० तक ११६ हडतालें हुईं जिनमे कई लाख मजदूर सम्मिलित हुए।

१६२१ के उपरान्त देश मे हुई हड़तालों के आँकडे हमें उपलब्ध है, क्योकि उसी वर्ष सरकार ने लेबर ऑफिस की स्थापना की थी और वह हडतालों का पूरा विवरण रखता है। १६२१ के उपरान्त हुई हडतालो का ब्योरा इस प्रकार है।

१९२१ के उपरान्त होने वाली हड़तालो की तालिका

वर्ष.	हडतालों की संख्या.	मजदूरों की संख्या. हजारों मे.	काम के दिनों की हानि लाखो मे.
१९२१	३९६	६००	७०
१९२२	२७८	४३५	४०
१९२३	२१३	३०१	५१
१९२४	१३३	३१२	८७
१९२५	१३४	२७०	१२६
१९२६	१२८	१८७	११
१९२७	१२९	१३१	२०
१९२८	२०३	५०७	३१६
१९२९	१४१	५३१	१२२
१९३०	१४८	१९६	२३
१९३१	१६६	२०३	२४
१९३२	११८	१२८	१९
१९३३	१४६	१६५	२२
१९३४	१५९	२२१	४८
१९३५	१४५	११४	१०
१९३६	१५७	१६९	२४
१९३७	३७९	६४८	१००
१९३८			
१९३९			
१९४०	३२२	४५३	७६
१९४१			
१९४२	६९४	७७३	५८
१९४३			

वर्ष	हड़तालों की संख्या.	मजदूरो की सख्या हजारों मे	काम के दिनो की हानि लाखो में
१९४४			
१९४५	८४८	७८२	३९
१९४६ जुलाई तक	११२५	१५०८	७५

१९४६ के आँकड़ों मे जुलाई [१९४६] मे सहानुभूति प्रदर्शन के लिये की गई उन १४ बड़ी हड़तालों के आकड़े नही दिए गए हैं जिनमे चार लाख से अधिक कार्य के दिनो की बम्बई प्रान्त मे, ५०,००० दिनों की मदरास में तथा २० लाख दिनो की बंगाल मे हानि हुई थी। जुलाई के उपरान्त भी हड़तालो की लहर कम नही हुई। एस. आई. आर. की हड़ताल जिसमे ४०,००० मजदूरों ने २८ दिनों तक भाग लिया, गिरिडीह के १६,००० मजदूरो ने १९ दिनो तक हड़ताल की। नागपुर की सूती मिलो के २२,००० मजदूरो ने हड़ताल की और कानपुर की सूती मिलो में आम हड़ताल रही।

ऊपर के आंकड़ो में उन बड़ी हड़तालों के आकड़े सम्मिलित नहीं है कि जो गैर-फैक्टरियों के कर्मचारियों ने की। ८०,००० डाक विभाग के कर्मचारियो ने तीन सप्ताह तक हड़ताल की, ३०,००० मिलिटरी अकाउंट क्लर्कों ने १६ दिनो तक हड़ताल रक्खी, इम्पीरियल बैंक के ६,००० क्लर्कों ने ४५ दिन तक हड़ताल रक्खी, सयुक्त प्रान्त नहर विभाग के ५००० कर्मचारियो ने ७५ दिन तक हड़ताल रक्खी। दफ्तरो के बाबुओ ने बम्बई मे हड़ताल की। ग्राम पाठशालाओं तथा पटवारियो ने कई प्रान्तो मे हड़ताल की। इस प्रकार की हड़तालें भारतवर्ष में पहले कभी भी नही सुनी गई थीं। यह पहला अवसर था कि शिक्षित क्लर्कों तथा अन्य कर्मचारियो ने जिनका फैक्टरियों से कोई सम्बन्ध नहीं था हड़तालें कीं।

सच तो यह है कि १९४५ के उपरान्त मजदूरों मे गहरे असंतोष और

क्षोभ की लहरें उठ खड़ी हुई। किन्तु आश्चर्य यह है कि १९३९ के उपरात ६ वर्षों के लम्बे युद्ध काल में भारतीय मजदूर अपेक्षाकृत शान्त रहा। जिस समय कि वस्तुओं का मूल्य ऊँचा चढ़ रहा था, मजदूरो को तरह-तरह के कष्टों का सामना करना पड़ रहा था, उस समय मजदूरों की अधिक हड़तालें नहीं हुईं और १९४२ की अगस्त क्रान्ति के समय भी जब सारा देश ब्रिटिश साम्राज्यवाद को भारत से उखाड़ फेकने के लिए उठ खड़ा हुआ था, अहमदाबाद तथा जमशेदपुर के मजदूरों के अतिरिक्त उस जन-क्रान्ति मे भी मजदूरों का कोई गौरवपूर्ण भाग नही रहा। मजदूरों की उस निश्चेष्टता का कारण भारत की तत्कालीन राजनीति में छिपा है। १९३९ के युद्ध छिड़ते ही कांग्रेस ने पदत्याग दिया और आगे चल कर कांग्रेस के सभी कार्यकर्त्ता जेलो मे ठूंस दिये गए। देश मे कांग्रेस समाजवादी दल ही एक क्रान्तिकारी दल था जो कि मजदूरों को राष्ट्रीय मोर्चों पर लाकर खड़ा कर सकता था। उनका ही मजदूरों पर विशेष प्रभाव था। किन्तु सरकार ने समाजवादी दल के कार्यकर्त्ताओ को बीन-बीन कर पकड़ लिया था। उधर मजदूरों मे कार्य करने वाले अन्य मजदूर नेताओं ने ब्रिटिश साम्राज्यवाद से घृणित समझौता कर लिया था। कम्युनिस्टों ने जर्मनी द्वारा रूस पर आक्रमण होते ही साम्राज्यवादी युद्ध को जन युद्ध कहना आरम्भ कर दिया और सब प्रकार से युद्ध प्रयत्नों में सहायता पहुंचाना उनका कर्तव्य हो गया। श्री. एम. एन. राय के अनुयायियों ने कांग्रेस को क्षेत्र से हटा देख कर अपने दल (रेडिकल डेमाक्रेटिक पार्टी) को देश मे बलवान करने के उद्देश्य से भारत सरकार तथा प्रान्तीय सरकारो से मोटी-मोटी रकमे लेकर युद्ध को जनता का युद्ध कहना और मजदूरों को युद्ध कार्य में सहायता पहुंचाने के लिए प्रोत्साहित करना आरम्भ कर दिया। मजदूरो के सच्चे नेता जेल मे थे। कम्युनिस्ट और रायिस्ट उन्हे युद्ध काल मे शान्त रहने और हड़तालें करके युद्ध प्रयत्न मे बाधा न पहुंचाने का उपदेश देते थे। इस कारण युद्ध काल मे मजदूर वर्ग अपेक्षाकृत शान्त रहा। परन्तु युद्ध समाप्त हो जाने के

उपरान्त जब नये चुनावो के अनुसार अधिकांश प्रान्तो में कांग्रेसी सरकारें स्थापित हो गईं, तो बहुत अधिक हडताले हुईं। उसका मुख्य कारण यह था कि मजदूरो से कम्युनिस्ट कार्यकर्त्ता युद्ध के समय कहते आये थे कि युद्ध के समाप्त होने पर उनकी सारी कठिनाइया दूर हो जावेंगी। यही नहीं १९४५ मे मंहगाई हद दर्जे को पहुँच चुकी थी और मजदूरो की आर्थिक दशा अत्यन्त दयनीय थी। वे और अधिक धैर्य नहीं रख सकते थे। उधर राजनैतिक दलो ने चुनाव घोषणाओ मे मजदूरों की दशा को सुधारने की जो बार-बार घोषणा की थी उससे मजदूरो मे अत्यधिक आशायें बध चुकी थीं। किन्तु आर्थिक राजनैतिक कठिनाइयो के कारण प्रान्तीय सरकारे मजदूरो की उन आशाओं को पूरा नही कर सकीं। इधर कम्युनिस्ट अपना प्रभाव मजदूरो पर फिर से जमाने के उद्देश्य से मजदूरो को भडकाने में लगे हुए थे। यही सब कारण थे जिनसे १९४६ मे समस्त देश मे हडतालो का ताता लग गया। १९४७ के आरम्भ में भी हडतालो मे कोई कमी नहीं दीखती। जनवरी १९४७ मे शक्कर के कारखानो मे हडताले हुईं। देहली के ५००० हाई स्कूलो के अध्यापकों ने हडताले की और कानपुर से लम्बे समय तक आम हडताल रही जिसमे एक लाख से अधिक मजदूरों ने भाग लिया।

भारतवर्ष मे १९२१ से १९४१ तक कुल ४६६४ हडताले हुईं जिनमें ६,६७४,१५८ मजदूरो ने भाग लिया और १३५,२००,३२१ दिनो की हानि हुई। इनमे २६६४ हडताले मजदूरी और बोनस के कारण हुईं, ९४१ मजदूरो को रखने और निकालने की नीति से सम्बन्ध रखती थीं, १९८ छुट्टी और काम के घंटो को लेकर हुईं और ८६१ फुटकर कारणो से हुईं। इन हडतालो में से ७९२ पूर्णत सफल हुईं, १०८८ मे आंशिक सफलता मिली और २६८२ असफल रहीं।

यह तो हम पहले ही कह चुके है कि प्रथम योरोपीय युद्ध के पूर्व भारत मे मजदूर सगठित नहीं थे। इस कारण संगठित रूप से १९१९ के पूर्व यहा हडताले नही होती थी। १९२० के उपरान्त मे हड़तालो की बाढ-

सी आ गई और देश का ध्यान इस नवीन समस्या की ओर गया। योरोपीय महायुद्ध मे मिल-मालिकों तथा व्यवसायियों को कल्पनातीत लाभ हुआ था। यद्यपि मजदूरी मे कुछ वृद्धि अवश्य हुई थी किन्तु वस्तुओं का मूल्य बेहद बढ गया था। इस कारण उनकी वास्तविक मजदूरी कम हो गई थी। मजदूर की आर्थिक दशा दयनीय हो गई थी और वे अधिक सहन नही कर सकते थे। इस कारण १९१८ और १९१९ मे बहुत-सी हडतालें हुई जिनके फलस्वरूप मजदूरों की मजदूरी बढी और उनकी सुख-सुविधा मे भी वृद्धि हुई। यद्यपि उद्योग धंधों की दशा इतनी अच्छी थी कि यदि पूंजीपति चाहते तो बहुत पहले ही मजदूरी को बढा सकते थे किन्तु जब तक मजदूरों ने हडताल नही की तब तक मिल-मालिकों ने ध्यान ही नहीं दिया।

उस समय उद्योग-धन्धों की दशा बहुत अच्छी थी, मिलों मे अधिकाधिक मजदूरों की मांग थी। किन्तु इन्फ्लूएंजा की महामारी के कारण पचास लाख से एक करोड तक मनुष्यों की मृत्यु हो जाने से औद्योगिक केन्द्रों मे मजदूरों की कमी हो गई। इन्हीं केन्द्रो मे सर्व प्रथम मजदूर संगठित हो गये थे और प्रारम्भिक हडतालो मे सफलता मिल जाने के कारण उनको संगठन का महत्व मालूम हो गया था। वे समझने लगे थे कि अपनी दशा मे सुधार करने के लिए हडताल एक अमोघ अस्त्र है। यही नही वे अब मजदूरों के उन शिक्षित हितचिन्तकों के नेतृत्व मे अपने को संगठित करने के लिए प्रयत्नशील हो गये जोकि मजदूरो की शक्ति को पहिचान कर उनकी ओर आकर्षित हुए थे। योरोपीय महायुद्ध के उपरान्त जो शिक्षित वर्ग के कार्यकर्त्ताओं का मजदूरो को नेतृत्व प्राप्त हुआ वही उनकी सबसे बडी शक्ति थी। युद्ध के फलस्वरूप और विशेषकर रूसी क्रांति ने संसार भर के सर्वहारा वर्ग मे नवीन आशा और आशा की लहर उत्पन्न कर दी थी। भारतीय मजदूरों मे इस समय एक नवीन जीवन हिलोरे ले रहा था। उन्हे पहली बार यह सुनने को मिला था कि जो किसान और मजदूर पूंजीपतियों तथा धनी लोगों की लकडी

चीरने और पानी भरने के लिए ही उत्पन्न हुए थे वे भी समाज में स्वाभिमान और प्रतिष्ठापूर्वक रह सकते हैं और यदि वे पूर्ण रूप से संगठित हो जावें तो वे देश के शासन की बागडोर अपने हाथों में ले सकते हैं। उधर महात्मा गांधी के नेतृत्व मे १९२१ में पहली बार सत्याग्रह आंदोलन ने देश की जनता में अपूर्व जागृति उत्पन्न कर दी थी। सारा देश क्षुब्ध हो उठा था। देश में पहली बार ऊंचे और नीचे वर्गों का भेद मिट कर सभी लोग राजनैतिक आन्दोलन मे भाग लेने के लिए आगे आये। राजनैतिक और आर्थिक आधार पर किये गये आन्दोलन एक दूसरे से मिल गए। इसका फल यह हुआ कि सर्वहारा वर्ग तथा शिक्षित वर्ग से जो पार्थक्य की दीवार थी वह टूट गई। यह ध्यान मे रखने की बात है कि १९२१ से जो फैक्टरी कानून संशोधित हुआ वह इन हड़तालो का परिणाम था। बहुत से स्थानों पर मजदूरो ने ६० घंटे के सप्ताह की मांग की थी, अस्तु, १९२१ के फैक्टरी कानून से ६० घंटे का सप्ताह कर दिया गया।

उस समय की मुख्य हड़तालो में आसाम के चाय के बागो की हड़ताल सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। १९२१ मे आसाम के चाय के बागो में ऐसा तीव्र क्षोभ उत्पन्न हुआ कि सारे मजदूर बागों को छोड़ कर भाग निकले। बाग के मालिकों की सहायता के लिए सरकार ने चांदपुर रेलवे स्टेशन पर गुरखा फौज भेज दी। मजदूरो पर गोली चलाई गई और बहुत से मजदूर मारे गए। इस कांड से अन्य मजदूरो मे भी तीव्र क्षोभ उत्पन्न हुआ और आसाम बंगाल रेलवे तथा स्टीमरो पर काम करने वाले मजदूरों ने सहानुभूति में हड़ताल कर दी। तीन महीने तक रेलें ठप रहीं। किन्तु जहां तक चाय के बागो के मजदूरो की हड़ताल का प्रश्न था वह बिलकुल असफल रही। बेचारे निर्धन निस्सहाय मज़दूरो को विवश होकर फिर चाय के बागो मे काम करने के लिए जाना पड़ा। उनकी कोई मांग पूरी नही हुई और उनकी दशा पहले से भी बुरी हो गई। इसका मुख्य कारण यह था कि मजदूरो में कोई संगठन नही

था केवल उनसे कार्यकर्त्ताओं ने प्रचार करके जोश उत्पन्न कर दिया था। बिना सुदृढ संगठन किये हडताल करने का जो परिणाम होता है वही हुआ और हडताल समाप्त हो गई।

१९२४ मे बम्बई मे एक आम हडताल हुई जो कि भारतवर्ष में हुई सब हड़तालो से बडी थी। उसमें १६०,००० मजदूरो ने भाग लिया था। उसका मुख्य कारण यह था कि सूती कपडे की मिलो मे पिछले पाच वर्षो से जो बोनस दिया जाता था वह बन्द कर दिया गया। दूसरे वर्ष (१९२५) मे बम्बई मे फिर आम हडताल हुई जो कि पहली हडताल से भी बडी थी और जिससे १ करोड दस लाख कार्य के दिनो की हानि हुई। यह हडताल पूर्ण रूप से सफल हुई और मज़दूरो की मज़दूरी की कटौती पूरी कर दी गई। १९२८ और १९२९ मे बम्बई मे फिर आम हडताले हुईं जिनमे प्रत्येक बार एक लाख से अधिक मजदूर सम्मिलित हुए। पहली हडताल कारखानो में तेज़ी से काम कराने के सम्बन्ध में हुई और दूसरी हडताल कुछ मजदूर कार्यकर्त्ताओं को जिन्होने पिछली हडतालो मे कार्य किया था निकाल देने के सम्बन्ध मे हुई थी। दूसरी हडताल दो दृष्टियो से महत्वपूर्ण है। इस हडताल में पहली बार कम्युनिस्टो का प्रभाव मज़दूरो पर प्रगट हुआ और आगे से वे कम्युनिस्टो के प्रभाव में आ गए। दूसरी उल्लेखनीय बात इस हडताल के सम्बन्ध मे यह है कि इसके फलस्वरूप ही १९२९ का ट्रेड डिस्प्यूटस् ऐक्ट पास हुआ और उसके द्वारा स्थापित पंचायत ने इस हडताल का समझौता करवाया। यह हडताल सात महीने तक चली और सूती कपडे की मिलों के सभी मजदूरों ने इसमें भाग लिया। इसी प्रकार की एक आम हडताल जूट मिलों के मजदूरों की १९२९ में हुई और उसमे २७२,००० मजदूरों ने भाग लिया। यह हडताल ग्यारह सप्ताह तक चलती रही। इस हडताल का मुख्य कारण यह था कि मिल मालिकों ने काम के घन्टे ५४ से बढ़ा कर ६० कर दिये थे। ग्यारह सप्ताह बाद मिल मालिकों ने मजदूरों से समझौता कर लिया और

उनकी अधिकाश मांगो को स्वीकार कर लिया। १९३८ में बंगाल की जूट मिलो मे फिर एक बडी आम हडताल हुई जिसमें २९१,८०० मजदूरों ने भाग लिया था और मजदूरों की ३५½ लाख रुपये की हानि हुई थी। मजदूरों की माग यह थी कि १९३२ में मजदूरी मे जो कटौती कर दी गई थी वह पुन. वापस दी जावे। इसी वर्ष (१९३८) मे कानपुर के मजदूरो ने आम हडताल कर दी जिसमे ५०,००० मज़दूरों ने भाग लिया था। बात यह थी कि संयुक्त प्रान्तीय सरकार ने जो लेबर इन-क्वायरी कमेटी बिठाई थी उसकी सिफारिशों को मिल मालिको ने मानने से इनकार कर दिया था। मिल मालिकों का रुख इस समय बहुत ही निन्दनीय था। प्रान्तीय सरकार ने मिल मालिकों तथा मजदूरो के बीच समझौता कराना चाहा किन्तु मिल मालिको ने उस प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया। यही नही मिल मालिकों ने तो यहां तक घोषणा कर दी कि वे समझौते की बातचीत मे तभी सम्मिलित हो सकते है जबकि मजदूर अपनी शिकायतो को व्यक्तिगत रूप से उनके सामने रक्खे न कि लेबर यूनियनों द्वारा। इन आम हडतालो में लाभ, मज़दूरी और कार्य के दिनों की अपार क्षति तो हुई ही किन्तु कुछ कारखानों और खानो मे तो बहुमूल्य मशीन और प्लान्ट को भी भारी क्षति पहुँचाई गई। उदाहरण के लिए जमशेदपुर के ताता आयरन वर्क्स मे बडी भारी हडताल हुई जो १०५ दिन तक चलती रही। इस हडताल मे २६,००० मजदूरों को २५ लाख रुपयो की हानि हुई। मालिको को भी २२ लाख की हानि हुई और २५ लाख कार्य के दिनों की क्षति हुई। जो समझौता हुआ उसमें मजदूरों की बहुत सी मांगे स्वीकार कर ली गईं और मालिको को मजदूरो को कम करने की नीति बदलनी पडी।

१९३६ में जब आठ प्रान्तो मे कांग्रेस मन्त्रिमडल स्थापित हो गए तो मजदूरों मे नवीन आशा और उत्साह की लहर फैल गई क्योंकि कांग्रेस मन्त्रिमंडल मजदूरो से सहानुभूति रखते थे और कांग्रेस के मौलिक अधिकारों सम्बन्धी प्रस्ताव तथा चुनाव घोषणा मे मजदूरो के

हितों की रक्षा करने की बात कही गई थी। मजदूर जानते थे कि कांग्रेस मन्त्रिमंडलों के शासनारूढ होते ही उन पर पूंजीपतियों के संकेत पर अन्याय-पूर्ण दमन नहीं हो सकता। अस्तु, १९३७ और ३८ में बहुत अधिक हड़तालें हुईं। प्रान्तीय सरकारों ने जांच कमेटियां बिठाईं, लेबर कमिश्नर नियुक्त किये और मजदूरों की स्थिति में सुधार की इसकी योजनाएँ बनाई जाने लगीं। संयुक्तप्रान्त, बम्बई, बिहार में इस ओर विशेष रूप से कार्य हुआ किन्तु कुछ हो सके, उससे पूर्व ही कांग्रेस मन्त्रि मंडल हट गए। क्रमशः कांग्रेस और सरकार का संघर्ष उग्र रूप धारण करता गया। १९४२ की जन-क्रान्ति के फलस्वरूप जमशेदपुर, अहमदाबाद तथा मद्रास प्रान्त में अवश्य ही मजदूरों ने अगस्त क्रान्ति के साथ हड़तालें करके ब्रिटिश साम्राज्यवाद को चुनौती दी किन्तु अधिकांश स्थानों पर कम्युनिस्टों और रायवादियों के नेतृत्व में मजदूरों ने ब्रिटिश साम्राज्यवाद को चुनौती देने के बजाय उस साम्राज्यवादी युद्ध में परोक्षरूप से सहायता पहुँचाई।

परस्पर विरोधी है । परन्तु अधिकतर हडताले नीचे लिखे कारणों से होती है । जब मालिक किसी उत्साही ट्रेड यूनियन कार्यकर्त्ता को किसी बहाने से निकाल देते है, अथवा मजदूरों की कमी करते है अथवा काम के घंटों, मजदूरी बोनस, छुट्टियो तथा नौकरी की अन्य शर्तों को लेकर मजदूरों और पूंजीपतियो मे संघर्ष हो जाता है । जब कोई आर्थिक परिवर्तन होता है, जैसे आर्थिक मंदी, बेकारी तथा धंधो का रेशनैलाईजेशन अथवा जीवन के लिए आवश्यक वस्तुओ का अत्यन्त महगी हो जाना, तब मज़दूर तथा पूजीपतियो का सघर्ष तीव्र हो जाता है ।

भारतवर्ष में इन सब कारणो से हडताले होती है । मजदूरी का कम होना, मजदूरी मे कटौती होना, मालिको का कठोर व्यवहार, मज़दूरो को अनुचित दड देना, तथा अधिक संख्या मे मजदूरो को नौकरी से हटा देने पर हडताले होती है । कभी-कभी मैनेजर अथवा किसी ऊंचे अफसर के दुर्व्यवहार, मारपीट, गाली से भी हडताले हो जाती है । परन्तु ऐसी दशा मे कारखाने की जो अन्य बुराइया है वे ही मुख्यतः हडताल का कारण होती है । हा, दुर्व्यवहार उसका बहाना अवश्य बन जाता है । भारत मे मजदूर सगठन अभी उतना सशक्त नही है और न अधिक पुराना ही है । बहुत से स्थानो पर तो मजदूर यूनियन होती ही नही और फिर भी मजदूर हडताल कर देते है । उस दशा मे उन्हे ट्रेड यूनियन का नेतृत्व और सलाह प्राप्त नही होती । कभी-कभी ट्रेड यूनियन के बनने पर अधिकारी उन मजदूरों को निकाल देते है जिन्होंने उस मे सक्रिय भाग लिया है । उसी पर मजदूर और मालिको मे संघर्ष छिड जाता है । मजदूर अपना सगठन करना चाहते है किन्तु उनको अपने शुभचिन्तको, बाहरी नेताओ को सलाह देने के लिए यूनियन मे रखना पड़ता है । मिल मालिक यह कह कर कि हम बाहरी आदमियो से बात नही करना चाहते मजदूरो के प्रतिनिधियों तथा मजदूर कार्यकर्ताओं से न तो बात करना चाहते है और न उनके पत्रो का ही जवाब देते है । बहुत बार तो केवल उसी प्रश्न को लेकर मजदूरो को संघर्ष करना पडता है । भारतवर्ष मे

बहुत सी हड़तालें केवल इस लिए होती हे कि मिल मालिक ट्रेड यूनियनों को स्वीकार ही नही करते और उनके मन्त्री तथा चुने हुए प्रतिनिधियों का यह अधिकार ही नही मानते कि वे मजदरों की ओर से बात चीत करें। यही नही जब एक बार कोई यूनियन हडताल करके मिल मालिकों को उसे स्वीकार करने पर विवश कर देती हे तो भी मालिक उसके कमजोर होते ही उसे फिर व्यवहार में अस्वीकार कर देते हे। लिखा-पढी मे यूनियन को स्वीकार कर लेने पर भी मालिक उसे व्यवहार मे स्वीकार नही करते और जब उनके प्रतिनिधि उनके सामने मजदूरों की शिकायतें रखते हे तो उसकी नितान्त अवहेलना करते हे। बहुधा मालिक यह भी कहते हैं कि जब वे यूनियन को मजबूत देखते हैं तो उसे स्वतः ही स्वीकार कर लेते हैं और जब उसके सदस्य कम हो जाते हे तो उसको अस्वीकार कर देते हैं। साथ ही वे इस बात का भी प्रयत्न करते हे कि मजदूरो मे आपस में फूट पड जावे और मजदूर सभा निर्बल हो जावे। १९३७ मे कानपुर के मजदूरों ने जो आम हडताल की वह केवल इस लिए कि मिल मालिक कानपुर की मजदूर सभा को स्वीकार नही करते थे।

इन कारणों के अतिरिक्त कभी-कभी राजनैतिक कारणो से भी हडतालें होती हे। जब राष्ट्रीय नेता गिरफ्तार होते हैं अथवा सरकार जनता का दमन करती हे उस समय हडतालें हो जाती हें। किन्तु इन हडतालो का कोई मुख्य कारण नहीं है। यह बात अवश्य है कि जिन राजनैतिक दलो का मजदूर यूनियनो पर प्रभाव है वह अपनी नीति के अनुसार मजदूरो से हडतालें करवाते हैं अथवा उन्हें हडतालें करने से रोकते हैं। इस सीमा तक देश की राजनीति का मजदूरों की हडतालों पर अवश्य प्रभाव पडता है।

समय मजदूरो को आर्थिक सहायता दे सकें। परन्तु फिर भी भारतीय मजदूरो मे हडतालें करने की आश्चर्यजनक क्षमता दृष्टि-गोचर होती है। इसका क्या कारण है? वे लोग यह भूल जाते हैं कि भारतीय मजदूर अधिकतर गावों से आता है और उसने अपने गांव से अपना नाता नहीं तोडा है। प्रति वर्ष और यदि सुविधा नही होती तो दूसरे तीसरे वर्ष वह एक दो महीने के लिए अवश्य ही गावो मे जाता है और अपने कुटुम्बियों मे रहता है। अस्तु, भारतीय मजदूर इतना निराश्रय नहीं है जितना कि अन्य औद्योगिक देशो का मजदूर निराश्रय होता है। अस्तु, जब बम्बई इत्यादि मे लम्बी हडताले होती है, तो मजदूर अपने गांवों की ओर चले जाते हैं। वे समझते है कि चलो कुछ दिनो अपने पैतृक गाव मे अपने लोगो के साथ रह ले। जब हडताल समाप्त हो जावेगी, कारखाने खुलने लगेगे, तब हम फिर गाव से लौट आवेंगे। मजदूर नेता भी जब देखते है कि हडताल लम्बी चलने वाली है तो मजदूरों को गाव चले जाने की सलाह दे देते है।

जहाँ आर्थिक कारणो से बहुधा हडतालें होती है, वहाँ कभी-कभी मजदूर नेता तथा किसी राजनैतिक दल विशेष के लोग, जिनका मजदूरो पर प्रभाव है, अपने प्रभाव को बढाने के लिये अथवा अपने प्रतिद्वन्द्वी राजनैतिक दल के लिए कठिनाइयां उपस्थित करने के लिए हडतालें करवा देते है और मजदूरो को भारी क्षति पहुँचती है। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि यदि एक मिल मे हडताल होती है तो दूसरे मिलों के मालिक उस मिल मजदूर यूनियन के नेताओ को आर्थिक सहायता देकर वहां की हडताल को और लम्बी चलाने के लिए प्रोत्साहन देते है। कई बार ऐसा हुआ कि जब बम्बई के सूती-वस्त्र की मिलो में लम्बी हडताल चली तो अहमदाबाद के मिल मालिकों ने हडतालियों को आर्थिक सहायता भेजी कि जिससे वे अधिक समय तक हडताल चलाते रहें और अहमदाबाद की मिलों का कपडा बाजार मे अच्छे मूल्य पर बिक सके।

मजदूर और मालिकों के संघर्ष को कम करने के उपाय

खेद है कि भारतवर्ष में अभी तक हड़तालों को रोकने अथवा संघर्ष छिड़ जाने पर उसे शीघ्र ही निबटा देने की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया गया। अन्य देशों में इस ओर विशेष प्रयत्न किया गया है। उसका कारण यह है कि हड़तालों से सभी को हानि होती है। मजदूरों की मजदूरी जाती है, मालिकों का लाभ नष्ट होता है, उत्पादन कम होता है और बाजार में उस वस्तु का टोटा हो जाता है। भारतवर्ष में पिछले दिनों मिल-मालिकों तथा मजदूरों के सम्बन्ध इतने खराब हो गए हैं कि इस ओर तुरन्त ध्यान देने की आवश्यकता है।

वर्क्स कमेटी

इस सम्बन्ध में हमें यह न भूलना चाहिए कि हड़तालों को रोकने के लिए ऐसी संस्था की बहुत आवश्यकता है, जो कि कारखाने के अन्दर ही काम करे। अभी तक भारतवर्ष में उस ओर किसी का ध्यान नहीं गया है। पश्चिमीय देशों में इन वर्क्स कमेटियों के द्वारा कारखानों के अन्दर मालिक और मजदूरों में अच्छे सम्बन्ध स्थापित करने में विशेष सफलता मिली है। वर्क्स कमेटी में मजदूरों और मिल मालिकों के प्रतिनिधि बराबर मिलते रहते हैं। मजदूरों की जो शिकायतें और कष्ट होते हैं, उनके सम्बन्ध में बात चीत होती है और उनको दूर करने का प्रयत्न किया जाता है। इसी प्रकार मिल-मालिकों की जो शिकायतें होती हैं वे मजदूर प्रतिनिधियों के सामने रखते हैं। बहुत सी छोटी-मोटी शिकायतें जो आगे चलकर उग्र रूप धारण कर लेती हैं, इन कमेटियों में सफलता से निपट जाती हैं।

धित्व करें। अनुशासन, ग्रेड, मजदूरी तथा कारखाने में काम करने के सम्बंध मे जो भी समस्याएँ हो उन सब पर इस कमेटी से अच्छी तरह से विचार किया जावे। वर्क्स कमेटी में ट्रेड-यूनियनो के प्रमुख सदस्य मजदूरो के प्रतिनिधि होकर आवेंगे। अस्तु, जो भी निर्णय मजदूर प्रतिनिधियो को मान्य होगा, वह ट्रेड यूनियन का समर्थन भी प्राप्त कर सकेगा। साथ ही फोरमैन इत्यादि के वहां रहने से प्रत्येक समस्या पर कारखानो के हितो की दृष्टि से भी विचार हो सकेगा। लेकिन वर्क्स कमेटिया तभी सफल हो सकती है कि जब ट्रेड यूनियन उसमे सक्रिय सहयोग दे और अपने प्रतिनिधियो को मत देने की स्वतन्त्रता प्रदान करें। साथ ही मालिको को भी चाहिये कि मजदूरो के सदस्यो की बातो का उचित आदर करे, यह न हो कि मालिक मजदूरो के प्रतिनिधियो को अपनी ओर मिला कर मजदूरो मे ट्रेड यूनियन के प्रभाव को नष्ट करने का प्रयत्न करे। अधिकतर होता यह है कि मालिक वर्क्स कमेटियो का उपयोग ट्रेड यूनियन को निर्बल करने में अथवा उसको नष्ट कर देने मे करते है। इसी कारण ट्रेड यूनियन के कार्यकर्त्ता इनसे सशंक रहते हैं। यह ध्यान में रखने की बात है कि ऐसी बहुत सी समस्याएं उपस्थित होती है, जिनका क्षेत्र विस्तृत होता है और जो वर्क्स कमेटी मे हल नहीं की जा सकती। अस्तु ट्रेड यूनियन का पूर्ण सहयोग प्राप्त करना मालिको के लिये आवश्यक है।

लेबर आफिसर और मजदूर बोर्ड

प्रत्येक औद्योगिक केन्द्र मे सरकार को एक लेबर आफिसर नियुक्त कर देना चाहिए, जो मिल मालिको तथा ट्रेड यूनियनो के बीच संधि स्थापित करने का प्रयत्न करेगा। जो भी परिवर्तन कारखानो में मालिक करना चाहे, उसकी पूर्व सूचना मालिको को लेबर आफिसर को देनी होगी। यदि लेबर आफिसर समझे कि इससे मजदूरों को असतोष होगा तो वह मालिको से बात करके उसमें

उचित संशोधन करवाने का प्रयत्न करेगा। मजदूरों की जो भी शिकायतें होंगी, उनको दूर करवाने का प्रयत्न करेगा। इससे संघर्ष के अवसरों को बहुत कुछ बचाया जा सकता है। संयुक्त प्रांत में प्रांतीय सरकार ने लेबर कमिश्नर नियुक्त किया है, जिसका प्रधान कार्यालय कानपुर में है। वह मजदूर सभा और मालिकों के बीच के झगड़ों को निपटाता है। बम्बई में भी प्रांतीय सरकार ने लेबर आफिसर नियुक्त कर दिया है। मज़दूरों को जो भी शिकायतें होती हैं, वह लेबर आफिसर के पास भेज देते हैं और वह उनको दूर करवाने का प्रयत्न करता है। होना यह चाहिए कि प्रत्येक औद्योगिक केन्द्र में इस प्रकार के लेबर आफिसर नियुक्त किये जावें।

केवल लेबर आफिसरों की नियुक्ति से ही सारी समस्यायें हल नहीं हो जावेगी। प्रत्येक प्रांत में मजदूरी बोर्ड स्थापित करने की भी नितान्त आवश्यकता है। मजदूरी बोर्ड का मुख्य कर्तव्य यह होगा कि वह जीवनोपयोगी वस्तुओं के मूल्यों की घटा-बढ़ी का अध्ययन करे और जब कभी मजदूरी, बोनस अथवा महंगाई के भत्ते के प्रश्न को लेकर मालिक और मजदूरों में कोई विवाद खड़ा हो जावे तो वह उस प्रश्न पर प्रामाणिक मत दे सके। मज़दूरों के रहन-सहन के दर्जे को ऊंचा रखने के लिए यह आवश्यक है कि भारत में मजदूरी बोर्ड शीघ्र स्थापित कर दिये जावें। आज अधिकांश हड़तालों का मूल कारण मजदूरी का प्रश्न है। यदि देश में मजदूरी बोर्ड स्थापित कर दिया जावे जो कि सब आवश्यक आंकड़ों को इकट्ठा कर के मजदूरी के सम्बन्ध में निर्णय दे सकें तो बहुत से संघर्ष के अवसर टाले जा सकते हैं।

हड़ताल का नोटिस और समझौता

के धन्धो जैसे रेल, डाक, बिजली, जल इत्यादि के कारखानो मे दो सप्ताह का नोटिस दिया जावे। जैसे ही मजदूर-सभा हडताल की सूचना दे, लेबर आफिसर को एक समझौता बोर्ड, जिसमे एक मजदूरो का प्रतिनिधि और एक मिल-मालिको का प्रतिनिधि हो और लेबर आफिसर उसका अध्यक्ष हो, बिठा देना चाहिए। नोटिस की अवधि के अन्दर मजदूर न तो हडताल करें और न मालिक द्वारावरोध करे। एक सप्ताह के अन्दर ही समझौता बोर्ड अपना निर्णय दे दे। यद्यपि समझौता बोर्ड का निर्णय किसी भी पक्ष को मानना अनिवार्य नहीं होगा, परन्तु समझौता बोर्ड के निर्णय के विरुद्ध जो भी पक्ष जावेगा, उसको सर्व साधारण तथा सरकार का समर्थन प्राप्त नही होगा। अस्तु, उभय पक्षमे से कोई भी बिना सोचे-विचारे निर्णय नही करेगा। यहां यह कह देना आवश्यक है कि मजदूरो के हडताल करने के अधिकार पर उससे अधिक प्रतिबन्ध लगाना किसी प्रकार भी सहन नही किया जा सकता जैसा कि बम्बई के ट्रेड डिसप्यूटस् ऐक्ट तथा भारत सरकार के प्रस्तावित कानून मे किया गया है। हमे यह न भूल जाना चाहिए कि मजदूर के लिए हडताल करना एक विवशता की वस्तु है, मनोरन्जन की वस्तु नही है। फिर हडताल को सफल बनाने मे एक मनोवैज्ञानिक क्षण की आवश्यकता है। यदि कानून द्वारा चार—पाच महीने तक मजदूरो को हडताल करने से रोक दिया जावे तो एक प्रकार से उनको हडताल के अधिकार से ही वंचित कर देना होगा। अस्तु, हडताल के नोटिस की अवधि से अधिक मजदूरो को हडताल करने से रोकना सर्वथा अन्याय है।

हड़तालो के सम्बन्ध मे कुछ आवश्यक बाते

यहा इस सम्बन्ध मे विचार कर लेना आवश्यक है कि जब हडताल हो तो उस समय मिल-मालिक, मजदूरो और सरकार का उसके प्रति क्या रुख होना चाहिए। आज तो स्थिति यह है कि जैसे ही मजदूर

हड़ताल करते हैं, मिल-मालिक उनको प्रत्येक सम्भव उपाय से कष्ट देने पर उतारू हो जाते है। उदाहरण के लिए यदि मज़दूर मालिकों के दिये हुए क्वार्टरों मे रहते है तो उन्हें तुरन्त वहां से निकाल दिया जाता है। उनके मकानो में बिजली और पानी बंद कर दिया जाता है। मेहतर उनकी टट्टियों और नालियों को साफ करना बन्द कर देते हैं। इस प्रकार उन्हें हड़ताल समाप्त कर देने पर विवश कर दिया जाता है। यदि मजदूर फैक्टरी के क्षेत्र में अथवा अपने क्वार्टरों के पास कोई सभा करते हैं तो उसको मालिक भंग करवा देते है अथवा मीटिंग की मनाही कर देते है। मजदूर कार्यकर्त्ताओ की यह बहुत बड़ी शिकायत है कि मालिकों के जासूस यूनियनों के कार्यकर्त्ताओं का पीछा करते हैं और मजदूरो को गैर कानूनी काम करने पर उकसाते हैं। मालिक गुण्डों को नौकर रखकर मजदूर कार्यकर्त्ताओं को पिटवाना, उनकी सभाओं को भंग करवाना आरम्भ कर देते हैं।

इसके विपरीत मजदूर हड़ताली उन मजदूरों को जो कि हड़तालियों का साथ न देकर काम पर जाते हैं अपमानित करते और कभी-कभी पीट भी देते हैं। यही नहीं, जब मजदूरों में मालिकों के दुर्व्यवहार से अत्यन्त कटुता उत्पन्न हो जाती है तो वे फेक्टरी की सम्पत्ति को भी हानि पहुंचाने का प्रयत्न करते हैं।

कर दिया जावे। मालिको द्वारा ट्रेड यूनियन कार्य-कर्त्ताओं की गति-विधि पर दृष्टि रखने के लिए जासूस रखना अथवा हडताल को तोड़ने के प्रयत्न करना कानूनन जुर्म बना दिया जाना चाहिए। मजदूर कार्य-कर्त्ताओ की यह शिकायत है और इसमे बहुत कुछ तथ्य है कि इस देश मे बडे-बडे व्यवसायी मजदूर जासूस नौकर रखते है और पेशेवर हडताल तोड़ने वाले नौकर रक्खे जाते है। इस प्रकार व्यवसायी ट्रेड-यूनियन संगठन को नष्ट करने का घृणित कार्य करते हैं। यही नही, बडे बडे लोहे तथा अन्य कारखानो मे एक काली सूची रक्खी जाती है और उन मजदूरों को जिनका नाम काली सूची मे आजाता है, क्रमश निकाल दिया जाता है। कहा जाता है कि लोहे और स्टील के कारखानों मे ऐसे बहुत से सुपरिन्टेंडेंट हैं जिन्होने संयुक्तराज्य अमेरिका मे हड़तालो को तोडने और ट्रेड यूनियन सगठन को नष्ट कर देने की वैज्ञानिक ढग से शिक्षा पाई है और उस अमेरिकन पद्धति को भारत मे काम मे ला रहे है। आवश्यकता इस बात की है कि एक कानून बना कर कारखानो के बाहर मजदूरो की गति विधि पर ध्यान रखने के लिए चौकीदार रखना और हड़ताल को तोड़ने वाले मजदूरो को प्रचलित मजदूरी से अधिक मजदूरी देकर भर्ती करना जुर्म बना दिया जावे।

सयुक्तराज्य अमेरिका में शान्तिमय हड़ताल को रोकने तथा उसमे हस्तक्षेप करने के लिए व्यक्तियो को राजकीय रेलो का उपयोग नही करने दिया जाता। इसी प्रकार भारतवर्ष में एक कानून बनाकर हडताल तोडने वालो को हड़ताली मजदूरों से अधिक मजदूरी देकर भर्ती करना जुर्म बना दिया जाना चाहिए।

बिहार को कोयले की खानो और जमशेदपुर मे मालिको ने मजदूरों को हड़ताल के समय कारखाने द्वारा दिये गये मकानो से निकाल दिया और बिजली और पानी बद कर दिया। इसी प्रकार बगाल की जूट मिलो ने बार-बार हड़ताल होने पर मजदूरो को कुली लाइनों से बलपूर्वक

निकाल बाहर किया। यहाँ तक कि रेलवे लाइनें भी इसी अस्त्र का उपयोग करती हैं। बम्बई, कानपुर, देहरी-सोन के कारखानों ने भी हड़ताल के समय मजदूरों को काम पर वापस आने अथवा कारखाने के क्वार्टर छोड़ देने की धमकी दी। बम्बई मे चालों के कम्पाउंड मे मजदूरों को सभा करने की आज्ञा नहीं दी जाती और कारखानों द्वारा बनाई गई चालो मे मजदूर कार्य-कर्त्ताओं को आने से रोका जाता है। जहां-जहां मिल मालिकों ने मजदूरों को मकान दिये हैं, वे अपना जन्म-सिद्ध अधिकतर मानते है कि वे जिसे चाहें वहा न आने दे और मजदूरों को अपनी सभा न करने दे। चाय के बागो और कोयले की खानो का तो सारा क्षेत्र ही मालिकों की सम्पत्ति होती है। वे ट्रेड यूनियनों के कार्य-कर्ताओं को वहां आने से रोक देते है। कभी-कभी तो कार्य-कर्त्ताओं पर उनके वहां आने पर मुकदमा तक दायर कर दिया। युद्ध काल में कही-कहीं मालिकों ने मजदूरों के हड़ताल करने पर उनकी राशन तक रोक दी। जहां राशन की और दूकाने नहीं हों, जिनसे मजदूर अपने जीवन-निर्वाह की आवश्यक वस्तुये ले लें, वहां मालिकों का यदि यह अधिकार मान लिया जावे, तब तो मजदूर कभी हड़ताल कर ही नहीं सकते। अतएव कानून बना कर सरकार को यह सब गैर कानूनी बना देना चाहिए।

यह हम पहले ही कह चुके है कि मजदूरो और मालिको को हड़ताल करने और द्वारावरोध करने के लिये नोटिस देना चाहिये। यदि उस बीच मे कोई समझौता हो सके तब तो अच्छा है किन्तु अनिवार्य पंचायत अथवा अनिवार्य रूप से मामले को औद्योगिक अदालत के सामने ले जाने की शर्त मजदूरों के हड़ताल के अधिकार को एक प्रकार से नष्ट कर देना है। यह कभी नही होना चाहिए।

एक बात और भी ध्यान देने की है, बहुधा ऐसा होता है कि हड़ताल करने के उपरान्त मालिक यह घोषित कर देते हैं कि हड़ताल करने वाले मजदूर नौकरी से हटा दिये जावेंगे और जब समझौता हो

जाता है तो वे मजदूरो की नये सिरे से भर्ती करते हैं। इसका फल यह होता है कि उनके अधिकार और सुविधायें, जो कि उनको पुराने होने के कारण मिले थे, छिन जाते हैं। उनकी आर्थिक हानि होती है और उन मजदूरो को जिन्हे मालिक खतरनाक समझते हैं, लेते ही नहीं। एक कानून बना कर मजदूरो के इस अधिकार को सुरक्षित कर देना चाहिए। इसका अर्थ यह है कि हड़ताल करने पर भी मजदूर का अपनी नौकरी पर से अधिकार नही जावेगा और समझौता होने पर वह अपनी नौकरी पर बिना किसी कठिनाई के वापस लौट सकेगा।

बात यह है कि मजदूर आर्थिक दृष्टि से बहुत निर्बल होता है। यदि अनिवार्य रूप से पचायत कराने का कानून बना दिया जाता है तो समय अधिक लगने के कारण मजदूरो की हड़ताल करने की क्षमता नष्ट हो सकती है और मालिकों को अपनी शक्ति और साधन जुटाने का समय मिल जावेगा। सरकार को ऐसा कोई कानून न बनाना चाहिए कि जो मजदूरो की शक्ति को क्षीण करे और मालिको की शक्ति को बढ़ावे। इसी प्रकार मालिको को हड़ताल के समय अधिक मजदूरी देकर मजदूर भर्ती करने का अधिकार नही होना चाहिए। नई भर्ती से मालिक और मजदूरों के सम्बन्ध और भी खराब हो जाते है। नये मजदूरो के विरुद्ध हड़तालियो मे बहुत कटु भावनायें उत्पन्न हो जाती है और कभी-कभी मजदूर अपनी रोजी को जाते देख कर हड़ताल को शान्तिमय रखने में असमर्थ हो जाते हैं।

मजदूरो की ओर से एक बात ध्यान में रखने की है। किसी-किसी धन्धे मे कुछ क्रियाये ऐसी होती है कि यदि उनको भी छोड दिया जावे तो धन्धे को बहुत हानि होने की सम्भावना है। उदाहरण के लिए कोयले की खानो मे यदि पम्प न चलाये जावे तो खानो मे पानी भर जावे। इसी प्रकार लोहे और स्टील के कारखानो में भी ऐसी कुछ क्रियाये हैं। मजदूर अधिकतर हड़ताल के समय भी उन क्रियाओं से आदमियो को नहीं हटाते।

हड़तालों के सम्बन्ध में एक बात और ध्यान मे रखने की है कि पुलिस तथा मजिस्ट्रेटों को किसी भी पक्ष की सहायता न करना चाहिए। अभी तक पुलिस और मजिस्ट्रेट बहुधा मालिकों की सहायता करते रहे है। शान्तिमय हड़तालियों को गिरफ्तार करना, उन पर लाठी चार्ज करना, उनकी सभायें भंग कर देना, हड़ताल के समाचारों को सेंसर करना, मज़दूर नेताओ पर प्रतिबन्ध लगा देना, उन्हे गिरफ्तार कर लेना और जुलूस इत्यादि पर रोक लगा देने की घटनायें हमारे देश मे आये दिन होती रहती है। उत्तरदायी सरकारों को पुलिस तथा मजिस्ट्रेटों की इस नीति को कठोरतापूर्वक रोकना होगा। कहो-कहीं तो पुलिस हड़ताल तोड़ने वाले मजदूरो को भर्ती करने में मालिकों को सहायता पहुंचाती है और उन नये मजदूरों को अपनी देख-भाल में मिलो के अन्दर पहुँचाती है। जैसे ही हड़ताल आरम्भ होती है, मजिस्ट्रेट दफा १४४ लगा देता है और मजदूरों को सभा करने इत्यादि की मनाही कर दी जाती है। आश्चर्य और खेद की बात तो यह है कि मजदूरों के विरुद्ध भारतवर्ष में दफा १४४ का हज़ारों बार प्रयोग किया गया, किन्तु मालिको के विरुद्ध केवल एक बार इस दफा का आज तक प्रयोग किया गया है। आशा है कि भविष्य में जनता के प्रति उत्तरदायी प्रान्तीय सरकारें पुलिस और मजिस्ट्रेटों को मजदूरो के प्रति यह अन्याय करने से रोकेंगी। पुलिस और मजिस्ट्रेटों के इस व्यवहार का ही यह परिणाम है कि बहुत बार मजदूरों मे अशान्ति उत्पन्न हो जाती है, गोली और लाठी चार्ज तक की नौबत आ जाती है। सरकार को कठोरतापूर्वक इस सब को रोकना चाहिए। लेबर कमिश्नर के नेतृत्व में पुलिस और मजिस्ट्रेटों को काम करना चाहिए और उन्हे मजदूर नेताओ का सहयोग शान्ति बनाये रखने में लेना चाहिए। मजदूर नेताओ को मजदूरों से छीन लेने का सीधा परिणाम यह होता है कि मजदूरो का नेतृत्व करने वाला कोई नहीं रहता और वह ऊटपटांग काम करने लगते है।

पिछले वर्षों मे भारत में सर्वहारा वर्ग मे जो अभूतपूर्व जागृति हुई है और वे जो अपने अधिकारो को प्राप्त करने के उद्देश्य से पूँजीपतियो को चुनौती देने लगे हैं, उसका परिणाम यह होता है कि मालिक और मजदूरों मे आये दिन संघर्ष होता है और हड़तालें होती हैं। इधर १९३८ मे बम्बई सरकार ने जो ट्रेड डिस्प्यूट्स एक्ट बनाया, उसमें एक प्रकार से हड़ताल को कानून द्वारा बहुत लम्बे समय तक रोक रखने का विधान किया गया है। अब भारतवर्ष भर में भारत सरकार द्वारा बनाया हुआ कानून, जो कि बम्बई ट्रेड डिस्प्यूट्स एक्ट के आधार पर बनाया गया है, लागू हो जावेगा। इसका दूसरे शब्दो मे अर्थ यह हुआ कि हड़तालो को रोकने का सरकार को अधिकार प्राप्त हो जावेगा। हम यह पहले ही कह चुके हैं कि हड़तालो को लम्बे समय तक रोकने का अर्थ यह होगा कि मजदूरों को हड़ताल करना कठिन हो जावेगा। यह अनिवार्य-पंचायत एक प्रकार से मालिको के पक्ष में और मजदूरों के विरुद्ध है। अतएव जब तक सरकार कानून बना कर मालिकों को औद्योगिक अदालतों के फैसलों को मानने के लिए विवश नहीं करती, तब तक अनिवार्य-पचायत का विधान करना भी न्यायपूर्ण नहीं है। इधर हिन्दू-मुस्लिम दगो के फलस्वरूप जो प्रान्तो मे सुरक्षा सम्बन्धी कानून बनाये गए हैं, उनमे हड़तालो को भी रोकने और गैरकानूनी घोषित करने का विधान है। यह प्रवृत्ति खतरनाक है और मजदूर नेताओं को इस ओर विशेष रूप से ध्यान देना चाहिये।

ग्यारहवां परिच्छेद

मजदूर हितकर कार्य

यह तो हम पहले ही कह चुके हैं कि मजदूरों के स्वास्थ्य तथा उनके हितो की रक्षा के लिए मजदूर कानूनों की आवश्यकता होती है।

मजदूर जितने ही संगठित होते है, देश में प्रगतिशील शक्तियां जितनी अधिक बलवान होती हैं, उतने ही अच्छे मजदूर-कानून देश में बनते हे। परन्तु केवल मजदूर सम्बंधी कानूनो से ही मजदूरों के सारे कष्ट दूर नहीं हो जाते किन्तु दिन प्रति दिन उनके दैनिक कार्य मे जो असुविधाये होती है उन्हे दूर करने की भी आवश्यकता होती है। अस्तु, मजदूर हितकर कार्यो की बहुत आवश्यकता है। मजदूर हितकर कार्य मिल मालिक, मजदूर सभाये तथा अन्य सामाजिक संस्थायें करती है। भारतवर्ष मे मजदूर हितकर कार्य कुछ ही केन्द्रो और कारखानो में होता है। उसे अधिक सुसंगठित तथा वैज्ञानिक बनाने की आवश्यकता है।

काम के घंटे

यद्यपि कानून द्वारा काम के घंटे निर्धारित कर दिये गए हे परन्तु फिर भी कारखानो को इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि भारतवर्ष एक गरम देश है और यहां कारखानो में काम करना अत्यन्त कष्ट-साध्य और स्वास्थ्य के लिए हानिकर हे। बहुत से कारखानो मे गरमियो के दिनो में तापमान १२० डिगरी फैरन हीट तक चढ जाता है और हवा भी बहुत गरम रुकी हुई और धूल तथा गंदगी से भरी रहती है। अस्तु, भारतीय मजदूर को अधिक निपुण बनाने के लिए यह नितान्त आवश्यक है कि काम के घंटो को कम किया जावे और ऐसा प्रबंध किया जावे कि जिससे कारखाने मे गरमी कम रहे और हवा का समुचित प्रबन्ध हो। कारखानों मे गरमी कम करने तथा हवा का समुचित प्रबंध करने से मिल मालिको को भी लाभ है। उससे मजदूरो की कार्य क्षमता बढेगी और उत्पत्ति में वृद्धि होगी। मानवीय दृष्टिकोण से भी यह आवश्यक है क्योकि अत्यधिक गरमी और रुकी हुई गंदी वायु मजदूर के लिए अत्यन्त हानिकर तथा कष्ट दायक होती है।

यही बात काम के घंटो के सम्बन्ध में लागू होती है। भारत में जो

मजदूर के काम के घंटो को कम करने की लगातार मांग की जाती है, उसका एक मात्र कारण यह नहीं है कि मजदूरों को अपने रहन-सहन का दर्जा ऊंचा करने तथा नागरिक के कर्त्तव्यो को पालन करने के लिए अधिक अवकाश चाहिए, वरन् भारत के गरम जलवायु मे मनुष्य के स्वास्थ्य के लिए यह आवश्यक है कि अधिक लम्बे समय तक कार्य न किया जावे। अगस्त १९४६ के पूर्व फैक्टरी कानून के अनुसार वर्ष भर चलने वाले कारखानो मे प्रति सप्ताह ५४ घंटे काम लिया जा सकता था। किन्तु युद्ध के पूर्व अधिकाश कारखानो मे कानून द्वारा निर्धारित घंटो से अधिक काम होता था। १९३८ में यह अनुमान लगाया गया था कि वर्ष भर चलने वाले कारखानें मे २९ प्रतिशत पुरुष और ३१ प्रतिशत मजदूर प्रति सप्ताह ४८ घंटो से अधिक काम नहीं करते। खानो मे तो प्रति सप्ताह खान के अन्दर अधिकांश मजदूर ४४ घंटे ही काम करते थे। मौसमी कारखानो में जहा प्रति सप्ताह ६० घंटे काम किया जा सकता था वहा भी अधिकांश मजदूर ४८ घंटे ही काम करते थे। यही कारण था कि जब अगस्त १९४६ मे काम के घंटे घटा कर वर्ष भर चलने वाले कारखानो मे ४८ कर दिये गये तथा मौसमी कारखानों में ५० कर दिये गये तो मिल मालिको ने इसका कोई विशेष विरोध नहीं किया। युद्ध के समय अवश्य उत्पत्ति को बढाने के लिए काम के घटो को बढा दिया गया था परन्तु वह अस्थायी था और युद्ध के उपरान्त काम के घटे फिर कम कर दिये गये। परन्तु काम के घंटो को बढ़ाने से उत्पत्ति मे कोई वृद्धि नही हुई। अनुभव से हमें यह ज्ञात होता है कि अधिक घंटे काम लेने से उत्पत्ति मे वृद्धि नहीं होती क्योकि मजदूर की कुशलता कम हो जाती है। जब-जब काम के घंटो को कम करने की मांग हुई तब-तब मिल मालिकों ने उत्पत्ति के कम हो जाने का भय प्रदर्शित किया किन्तु अनुभव से ज्ञात हुआ कि उत्पत्ति कम नहीं हुई। इसका कारण यह है कि लम्बे घटे काम लेने से मजदूर की कुशलता कम हो जाती है।

विश्राम

काम के घंटों से भी अधिक महत्वपूर्ण प्रश्न विश्राम का है। मिल मालिकों को चाहिए कि वे इस बात का अध्ययन करें कि कितनी देर तक काम करने के उपरान्त मजदूर को विश्राम की आवश्यकता होगी और कब कम विश्राम देने से मजदूर अधिक से अधिक काम कर सकेगा। विश्राम, रोशनी, हवा का समुचित प्रबन्ध करने तथा विश्राम के घंटों मे आराम से लेटने-बैठने के स्थान, तथा नहाने-धोने की सुविधा का प्रबंध करने से मजदूरों का स्वास्थ्य अच्छा होता है। ऐसा करने से मजदूरों का स्वास्थ्य और कुशलता बढती है तथा उत्पादन बढता है।

विशेषज्ञों का कथन है कि दो ढाई घंटा लगातार काम करने के उपरान्त मजदूर की कार्य शक्ति क्षीण होने लगती है और उसे विश्राम की आवश्यकता होती है। पांच-छः घंटे लगातार काम करना मजदूरों के लिए शक्य नही है। अनुभव से यह ज्ञात हुआ है कि दिन के अन्तिम घंटो में जबकि मजदूर थक जाता है तभी दुर्घटनाये अधिक होती है और मजदूर को चोट आ जाती है। अतएव यह नितान्त आवश्यक है कि मजदूर को उचित विश्राम दिया जावे।

भारतवर्ष मे मजदूर निर्बल है फिर ऊपर से यहां का जलवायु ऐसा है कि मजदूर शीघ्र ही थक जाता है और उस थकावट के कारण उत्पादन भी कम होता है, दुर्घटनायें भी अधिक होती है। अतएव भारतवर्ष मे जहां तक सम्भव हो ओवर टाइम काम नही लेना चाहिए। यदि अधिक उत्पादन की आवश्यकता हो तो शिफ्ट चलाना चाहिए।

रोशनी और हवा का प्रबंध

बहुत से कारखानों की इमारते ऐसी होती हैं कि जिनमे यथेष्ट रोशनी और हवा की गुंजाइश नहीं होती। मजदूर को ऐसे कारखानो मे काम करने से बहुत कष्ट होता है। यद्यपि इन्सपेक्टरों को यह अधिकार

है कि यदि वे देखें कि कारखानो मे यथेष्ट रोशनी और हवा नहीं आती तो वह कारखाने के मालिकों को आवश्यक सुधार करने की आज्ञा दें परन्तु वे ऐसा नहीं कर सकते क्योकि बहुत से कारखानो की इमारतें ऐसी बनी है कि उनमें बहुत अधिक परिवर्तन करने पर ही रोशनी और हवा अधिक मिल सकती है, परन्तु यह सम्भव नहीं है क्योकि ऐसा करने से व्यय बहुत अधिक होगा। होना तो यह चाहिए कि प्रत्येक मिल में जहा मजदूर काम करते हैं बिजली के पंखे लगा दिये जावे। इससे गरमी के दिनो में मजदूरो को पसीना नहीं आवेगा और वे अधिक उत्पादन कर सकेंगे। थोडे से व्यय से मालिक को अधिक लाभ होगा किन्तु भारतीय व्यवसायी की दृष्टि बहुत ही संकुचित है वह उन कार्यों को भी नहीं करता कि जिनसे मजदूरो का कष्ट कम होने के साथ उसका उत्पादन भी बढता है। हवा और रोशनी के सम्बन्ध में आवश्यक सुधार करने के लिए यह नितान्त आवश्यक है कि यह नियम बना दिया जावे कि जब कोई नया कारखाना स्थापित हो तो उसकी इमारत के नक्शे को सरकार स्वीकार करे तभी वह कारखाना चल सकेगा। ऐसा करने से भविष्य में इमारतो मे सुधार किया जा सकता है। कपास के पेंचो के सम्बन्ध मे एक कानून बना दिया है। उक्त कानून के अन्तर्गत नये पेंच तभी खोले जा सकते है कि जब वे अपनी इमारत के नक्शे को सरकार से स्वीकार करवा ले। मदरास प्रान्तीय सरकार ने एक नियम बना दिया है कि जो भी नया कारखाना स्थापित हो उसकी इमारत के नक्शे को पहिले फैक्टरियो का चीफ इन्सपेक्टर निरीक्षण करेगा और उसकी स्वीकृति मिल जाने पर ही कारखाना चल सकेगा। आवश्यकता इस बात की है कि सभी प्रान्तो में इस प्रकार का नियम बना दिया जावे।

फैक्टरी का तापक्रम

भारतवर्ष में सूती कपडे के कारखानो तथा बीडी के कारखानो में

कुछ विभागों मे गरमी इतनी अधिक होती है कि वह मजदूर के लिए असहनीय हो उठती है। यही कारण है कि मजदूर दिन मे कई घन्टे इधर-उधर घूमते और समय नष्ट करते रहते है। शाही लेबर कमीशन के सामने गवाही देते हुए कुछ बुनकरों ने कहा था कि जिन कारखानों मे पंखे होते हैं, हम बीडी या तम्बाकू पीने बाहर जाते है और शीघ्र लौट आते हैं। किन्तु जिन कारखानों मे पंखे नहीं है हमे बहुत देर तक बाहर रहना पडता है। कारखानो के अन्दर जहां पखे नही होते वायु इतनी गरम हो उठती है कि मजदूर बहुधा बेहोश हो जाते है और उन्हे अस्पताल में ले जाना पडता है। गरमियों के दिनों मे तो स्थिति और भी अधिक भयंकर हो उठती है। मजदूर तथा धंधे दोनों के ही हित के लिए यह आवश्यक है कि फैक्टरी ऐक्ट में इस बात का समावेश कर दिया जावे कि कारखानों का तापक्रम उचित हो। इसके लिए फैक्टरी एक्ट मे संशोधन होना चाहिए। फैक्टरी इन्सपेक्टर को यह निर्धारित कर देना चाहिए कि किन उपायों से फैक्टरी का तापक्रम कम किया जा सकता है और फिर मिल मालिकों से उसके अनुसार कार्य करवाना चाहिए। अहमदाबाद की कतिपय मिलों मे एअर कंडिशनिग प्लाट लगाये गए हैं और हवा का उचित प्रबन्ध किया गया है। जिन विभागों में भाप देने की आवश्यकता होती है वहां भी यथेष्ट सुधार किया गया है। मजदूरो को कार्य करने में सुविधा हो इसका उन कारखानों में विशेप ध्यान रक्खा गया है। ऐसा करने से कारखाने के अन्दर का तापक्रम बाहर के तापक्रम से बहुत कम रहता है।

भारतवर्ष जैसे गरम देश में जहां कि गरमियों मे साधारणतः कार्य करना कठिन होता है, कारखानो के तापक्रम को उचित रखना तथा यथेष्ट हवा का प्रबन्ध करना आवश्यक है। इससे मजदूरों को कष्ट कम होगा और उत्पादन भी अधिक हो सकेगा। इंजिनियरिंग तथा रेलवे वर्कशापों मे कुछ विभागों मे गरमी हद दर्जे को पहुँच जाती है और बहुत से मजदूर इस भीषण

गरमी के कारण मर जाते हैं। अतएव फैक्टरी कानून में इस आशय का सशोधन अवश्य कर देना चाहिए कि इन्स्पेक्टर प्रत्येक कारखाने मे उचित तापक्रम का प्रबन्ध करे। लोहे तथा इंजिनियरिंग कारखानों में तो इसका विशेष रूप से ध्यान रखने की आवश्यकता है। गोलमुरी के टिनप्लेट कारखानो में मालिकों ने कुछ सुधार किया है। वहां जो मजदूर अग्नि के सामने काम करते है उन पर ठंडी हवा छोडी जाती है और पानी से फर्श ठंडा रक्खा जाता है। आवश्यकता इस बात की है कि सभी कारखानो में गरमियों मे बिजली के पंखे लगाये जावे साथ ही कपास, जूट, चावल, ऊन, चाय, कागज, सीमेंट तथा लाख के कारखानों मे धूल तथा कण भरी हवा रहती है उसको सोखने के लिए यन्त्र लगाये जावे। क्योंकि जब मजदूर इस दूपित हवा मे सास लेता है तो उसके स्वास्थ्य पर बहुत बुरा असर पडता है।

अन्य सुविधाये

कुछ कारखानों मे मजदूरों को चकाचौंध कर देने वाली रोशनी में काम करना पडता है। सरकार को यह नियम बना देना चाहिये कि ऐसी दशा मे मजदूरों को धूप के चश्मे दिये जावें। जहां मजदूरो को आग के पास काम करना पडे वहां उन्हे दस्ताने तथा जूते दिये जावें।

यदि कारखानो में हवा रोशनी तथा अन्य सुविधाओं का प्रबन्ध हो तो उत्पादन अवश्य ही बढ जावेगा। अहमदाबाद मे केवल हवा का प्रबन्ध करने से उत्पादन मे ६ प्रतिशत की वृद्धि हो गई। भारतवर्ष जैसे गरम देश मे शिफ्टों का समय बदल देने से भी मजदूरों के कष्ट को कुछ कम किया जा सकता है। उदाहरण के लिये गरमियो मे प्रात काल ५ बजे से १०-३० तक और २-३० सायकाल से ५-३० काम के घंटे रखने से मजदूरों का कष्ट कम हो सकता है।

भारतीय सूती वस्त्र की मिलों मे रात्रि में काम करने का चलन

है। इससे मजदूर के शरीर तथा उसके पारिवारिक जीवन पर बहुत बुरा असर पडता है। भारतीय औद्योगिक केन्द्रों मे जहां पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों की संख्या बहुत कम है, रात्रि मे कार्य करने का परिणाम यह होता है कि मजदूरों मे अनैतिकता तथा व्यभिचार बढता है, आवश्यकता से अधिक मजदूर केन्द्रों मे आते हैं और मजदूरों को जो भी थोड़ी सी मनोरंजन तथा शिक्षा की सुविधाये उपलब्ध है, उनसे भी वह वचित हो जाते है। जापान मे प्रात.काल ५ से २ बजे सायंकाल तक तथा २ बजे सायंकाल से ११ बजे रात्रि तक दो शिफ्टो का चलन है और इन नौ घटों के शिफ्ट मे आध-घंटे का विश्राम मिलता है। भारत में भी यदि इस प्रकार के दो शिफ्ट चलाये जावे और बीच मे एक घंटे का विश्राम दिया जावे तो मजदूरो के लिए सुविधाजनक होगा।

पुरुष, स्त्री और बालक मजदूरों की स्वास्थ्य-रक्षा के लिए यह आवश्यक है कि वे कितना बोझा उठावें, यह भी कानून द्वारा निर्धारित कर दिया जावे। पश्चिमीय देशों में इस प्रकार के कानून हैं, जिनके द्वारा अधिक से अधिक बोझा जो कि मजदूर ले जा सकता है, निर्धारित कर दिया जाता है। फ्रांस मे अधिक से अधिक बोझा जो कि एक मजदूर स्त्री ले जा सकती है, ५५ पौंड है, ब्रिटेन में ६० पौंड, इटैली में ४४ पौंड तथा सोवियट रूस में पुरुष तथा स्त्री मजदूरों के लिए ४० पौंड निर्धारित किया गया है। भारतवर्ष में पुरुष तथा मजदूर स्त्रियो के लिए ३५ पौड अधिक से अधिक बोझा निर्धारित कर देना चाहिए और इस दृष्टि से फैक्टरी कानून तथा खानों के कानून में संशोधन कर देना चाहिए। इससे पूर्व कि इस प्रकार का कोई कानून बनाया जावे, इस बात की आवश्यकता होगी कि कुछ विशेषज्ञो को इस बात का अध्ययन करने के लिए नियुक्त किया जावे कि वे यह पता लगावे कि पुरुष, स्त्री तथा बालक मजदूर अधिक से अधिक कितना बोझा उठा सकते हैं, जिससे कि उनके स्वास्थ्य को हानि न पहुँचे।

विश्राम-गृह

भारत के अधिकांश कारखानों में विश्राम के लिए कोई विश्राम-गृह नहीं है। छुट्टी के समय मजदूर खाना खाने और विश्राम करने के लिए बाहर निकलते है। यदि कारखाने के कम्पाउन्ड में पेडों की छाया हुई तब तो अच्छा है, नहीं तो उन्हें बरसात और गरमियो में बहुत कष्ट होता है। अतएव इस बात की बहुत बडी आवश्यकता है कि प्रत्येक कारखाने मे विश्राम-गृह तथा जलपान गृह बनाये जावें, जहां मजदूर छुट्टी के समय तथा भोजन करने के समय विश्राम कर सकें। जिन कारखानो में ५० से अधिक स्त्रिया हो, वहां स्त्रियो के लिए विश्राम-गृह की अलग व्यवस्था हो।

फैक्टरी एक्ट में प्रान्तीय सरकारो को इस बात का अधिकार दिया गया है कि यदि वे चाहें तो नियम बना कर उन कारखानो को शिशु-गृह स्थापित करने पर विवश करें, जहा कि ५० से अधिक मजदूर स्त्रियां काम करती हो। सभी प्रान्तीय सरकारो को शिशु-गृहों के सम्बन्ध मे नियम बना देना चाहिए। शिशु-गृहो मे केवल शिशुओ के रखने की ही व्यवस्था न होना चाहिए, वहां नर्स रखनी चाहिए, जो शिशुओ की देख भाल करे, दूध तथा अन्य भोजन का प्रबन्ध होना चाहिए, शिशुओ के खेलने तथा चिकित्सा का भी प्रबन्ध करना चाहिए, इसके अतिरिक्त शिशुओं के आराम का इन गृहो मे समुचित प्रबन्ध होना आवश्यक है।

छोटे कारबारो को फैक्टरी कानून के अन्तर्गत लाने की आवश्यकता।

फैक्टरी कानून के अनुसार जहां कारखाना यांत्रिक शक्ति से संचालित होता हो और कम से कम २० मजदूर काम करते हो, फैक्टरी स्वीकार की जाती है। किन्तु प्रान्तीय सरकारो को यह अधिकार दे दिया गया है कि वे उस स्थान को भी फैक्टरी स्वीकार कर ले, जहां १० मजदूर काम करते हों। बहुत से पश्चिमीय देशो में उन स्थानो को भी फैक्टरी माना जाता है, जहां १० मजदूर कार्य करते हो फिर

चाहे वहा यान्त्रिक शक्ति का उपयोग होता हो या न होता हो। इस बात की आवश्यकता है कि जिन स्थानो में यांत्रिक शक्ति का उपयोग होता हो, यदि वहां १० मजदूर भी काम करते हो तो उसे फैक्टरी मान लिया जावे और वहां फैक्टरी एक्ट लागू कर दिया जावे । जिन स्थानों पर यांत्रिक शक्ति का उपयोग नहीं किया जाता है, परन्तु दस व्यक्तियों से अधिक कार्य करते हैं, वहां भी काम के घंटो को निर्धारित कर देना और सफाई, हवा तथा रोशनी के सम्बन्ध में नियम बना देना आवश्यक है ।

धान कूटने, दाल बनाने, आटे की चक्कियों, तेल पेरने, लकडी काटने (आराकशी), खडसारी शकर तैयार करने, बीडी बनाने, बरफ के कारखानों, चमडा कमाने, अबरख तथा लाख के छोटे-छोटे कारखानो में मजदूरों को प्रति दिन १२ घंटे तक काम करना पडता है। इन स्थानो में बच्चो और स्त्रियों को अधिकतर रक्खा जाता है और वहां हवा और रोशनी का उचित प्रबन्ध नहीं होता । बीडी, अबरख और लाख के कारखानों मे तो बहुत बडी संख्या मे मजदूर काम करते हैं । उनकी दशा वास्तव मे दयनीय है । उन्हे बहुत कम वेतन दिया जाता है और उन्हें १२ घंटे गंदे स्थानो में काम करना पडता है ।

किन्तु केवल कानून बना देने से ही कारखानो में सुधार नहीं हो जावेगा । आवश्यकता इस बात की है कि फैक्टरी इन्सपेक्टरों को यह अधिकार दिया जावे कि वह प्रत्येक कारखानो का निरीक्षण करने के उपरान्त जो भी मजदूरों की सुख सुविधा के लिए आवश्यक समझें, वे सुधार करने को मालिक को आज्ञा दे सकें । पश्चिमीय देशों में इन 'आज्ञाओं' से कारखानो की दशा में यथेष्ट सुधार हुआ है । अतएव प्रान्तीय सरकारों को नियम बना कर इन्सपेक्टरों को यह अधिकार दे देना चाहिए । इन्सपेक्टरों को नीचे लिखी बातों का विशेष ध्यान रखना चाहिए । प्रत्येक कारखाने में पीने के लिये यथेष्ट ठंडा पानी रहना चाहिये, भोजन करने तथा विश्राम करने के लिए विश्रामगृह होना

चाहिए, नहाने और कपड़ा धोने की सुविधा होनी चाहिए, शिशु-गृह होना चाहिए और फर्स्ट एड का प्रबन्ध होना चाहिए।

खानो सम्बन्धी कानून मे संशोधन की आवश्यकता।

खानो के अन्दर काम करने वालो के स्वास्थ्य और सुख के लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि खानो के अन्दर हवा, रोशनी, पीने के लिए ठंडा पानी तथा शौच गृह इत्यादि का पूरा प्रबन्ध होना चाहिए। यद्यपि बडी खानों मे बिजली, हवा और पानी का प्रबन्ध किया गया है, परन्तु भारत की अधिकाश छोटी खानो में हवा, रोशनी इत्यादि का कोई समुचित प्रबन्ध नही है। जब मजदूर खान के अन्दर काम करता है तो यदि आधुनिक ढंग के यन्त्रो द्वारा हवा पानी और रोशनी का खान के अन्दर समुचित प्रबन्ध न कर दिया जावे तो मजदूर को बेहद कष्ट होता है। गरमी के कारण मजदूर के स्वास्थ्य पर बहुत बुरा प्रभाव तो पडता ही है। खान के अन्दर शौच-गृहो की व्यवस्था न होने के कारण मजदूर जो कि बहुधा नगे पैर रहते हैं, उन्हे हुकवर्म रोग हो जाता है। यही कारण है कि झरिया के ६० प्रतिशत मजदूरो को हुकवर्म रोग है। छोटी खानों और खदानो का कोई ठीक प्रकार से निरीक्षण भी नही करता और उनमे काम करने वाले मजदूरो को अकथनीय कष्ट सहन करना पड़ता है। आवश्यकता इस बात की है कि सरकार खानों के कानून मे उचित संशोधन करके खानो मे ऊपर लिखी सुविधाओं को उपलब्ध करावे।

साधारण शिक्षा और शिल्प-शिक्षा

जब भारतीय मजदूर को स्वास्थ्य रक्षा के लिए उचित सुविधाये उपलब्ध कर दी जावेंगी और कारखानों का जीवन आज से अधिक स्वास्थ्यप्रद और आकर्षक होगा तभी मजदूर उन हितकर कार्यों से लाभ उठा सकेगा जो कि उसके लिए किये जावेंगे और तभी उसकी कार्यक्षमता बढ़ेगी। किन्तु केवल उसके स्वास्थ्य की रक्षा करने ही से वह अत्यन्त

कुशल मजदूर नहीं बन जावेगा। जब तक उसको साधारण तथा शिल्प-शिक्षा नहीं दी जावेगी, तब तक वह कुशल मजदूर नही बन सकता। यदि भविष्य मे हमारा देश औद्योगिक उन्नति के स्वप्न देखता है तो उसे मजदूरों की शिक्षा का प्रबन्ध करना होगा। जापान पिछले दिनों मे जो इतनी तेजी से औद्योगिक उन्नति कर सका उसका एक मुख्य कारण यह है कि वहा के मजदूर शिक्षित थे और उन्हें शिल्प-शिक्षा मिली थी। दुर्भाग्यवश भारतीय मजदूर नितान्त अशिक्षित है और उसे शिल्प सम्बन्धी शिक्षा भी नही मिलती, फिर भी उसने यन्त्रों पर काम करने की अपूर्व क्षमता प्रदर्शित की है।

अभी तक भारतीय मज़दूर को साधारण शिक्षा तथा शिल्प संबधी शिक्षा देने की ओर किसी ने भी ध्यान नहीं दिया है। बम्बई और अहमदाबाद की कतिपय मिलों ने रात्रि पाठशालाये खोल कर अपने मजदूरों को शिक्षा देने का प्रबंध किया है। नागपुर की एम्प्रेस मिल मदरास की बकिंगहम मिल तथा कलकत्ते की कुछ जूट मिलों ने रात्रि पाठशालायें स्थापित की हैं। किन्तु जो कुछ भी थोडी सी मिलों ने पाठशालायें स्थापित की है वे बालकों के लिए है प्रौढों के लिए शिक्षा का प्रबंध बिलकुल नहीं किया गया। आवश्यकता इस बात की है कि प्रत्येक मिल अपने मजदूरो के लिए रात्रि स्कूल स्थापित करे। केवल पाठशालायें ही स्थापित करने से समस्या हल नहीं हो जावेगी वरन आवश्यकता इस बात की है कि मिल मालिक मज़दूरों के लिए वाचनालय तथा पुस्तकालय और रेडियो की व्यवस्था करें जिससे मजदूरों का ज्ञान और उनकी जानकारी बढे। यदि मिल मालिक शिक्षा तथा मनोरंजन पर थोडा सा व्यय करेगे तो उनके मजदूरों की कार्यक्षमता बढ़ेगी और उनको अधिक लाभ होगा।

जहां तक शिल्प शिक्षा का प्रश्न है उसके लिए कारखानों के समूहों को मिल कर औद्योगिक केन्द्रों में ऐसी संस्थायें स्थापित करनी चाहिये कि जहाँ शिल्प शिक्षा दी जा सके। प्रत्येक कारखाना अपने कुछ मज़दूरों को

ज़िन्हें वह योग्य समझे छांट कर इन शिल्प शिक्षक संस्थाओ मे शिक्षा प्राप्त करने के लिए भेजे। इन संस्थाओं के चलाने में सरकार भी सहायता दे। भारतीय मजदूर को कुशल बनाने के लिए इस बात की बडी आवश्यकता है कि उसको शिक्षित और निपुण बनाया जावे अन्यथा भविष्य मे भारत की औद्योगिक उन्नति मे बाधा उपस्थित होगी।

यदि देश में अनिवार्य प्रारम्भिक शिक्षा और प्रौढ शिक्षा का आन्दोलन सफल हो जावे तो मिलो का कार्य और भी सरल हो जावेगा। इसमे कोई संदेह नही कि बिना शिक्षा के भारतीय मजदूर कुशल नहीं बन सकता।

चिकित्सा की सुविधाओं का अभाव

यद्यपि बडे-बडे कारखाने अपने मजदूरों की चिकित्सा के लिए वैतनिक डाक्टर रखते है और कारखाने का अस्पताल भी होता है जहां मजदूरो की चिकित्सा का प्रबंध होता है किन्तु अधिकाश कारखानो मे मजदूरो की चिकित्सा का कोई समुचित प्रबंध नहीं होता। निर्धन मजदूर अपनी तथा अपने परिवार वालो की चिकित्सा के लिए यथेष्ट धन व्यय नही कर सकता। परिणाम यह होता है कि उसकी कार्यक्षमता घटती है। आवश्यकता इस बात की है कि प्रान्तीय सरकारे एक नियम बनादे कि जिन कारखानों में ५०० से अधिक मजदूर कार्य करते हो उन्हें एक योग्य डाक्टर और अस्पताल रखना अनिवार्य हो। जहां छोटे छोटे कारखाने हो उनको मिला कर अस्पताल चलाने पर विवश किया जावे ।

सामाजिक बीमा

जिन देशों में औद्योगिक उन्नति हुई है और कारखानों मे काम करने वालों की सख्या बढी है वहा मजदूरो की आर्थिक स्थिति को दृढ करने के लिए सामाजिक बीमे का प्रबंध किया गया है। औद्योगिक प्रधान देशो में मजदूर के चोट लगने पर अथवा मृत्यु होने पर क्षतिपूर्ति कानून

के अन्तर्गत मजदूर को अथवा मजदूर के आश्रितों को क्षतिपूर्ति की रकम दी जाती है। इसके अतिरिक्त बीमार पड़ने पर, बेकार होने पर, तथा वृद्ध हो जाने पर जब कि मजदूर काम करने में असमर्थ हो जाता है तब उसको अलाउंस दिये जाने का प्रबंध किया गया है। बात यह है कि जब मजदूर कारखाने में कार्य करता है तब वह इतनी बचत नहीं कर पाता कि बेकारी के समय, बीमारी के समय तथा वृद्धावस्था के समय अपना निर्वाह कर सके। इसका परिणाम यह होता था कि जब मजदूर बीमार पड़ता था, उसकी आय बंद हो जाती थी और उस दशा में वह इलाज तथा पथ्य के लिए व्यय नहीं कर पाता था। अतएव आमदनी न होने के कारण उसकी कार्यक्षमता नष्ट होती थी। इससे केवल मजदूर को ही कष्ट नहीं होता था परन्तु क्रमशः उसकी कार्यक्षमता नष्ट होने से उत्पादन पर भी बुरा प्रभाव पड़ता था।

यही दशा मजदूर के बेकार हो जाने पर होती है। जब मजदूर बेकार हो जाता है तो उसकी आमदनी बंद हो जाती है अतएव उसके रहन-सहन का दर्जा गिर जाता है। उसका परिणाम यह होता है कि उसकी कार्यक्षमता नष्ट होती है। यदि वह लम्बे समय तक बेकार रहे तो फिर उसको काम पाना कठिन हो जाता है, क्योंकि उचित भोजन और रहन-सहन न पाने के कारण उसका स्वास्थ्य तथा कार्यक्षमता गिर जाती है और उसको नौकरी मिलना कठिन हो जाता है। यदि उसको कोई काम मिलता भी है तो उसको पहले से कम मजदूरी मिलती है क्योंकि उसकी कार्यक्षमता गिर जाती है।

मजदूर कार्य नहीं कर सकता और यदि उसने कुछ जमा नहीं कर पाया है तो उसके निर्वाह के लिए उसे एक पेंशन मिलनी चाहिए, नहीं तो मजदूर की दशा दयनीय हो जाती है। अन्य देशों में वृद्धावस्था में पेंशन मिलने की व्यवस्था की गई है।

इसी प्रकार मज़दूर स्त्रियों के बच्चा पैदा होने के कुछ समय पूर्व और कुछ समय के बाद तक आराम मिलना चाहिए, साथ ही उन्हें उस समय का वेतन भी मिलना चाहिए। क्योंकि उस समय का यदि उन्हें वेतन नहीं दिया गया तो वे छुट्टी न लेंगी और उससे उनके तथा भावी शिशु के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ेगा।

भारतवर्ष में अभी तक केवल मज़दूर क्षतिपूर्ति कानून (Workmen's Compensation Act) के अन्तर्गत मजदूर के चोट लगने तथा मृत्यु हो जाने पर उसे हर्जाना देने की व्यवस्था की गई है और मैटरनिटी बैनिफिट एक्ट के अन्तर्गत गर्भवती स्त्रियों को सवेतन एक मास पूर्व और एक मास उपरान्त की छुट्टी दी जाती है।

अभी हाल में मज़दूर स्वास्थ्य बीमा सम्बन्धी जो कानून बनाया गया है, उसके अन्तर्गत मजदूर के बीमार होने पर उसकी चिकित्सा की व्यवस्था की जावेगी और उसको बीमारी के समय कुछ अलाउन्स दिया जावेगा। उसके लिए मिल-मालिक और मजदूर प्रतिमास कुछ देंगे और राज्य भी कुछ आर्थिक सहायता देगा।

अभी तक भारतवर्ष में बेकारी तथा वृद्धावस्था के लिए कुछ प्रबन्ध नहीं किया गया है।

बेकारी

यह तो हम पहले ही कह चुके हैं कि बेकारी मजदूर के लिए एक भयंकर अभिशाप है, जिससे मजदूर आये दिन ग्रस्त होता है। आज के पूँजीवादी युग में उत्पादन का कार्य मांग पर निर्भर रहता है और आर्थिक मन्दी के कारण कभी-कभी धन्धों की दशा गिर जाती है, उस

दशा में मिल मालिक काम के घन्टे कम करके, मजदूरों की कटौती करके, सप्ताह में कम दिन काम करके अथवा कुछ समय के लिए कारखानों को बन्द करके उत्पादन को कम करने का प्रयत्न करते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि मजदूरों में बेकारी फैल जाती है। जिन देशों में धन्धों मे लगे हुए मजदूरों की संख्या बहुत अधिक होती है वहां यदि बेकारी फैल जाती है तो उनकी क्रय-शक्ति भी कम हो जाती है और उसका परिणाम यह होता है कि आर्थिक मन्दी और भी गहरी हो जाती है और बेकारी भीषण रूप धारण कर लेती है। बेकारी में मजदूर विवश हो जाता है, उसका कोई वस नहीं रहता। वह काम करना चाहता है, परन्तु उसको काम नहो मिलता। इसका परिणाम यह होता है कि उसकी कार्यक्षमता गिर जाती है और उसको दयनीय जीवन व्यतीत करना पडता है।

भारतवर्ष में बेकारी की समस्या को हल करने के लिए शाही मजदूर कमीशन ने यह उपाय बतलाया था कि प्रत्येक औद्योगिक केन्द्र में म्युनिस्पैलिटी, कारपोरेशन तथा प्रान्तीय सरकार मिल कर कुछ निर्माण कार्य की योजनायें बनावें। वे योजनायें ऐसी हों कि जिनकी तुरन्त तो आवश्यकता न हो, किन्तु जो नगर के सुधार के लिए आवश्यक हों। जब औद्योगिक मन्दी के कारण धन्धे में बेकारी फैल जावे और उन्हें काम न मिले तो उस निर्माण कार्य को प्रारम्भ कराया जावे और बेकार मजदूरों को काम दिया जावे। इसमें कोई सन्देह नहीं कि इस योजना से कुछ मजदूरों को काम मिल सकता है, किन्तु बेकारी की समस्या इससे हल नहीं हो सकती। क्योंकि अब धन्धे छोटे-छोटे शहरों में भी स्थापित होने लगे हैं और बड़े केन्द्रों में मजदूरों की संख्या बेहद बढ़ गई है। अतएव यह आशा करना कि म्युनिस्पैलटियों अथवा कारपोरेशन के निर्माण कार्य की योजनाओं से बेकारी की समस्या को हल किया जा सकता है, केवल दुराशामात्र है।

इसके लिए बेकारी का बीमा कराना आवश्यक होगा। संसार के

प्रमुख औद्योगिक राष्ट्रों में अनिवार्य बेकारी बीमा प्रचलित कर दिया गया है, जिसके अन्तर्गत प्रत्येक मजदूर को बेकारी का बीमा कराना अनिवार्य है। परन्तु कुछ देशों में राज्य मिल-मालिकों को कुछ आर्थिक सहायता देकर उन्हें अपने मजदूरों की बेकारी का बीमा कराने के लिए प्रोत्साहित करता है। भारत में अनिवार्य बेकारी बीमा ही हमारा लक्ष्य होना चाहिए। परन्तु यदि आरम्भ में यह कठिन हो तो राज्य मिल-मालिकों को आर्थिक सहायता देकर बेकारी-फंड स्थापित करने के लिए प्रोत्साहित करे। जिसमें मिल-मालिक और मजदूर भी धन दें। महायुद्ध की समाप्ति हो जाने के कुछ समय उपरान्त देश में बेकारी होने का भय है, ऐसी दशा में अनिवार्य बेकारी बीमे के लिए मजदूरों को प्रयत्न करना चाहिए। यदि ऐसा नहीं हुआ तो बेकारी के कारण मजदूरों की दशा दयनीय हो जावेगी।

लेबर एक्सचेंज

यह तो हम पहले ही कह चुके हैं कि भारतवर्ष में मजदूरों की भर्ती का काम सरदार या जाबर के हाथ में रहने के कारण घूस का बाजार गरम है और मजदूरों के स्थायी रूप से एक ही मिल में काम न करने के कारण प्रत्येक मिल में कुछ न कुछ जगह खाली रहती है। अस्तु, जाबर इस स्थिति का खूब ही लाभ उठाता है और प्रत्येक व्यक्ति से नौकरी देने के एवज में कुछ रुपये बना लेता है। इसका परिणाम यह होता है कि जो भी नया ग्रामीण औद्योगिक केन्द्र में नौकरी की खोज में आता है, उसको कुछ ले-देकर नौकरी मिलने की सम्भावना रहती है। इसका परिणाम यह होता है कि औद्योगिक केन्द्रों में आवश्यकता से अधिक मजदूर आ जाते हैं; क्योंकि वे घूस देकर नौकरी खरीद सकते हैं। इस समय भारतीय औद्योगिक केन्द्रों में मजदूरों की यह दशा है कि प्रत्येक मजदूर महीने में २० या २५ दिन का काम पा जाता है। इस कारण औद्योगिक केन्द्रों में आवश्यकता

से अधिक मजदूर आ जाते है।

यह तो हम पहले ही कह आये है कि प्रत्येक कारखाने मे लेबर आफिसर नियुक्त होना चाहिये। किन्तु इतने से ही सारी समस्या हल नहीं हो जावेगी। बेकारी के समय मजदूरो के लिए काम ढूँढने के लिए लेबर ऐक्सचेंज भी स्थापित होने चाहिए। जापान तथा अन्य देशो मे लेबर ऐक्सचेंजो के द्वारा ही मिलें अपने मजदूरो की भर्ती करती है। प्रत्येक बेकार मजदूर समीपवर्ती लेबर ऐक्सचेंज मे अपना नाम दर्ज करवा देता है और लेबर ऐक्सचेंज उसके लिए नौकरी ढूँढती है। यदि नौकरी मिल जाती है तो लेबर ऐक्सचेंज उसे एक पत्र देकर कारखाने के मैनेजर के पास भेज देता है। कारखाने अपनी आवश्यकताओं को लेबर ऐक्सचेंजो के पास लिख भेजते है और लेबर ऐक्सचेंज अपने यहां दर्ज मजदूरो में से कुछ मजदूरो को उनके पास भेज देते है। मिल के कर्मचारी अपनी आवश्यकता के अनुसार मजदूरो को छांट लेते है।

भारतवर्ष में लेबर ऐक्सचेंजो की अभी महायुद्ध की समाप्ति पर स्थापना हुई। देश मे इस समय ४० ऐक्सचेंजो की स्थापना हुई है, किन्तु यह ऐक्सचेंजें केवल सेनाओं से हटाये हुए लोगों को ही नौकरी दिलाने का काम करता है। आवश्यकता इस बात की है कि लेबर ऐक्सचेंज बहुत बड़ी संख्या में स्थापित की जायें और बेकार मजदूरों को नौकरी दिलाने में सहायता पहुंचाई जावे।

सामाजिक बीमा

तो मजदूर की स्थिति दयनीय हो जावेगी।

प्रश्न यह है कि बीमारी का बीमा, बेकारी का बीमा और वृद्धावस्था में पेन्शन का प्रबन्ध करने के लिए जो धनराशि की आवश्यकता होगी, उसका प्रबन्ध किस प्रकार होगा। इस प्रश्न का हल जिस प्रकार अन्य देशो ने किया है, उसी प्रकार इसका हल हमें करना होगा। अर्थात् मिल मालिक, मजदूर तथा राज्य तीनो को ही इसकी आर्थिक जिम्मेदारी उठानी होगी। लेखक का मत है कि जो भी सामाजिक बीमे की योजनाये बने उनमे आर्थिक उत्तरदायित्व इस प्रकार बांटा जावे।

मालिक	६ आना
मजदूर	६ आना
सरकार	४ आना

इस प्रकार मजदूर और मालिक बीमे के व्यय को बराबर-बराबर सहन करेंगे। जब तक हम भारतीय मजदूर के लिए सामाजिक बीमे की व्यवस्था नहीं करते, तब तक उसकी स्थिति मे सुधार नही हो सकता। अस्तु, मजदूर-संघो और देश के नेताओ का ध्यान इस आवश्यक प्रश्न की ओर जाना चाहिए।

मजदूरो मे मद्यपान

भारतीय मजदूरों मे मद्यपान बहुत अधिक प्रचलित है। देशी शराब और ताडी का चलन इतनी अधिकता से मज़दूरों में प्रचलित है, जिसका अनुमान करना भी कठिन है। बात यह है कि थके हुए मजदूर के लिए कुछ स्फूर्ति चाहिए। किन्तु उसके लिए स्फूर्ति देने का कोई साधन नही होता। वह सीधा ताडी की दूकान या शराब की भट्टी पर जाकर नशा करता है और अपने थके हुए शरीर मे नवीन स्फूर्ति भरता है, चाहे फिर वह स्फूर्ति हानिकर ही क्यो न हो। थके हुए शरीर और उदास मन मे शराब या ताड़ी पीकर चैतन्य उदय होता है। भारतीय मजदूर में मद्य-